एम.ए. उत्तरार्द्ध

भूगोल, द्वितीय प्रश्नपत्र

भारत का क्षेत्रीय भूगोल

(REGIONAL GEOGRAPHY OF INDIA)

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY – BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Kusum Mathur
   Professor
   Govt. S.N.P.G. Girls (Autonomous) College, Bhopal (M.P.)

2. Dr. Rajeshwari Dubey
   Professor
   Govt. M.L.B. (Autonomous) College, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Neerja Bharadwaj
   Professor
   Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Anjali Singh
   Director, Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

4. Dr. Kusum Mathur
   Professor
   Govt. S.N.P.G. Girls (Autonomous) College, Bhopal (M.P.)

5. Dr. Rajeshwari Dubey
   Professor
   Govt. M.L.B. (Autonomous) College, Bhopal (M.P.)

6. Dr. Neerja Bharadwaj
   Professor
   Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)

COURSE WRITER

Dr. Kavita Arora, Associate Professor, Department of Geography, Shaheed Bhagat Singh College, University of Delhi, Delhi

Units (1-5)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

भारत का क्षेत्रीय भूगोल

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा भू–राजनीतिक जलवायु जलवायु संबंधी आधार कृषि जलवायु आधार भौतिक आधार ऐतिहासिक आधार जनसांख्यिकीय आधार क्षेत्रीयकरण के सामाजिक–आर्थिक आधार केस अध्ययन	**इकाई 1** : क्षेत्रीयकरण के आधार **(पृष्ठ 3–36)**
इकाई–2 वृहत् क्षेत्र : उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा भारतीय संघवाद : संक्षिप्त अवलोकन प्राकृतिक एवं मानव संसाधन तथा उनका उपयोग जनसंख्या विकास पर्यावरण अंतराफलक नीतियां एवं कार्यक्रम	**इकाई 2** : वृहत् क्षेत्र **(पृष्ठ 37–82)**
इकाई–3 मध्यम क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार भौतिक एवं मानवीय संसाधन आर्थिक अंतर्संबद्धता जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक नीतियां एवं कार्यक्रम	**इकाई 3** : मध्यम क्षेत्र **(पृष्ठ 83–112)**
इकाई–4 सूक्ष्म क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन औपचारिक और कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य संबंध जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध नीतियां एवं कार्यक्रम	**इकाई 4** : सूक्ष्म क्षेत्र **(पृष्ठ 113–127)**
इकाई–5 प्राकृतिक/भौतिक क्षेत्र सुंदरवन डेल्टा भारतीय गंगा योजना तटीय भारत नगरीय/महानगरीय क्षेत्र दिल्ली महानगरीय क्षेत्र कोलकाता महानगरीय क्षेत्र मुंबई महानगरीय क्षेत्र सांस्कृतिक क्षेत्र : बुंदेलखंड	**इकाई 5** : मध्यम एवं सूक्ष्म क्षेत्रों का विस्तृत केस अध्ययन **(पृष्ठ 129–162)**

विषय–सूची

परिचय **1–2**

इकाई 1 क्षेत्रीयकरण के आधार **3–36**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा
1.3 भू–राजनीतिक जलवायु
  1.3.1 जलवायु संबंधी आधार
  1.3.2 कृषि जलवायु आधार
  1.3.3 भौतिक आधार
  1.3.4 ऐतिहासिक आधार
  1.3.5 जनसांख्यिकीय आधार
  1.3.6 क्षेत्रीयकरण के सामाजिक–आर्थिक आधार
  1.3.7 केस अध्ययन
1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.5 सारांश
1.6 मुख्य शब्दावली
1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 वृहत् क्षेत्र **37–82**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 वृहत् क्षेत्र : उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा
2.3 भारतीय संघवाद : संक्षिप्त अवलोकन
2.4 प्राकृतिक एवं मानव संसाधन तथा उनका उपयोग
2.5 जनसंख्या विकास
2.6 पर्यावरण अंतराफलक
2.7 नीतियां एवं कार्यक्रम
2.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.9 सारांश
2.10 मुख्य शब्दावली
2.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.12 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 मध्यम क्षेत्र **83–112**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 मध्यम क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार
3.3 भौतिक एवं मानवीय संसाधन

3.4 आर्थिक अंतर्संबद्धता
3.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक
3.6 नीतियां एवं कार्यक्रम
3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.8 सारांश
3.9 मुख्य शब्दावली
3.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 सूक्ष्म क्षेत्र **113–127**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सूक्ष्म क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार
4.3 भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन
4.4 औपचारिक और कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य संबंध
4.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध
4.6 नीतियां एवं कार्यक्रम
4.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.8 सारांश
4.9 मुख्य शब्दावली
4.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 मध्यम एवं सूक्ष्म क्षेत्रों का विस्तृत केस अध्ययन **129–162**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 प्राकृतिक/भौतिक क्षेत्र
  5.2.1 सुंदरवन डेल्टा
  5.2.2 भारतीय गंगा योजना
  5.2.3 तटीय भारत
5.3 नगरीय/महानगरीय क्षेत्र
  5.3.1 दिल्ली महानगरीय क्षेत्र
  5.3.2 कोलकाता महानगरीय क्षेत्र
  5.3.3 मुंबई महानगरीय क्षेत्र
5.4 सांस्कृतिक क्षेत्र : बुंदेलखंड
5.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.6 सारांश
5.7 मुख्य शब्दावली
5.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.9 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'भारत का क्षेत्रीय भूगोल' विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित एम.ए. उत्तरार्द्ध (भूगोल) के पाठ्यक्रम के अनुरूप लिखी गई है। आज, भूगोल ही एकमात्र ऐसा विषय है जो धरातल के स्थानिक विन्यास की गत्यात्मकता को समझने के लिए सभी प्राकृतिक व मानवीय विज्ञानों को मंच पर लाता है। क्षेत्रीय भूगोल प्राकृतिक व सामाजिक दोनों ही प्रकार का विज्ञान है जिसके द्वारा मानव व पर्यावरण दोनों का ही अध्ययन किया जाता है।

भूगोल ने आज विज्ञान का स्थान प्राप्त कर लिया है जो पृथ्वी तल पर उपस्थित विविध प्राकृतिक और सांस्कृतिक रूपों की व्याख्या करता है। भूगोल एक समग्र और अंतर्संबंधित क्षेत्रीय अध्ययन है जो स्थानिक संरचना में भूत से भविष्य में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करता है। इस प्रकार भूगोल का क्षेत्र विविध विषयों जैसे पर्यावरण प्रबंधन, जल संसाधन, आपदा प्रबंधन, मौसम विज्ञान, नियोजन और विविध सामाजिक विज्ञानों से संबंधित है।

क्षेत्रीय भूगोल, क्षेत्रीय परिघटनाओं की व्याख्या व अध्ययन करता है। क्षेत्रीय भूगोल को भूगोल की मुख्य शाखा के रूप में माना जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक में भारत के क्षेत्रीय भूगोल के विभिन्न पक्षों का सांगोपांग विवेचन किया गया है। प्रत्येक इकाई के प्रारंभ में विषय का विश्लेषण करने से पहले उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता को परखने के लिए प्रश्न दिए गए हैं। पाठ्य सामग्री तैयार करते समय विषय में विद्यार्थियों की रुचि जगाने तथा रोचकता लाने का भरपूर प्रयास किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पुस्तक को पांच इकाइयों में समायोजित किया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई क्षेत्रीयकरण के आधार पर केंद्रित है जिसके अंतर्गत क्षेत्रीयकरण की अवधारणा, भू–राजनीतिक जलवायु तथा क्षेत्रीयकरण के सामाजिक व आर्थिक आधारों का विश्लेषण किया गया है।

दूसरी इकाई वृहत् क्षेत्र पर आधारित है जिसके अंतर्गत वृहत् क्षेत्र की उत्पत्ति, उनकी बदलती रूपरेखा, भारतीय संघवाद, प्राकृतिक व मानवीय संसाधन, जनसंख्या विकास तथा पर्यावरण अंतराफलक की विवेचना की गई है।

तीसरी इकाई मध्यम क्षेत्र को अंकित करती है जिसमें मध्यम क्षेत्र के क्षेत्रीयकरण के आधार, भौतिक एवं मानवीय संसाधन, आर्थिक अंतर्संबद्धता, जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक तथा नीतियों एवं कार्यक्रमों का वर्णन किया गया है।

चौथी इकाई सूक्ष्म क्षेत्र से संबंधित है जिसके अंतर्गत सूक्ष्म क्षेत्र के क्षेत्रीयकरण का आधार, भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन, औपचारिक एवं कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य संबंध, जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध आदि का विश्लेषण किया गया है।

पांचवीं इकाई मध्यम एवं सूक्ष्म क्षेत्रों के विस्तृत केस अध्ययन से संबंधित है जिसमें प्राकृतिक व भौतिक क्षेत्र, सुंदरवन डेल्टा, भारतीय गंगा योजना, तटीय भारत, महानगरीय क्षेत्रों आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक में भारत में क्षेत्रीय भूगोल को सरल भाषा में रुचिकर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों की जिज्ञासा को शांत कर क्षेत्रीय भूगोल की प्रकृति को समझने में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 क्षेत्रीयकरण के आधार

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा
1.3 भू–राजनीतिक जलवायु
  1.3.1 जलवायु संबंधी आधार
  1.3.2 कृषि जलवायु आधार
  1.3.3 भौतिक आधार
  1.3.4 ऐतिहासिक आधार
  1.3.5 जनसांख्यिकीय आधार
  1.3.6 क्षेत्रीयकरण के सामाजिक–आर्थिक आधार
  1.3.7 केस अध्ययन
1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.5 सारांश
1.6 मुख्य शब्दावली
1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

पृथ्वीतल का वह इकाई क्षेत्र जो अपने विशेष लक्षणों के कारण अपने समीपवर्ती क्षेत्रों से अलग समझा जाता है, प्रदेश कहलाता है। भूगोल में क्षेत्रीयकरण का आशय भू–सतह को कई भागों या प्रदेशों में समरूपता या कार्यात्मकता के आधार पर सीमांकित करना है।

इस इकाई में क्षेत्रीयकरण की अवधारणा को विस्तार से समझाते हुए भारत के क्षेत्रीयकरण से संबंधित पूर्व दृष्टिकोण व प्रादेशिक योजनाओं का उल्लेख किया गया है। यह इकाई क्षेत्रीयकरण की भू–राजनीतिक जलवायु, कृषि–जलवायु, भौतिक, ऐतिहासिक, जनसांख्यिकीय व सामाजिक आर्थिक आधारों का भी वर्णन करती है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- क्षेत्रीयकरण के आधारों को जान पाएंगे;
- क्षेत्रीयकरण के पूर्व व वर्तमान आधारों का अध्ययन कर पाएंगे;
- क्षेत्रीयकरण की विभिन्न योजनाओं को समझ पाएंगे;
- क्षेत्रीयकरण के मुख्य आधारों का अध्ययन व विश्लेषण कर पाएंगे।

1.2 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा

टिप्पणी

भूगोल विषय में क्षेत्रीयकरण या प्रादेशीकरण का आशय है– ''भू–सतह को कई भागों में या प्रदेशों में समरूपता के आधार पर विभक्त करना, उनका विश्लेषण करना, अध्ययन करना तथा वर्णन प्रस्तुत करना। यह एक विधितन्त्रीय प्रक्रिया है जो किसी भूभाग को प्रदेशों में बांटने के लिए अपनायी जाती है। ऐसा माना जाता है कि पृथ्वी अथवा उसके किसी वृहत् भूभाग के व्यवस्थित अध्ययन के लिए उस क्षेत्र का प्रादेशीकरण एक आवश्यक प्रक्रिया है। किसी वृहत् भूखण्ड को विभिन्न विशेषताओं के आधार पर क्रमबद्ध रूप से विभिन्न प्रदेशों में विभक्त करने का उद्देश्य केवल भौगोलिक अध्ययन करना ही नहीं है वरन नियोजित क्षेत्रीय विकास, क्षेत्रीय सन्तुलन, प्रशासनिक नियंत्रण तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों के सुचारु अध्ययन के लिए भी प्रादेशीकरण की आवश्यकता पड़ती है।

भूगोल में क्षेत्रीयकरण का सबसे अधिक उपयोग प्रादेशिक नियोजन के क्षेत्र में किया गया है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व के अधिकांश देशों ने अपने नियोजित विकास हेतु क्षेत्रीयकरण को आधार मानकर विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया। इससे पहले 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में रिटर, रेटजेल, हेटनर, हरबर्टसन, कार्ल सावर, हार्टशान, कार्ल ट्राल, रॉबर्ट ई. डिकिंसन आदि भूगोलवेत्ताओं ने क्षेत्रीयकरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। रॉबर्ट ई. डिकिंसन के अनुसार, ''प्रादेशीकरण की विचारधारा किसी क्षेत्र में मिलने वाली भौगोलिक या स्थानिक घटनाओं के जटिल समूह से जुड़ी हुई है। इसके लिए उस क्षेत्र में हमें तीन मुख्य तथ्यों का अध्ययन करना आवश्यक है–

1. जिस प्रदेश या भूसतह का हम प्रादेशीकरण करना चाहते हैं उस प्रदेश की भौतिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।
2. उस प्रदेश में उन भौतिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक है जो समरूपता व विषमता की दृष्टि से महत्वपूर्ण हों।
3. उस प्रदेश की अपने समीपवर्ती प्रदेश में क्या संलग्नताएं व सम्बद्धताएँ हैं, इस बारे में भी आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

उक्त तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने व विश्लेषण करने के बाद ही किसी प्रदेश का समरूपता के आधार पर विभाजन या सीमांकन किया जाता है। प्रदेशों के सीमांकन में उद्देश्य को सबसे महत्वपूर्ण आधार माना जाता है। प्रादेशीकरण में वर्गीकरण के लिए वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करना आवश्यक होता है। अतः इसके लिए डॉ. ग्रिग ने प्रादेशीकरण के लिए निम्न 8 आधारों का उल्लेख किया–

1. वर्गीकरण किसी एक विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। सामान्यतया, इस प्रकार किया गया वर्गीकरण समान रूप से दो विभिन्न उद्देश्यों की आपूर्ति नहीं कर सकता।
2. किसी क्षेत्र में मिलने वाले तत्वों के प्रकार में भिन्नताएं मिलती हैं। ऐसे तत्वों के आधार पर प्रदेश का वर्गीकरण संभव नहीं है जो प्रकृति से ही भिन्न हो, जैसे– चट्टान व जंगली जीव।

टिप्पणी

3. वर्गीकरण निरपेक्ष नहीं होता। वर्गीकरण के आधारभूत तत्वों के संदर्भ में जब भी कोई नवीन सूचना उपलब्ध हो जाती है, उसी के अनुरूप प्रदेश के वर्गीकरण में संशोधन करना पड़ता है।
4. किसी समूह के तत्वों का वर्गीकरण उन तत्वों की विशेषताओं के आधार पर किया जाना चाहिए। ऐसा न होने पर प्रादेशीकरण की योजना व्यावहारिक रूप से महत्वहीन हो जाती है।
5. प्रदेशों का तार्किक विभाजन सारगर्भित होना चाहिए तथा प्रत्येक प्रदेश दूसरे प्रदेश से सर्वथा भिन्न होना चाहिए।
6. प्रदेशों के विभाजन व उपविभाजन में जहां तक संभव हो एक ही सिद्धांत का अनुपालन होना चाहिए।
7. प्रदेशों के विभाजन का सिद्धांत अथवा तथ्यों की भिन्नताएं प्रादेशीकरण के उद्देश्य से महत्वपूर्ण होती हैं।
8. उच्च क्रम की श्रेणी के विभाजन में जिन विशेषताओं का उपयोग किया गया है, वे विशेषताएँ निम्न क्रम के श्रेणी विभाजन में प्रयुक्त विशेषताओं की तुलना में महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।

भारत के क्षेत्रीयकरण से संबंधित पूर्व दृष्टिकोण

भारत को प्रदेशों में बांटने के प्रयास वर्तमान शताब्दी की देन हैं। 1917 के बाद इन प्रयासों को गम्भीरता से लिया जा सकता है। विद्वानों ने अपने–अपने उद्देश्यों से भारत को विभिन्न प्रदेशों में बांटने का प्रयास किया है। भारत के मौसम पर्यवेक्षण विभाग ने जलवायु के आधार पर जलवायु प्रदेश निर्धारित किये। भारत में जनगणना विभाग ने जनगणना की सुविधा से देश को कई प्रदेशों में बांटा है तथा जनसंख्या वितरण की विशेषताओं के कई मानचित्र तैयार किये हैं। ये सब विभाजन किसी एक उद्देश्य को लेकर किये गये।

मेकफारलेन ने सबसे पहले 1918 में भारत को प्राकृतिक प्रदेशों में बांटा। इन्होंने अपने विचार 'Economic Geography' में प्रस्तुत किये हैं। इन्होंने भारत को दो वृहत् प्रदेशों में बांटा– बाह्य प्रायद्वीपीय भारत (Extra - Peninsular India) और प्रायद्वीपीय भारत (Peninsular India)। इनको फिर क्रमशः 16 भागों में बांटा है।

बाह्य प्रायद्वीपीय भारत के प्राकृतिक प्रदेश– (1) उत्तरी–पश्चिमी पर्वतीय प्रदेश (2) हिमाचल प्रदेश (3) उत्तरी–पूर्वी पहाड़ियां (4) गंगा की निचली घाटी और ब्रह्मपुत्र का मैदान (5) गंगा की ऊपरी घाटी (6) गंगा के मध्य घाटी (7) पंजाब का मैदान (8) सिंधु का मैदान (9) थार का मरुस्थल प्रायद्वीपीय भारत के प्राकृतिक प्रदेश (10) पूर्वी तटीय प्रदेश, (11) पश्चिमी तटीय प्रदेश (12) दक्षिणी पठारी प्रदेश (13) उत्तरी–पूर्वी दक्कन (14) राजस्थान के उच्च भूमि प्रदेश (15) गुजरात का मैदान (16) काली मिट्टी का प्रदेश।

डडले स्टाम्प ने अपनी पुस्तकों विशेषतः 'Asia : A Regional and Economic Geography' में भारत का प्रादेशिक विभाजन प्रस्तुत किया। भूगर्भिक संरचना, भौतिक रचना और जलवायु संबंधी तत्वों को ध्यान में रखकर भारत के तीन प्रमुख प्रदेश बताये हैं– उत्तरी पर्वतीय प्रदेश, उत्तरी मैदान और भारतीय पठार। इनको फिर 22 उपविभागों में बांटा है–

टिप्पणी

(क) उत्तरी पर्वतीय प्रदेश के प्राकृतिक प्रदेश का उपविभाजन प्रमुख रूप से जलवायु तथा कहीं–कहीं ऊंचाई को ध्यान में रखकर किया है– (1) उत्तरी–पूर्वी पहाड़ियां (2) हिमालय प्रदेश (3) उपहिमालय प्रदेश (4) लद्दाख प्रदेश

(ख) उत्तरी मैदान के प्राकृतिक प्रदेश का उपविभाजन जलवायु को आधार मानकर किया है। इसके निम्न उपविभाग बताये हैं– (5) सतलज का मैदान (6) ऊपरी गंगा का मैदान (7) मध्य गंगा का मैदान (8) ब्रह्मपुत्र की घाटी, (9) निचली गंगा का मैदान

(ग) भारतीय पठार के प्राकृतिक प्रदेश का उप–विभाजन संरचना व ऊंचाई को आधार मानकर किया है। उत्तरी मैदान के दक्षिण में फैले पठार को भारतीय पठार का नाम दिया है।

इसके उन्होंने निम्न उपविभाग बताए हैं– (10) गुजरात प्रदेश (11) मरूभूमि प्रदेश (12) राजस्थान का मालवा का पठार (13) मध्य भारत का पठार (14) छोटा नागपुर का पठार (15) लावा पठार (16) दक्कन प्रदेश (17) गोदावरी कृष्णा प्रदेश (18) महानदी घाटी (19) पूर्वी घाट (20) पश्चिमी तटवर्ती मैदान (21) पूर्वी तटवर्ती मैदान (22) उत्तरी सरकार प्रदेश।

स्टाम्प के विचार 'बेकर' के विचारों से मिलते जुलते हैं। इनके विचार काफी महत्वपूर्ण थे। केवल तीसरे भौतिक प्रदेश में से तटीय प्रदेश को पृथक करने का प्रयास के. एस. अहमद ने किया।

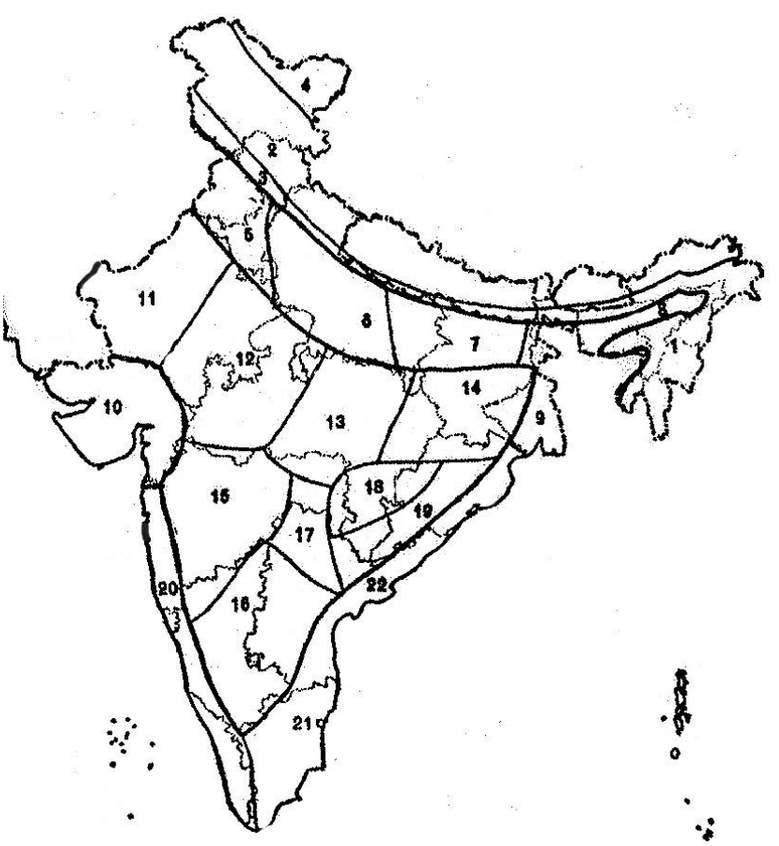

प्राकृतिक प्रदेश : स्टाम्प के अनुसार

टिप्पणी

प्रोफेसर बेकर ने 1930 में भारत को प्राकृतिक प्रदेशों में बांटा तथा उसके तीन प्रमुख भाग व 18 उपविभाग किये हैं। उनके विचार स्टाम्प के विचारों से मिलते जुलते थे।

1939 में एम.बी. पीठावाला ने मद्रास की एक भूगोल पत्रिका में भारत के प्राकृतिक प्रदेशों के सीमांकन पर एक लेख लिखा। उन्होंने सूक्ष्म निरीक्षण के आधार पर भारत को तीन प्राकृतिक प्रदेशों तथा उन्हें पुनः 14 प्राकृतिक प्रदेशों तथा 28 उपप्रदेशों में बांटा। इनके इस सीमांकन की आलोचना हुई, इसके बाद 1945 में उन्होंने उनकी प्रादेशीकरण की योजना में संशोधन किये।

डॉ. काजी सैयदउद्दीन अहमद ने 1944 में भारत के प्राकृतिक प्रदेशों की एक नई योजना प्रस्तुत की जिसमें तीन प्रमुख प्रदेशों के साथ एक और नया प्रदेश तटीय प्रदेश जोड़ दिया। इन्होंने भारत के चार प्रमुख प्रदेश तथा 20 उपप्रदेश बताये। इनके अनुसार देश का विभाजन भूतात्विक रचना के अनुसार तीन भागों में ठीक रह सकता है, किंतु धरातलीय रचना के अनुसार तटीय मैदान प्रायद्वीपीय पठार से असंबद्ध है। इसी आधार पर इन्होंने पीठावाला के विचारों की आलोचना की। ओ.एच.के. स्पेट ने अहमद के विभाजन को ठीक बताया। अहमद ने उपप्रदेशों का विभाजन विभिन्न प्राकृतिक तत्वों को आधार मानकर किया।

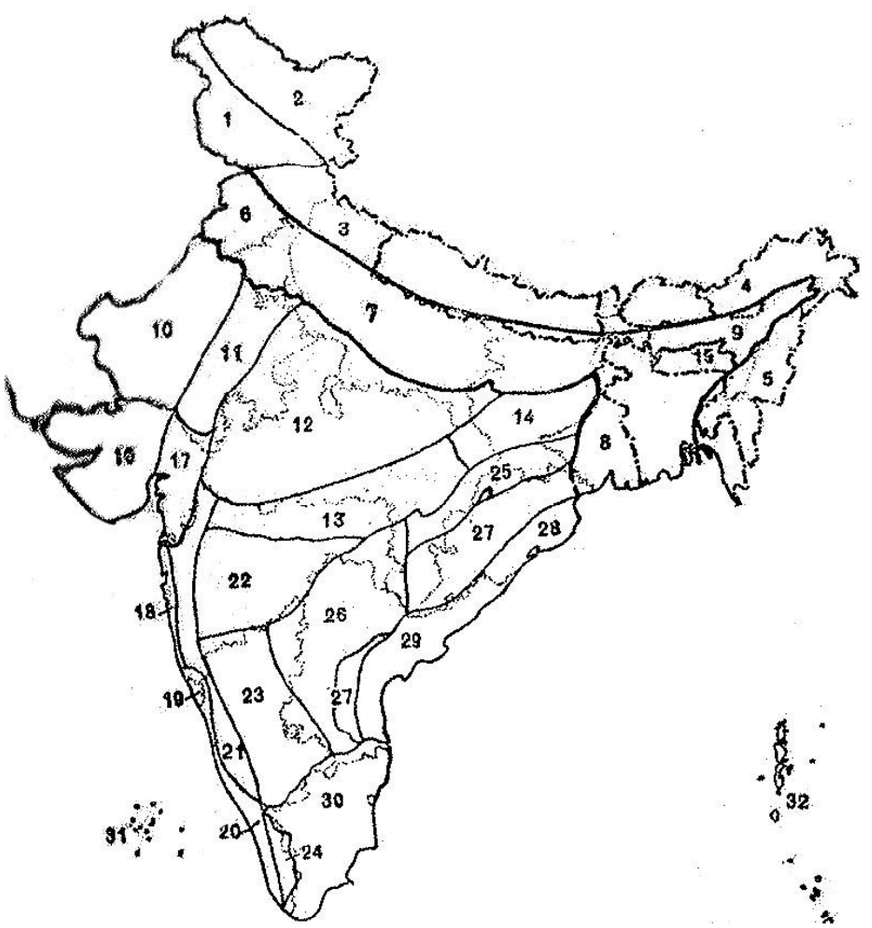

प्राकृतिक प्रदेश : स्पेट के अनुसार

टिप्पणी

प्रोफेसर ओ. एच. के., स्पेट ने 1954 में रंगून विश्वविद्यालय में काम करते समय भारतीय भूगोल का विस्तृत अध्ययन करके एक वृहत् ग्रंथ 'भारत तथा पाकिस्तानः एक प्रादेशिक अध्ययन' लिखा और विस्तृत एवं स्पष्ट प्रादेशिक विभाजन प्रस्तुत किया। उन्होंने प्रादेशिक अध्ययन का महत्व प्रदान कर क्षेत्र में एक नया उत्साह उत्पन्न किया। उन्होंने अपने विभाजन में सूक्ष्मतम अध्ययन प्रस्तुत किया है, किंतु इसमें कुछ जटिलता भी थी। उन्होंने भारत को तीन वृहत् स्तर के प्रदेशों की संरचना के आधार पर बांटा है। फिर उनको 35 प्रथम स्तर, 74 द्वितीय स्तर तथा 225 उपप्रदेशों में बांटा है। उनका मत प्रदेशों के विभाजन में लचीला था। उन्होंने यह तथ्य स्वीकार किया है कि अनेक प्रदेशों व उप प्रदेशों को और भी भागों में विभाजित किया जा सकता है। ऐसा नवीन तकनीकों तथा विस्तृत एवं सूक्ष्म अध्ययन की सहायता से संभव है। उन्होंने प्रदेशों के विभाजन में स्थिति, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति व राजनीतिक तत्वों को आधार बनाने में सहायता ली है। उन्होंने अपनी योजना में संरचना को अधिक महत्व दिया है। यद्यपि विभाजन केवल एक तथ्य के आधार पर संभव नहीं है। वे कुरियन के विचारों से सहमत होते हुए कहते हैं कि भारत का वर्गीकरण करने की अपेक्षा उसको समझना अधिक महत्वपूर्ण है।

स्पेट ने भारत के भौगोलिक प्रदेशों का निम्न वर्गीकरण प्रस्तुत किया है–

स्पेट ने प्रमुख प्रदेश तीन बताये हैं– (i) उत्तरी पर्वत (ii) उत्तरी मैदान (iii) प्रायद्वीपीय भारत

सूक्ष्म प्रदेश : इन प्रमुख प्रदेशों को निम्न सूक्ष्म प्रदेशों में बांटा गया है–

(i) उत्तरी पर्वत के सूक्ष्म प्रदेश– (1) कश्मीर (2) काराकोरम (3) मध्य हिमालय (4) पूर्वी हिमालय (5) पूर्वी असम के पर्वत। इनको कुल 11 अतिसूक्ष्म प्रदेशों में बांटा गया है।

(ii) उत्तरी मैदान के सूक्ष्म प्रदेश– (6) पंजाब का मैदान (7) गंगा का मैदान (8) बंगाल (9) असम घाटी।

(iii) दक्षिणी प्रायद्वीप के सूक्ष्म प्रदेश (10) थार का मरुस्थल (11) अरावली पर्वत (12) मध्यवर्ती भारत (13) सतपुड़ा मेकाल प्रदेश (14) छोटानागपुर प्रदेश (15) शिलांग का पठार (16) कच्छ काठियावाड़ प्रदेश (17) गुजरात प्रदेश (18) कोंकन प्रदेश (19) गोवा–कानारा प्रदेश (20) केरल (मालाबार) प्रदेश (21) पश्चिमी घाट (22) महाराष्ट्र दक्कन लावा क्षेत्र (23) कर्नाटक प्रदेश (24) दक्षिणी पर्वत प्रदेश (25) महानदी घाटी (26) तेलंगाना प्रदेश (27) पूर्वी घाट (28) महानदी–ब्राह्मणी डेल्टा (29) उत्तरी सरकार का वेल्लोर प्रदेश (30) तमिलनाडु प्रदेश (31) लक्षद्वीप एवं मिनिकॉय द्वीपसमूह (32) अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह।

इन सबको 42 अति सूक्ष्म स्तर के प्रदेशों में विभाजित किया है।

पी. सेन गुप्ता– 1961 में इन्होंने उपर्युक्त विद्वानों द्वारा दिए गए क्षेत्रीयकरण के तथ्यों को ध्यान में रखकर भारत के भौगोलिक अध्ययन की व्याख्या की

एस.पी. चटर्जी ने 1962 में भारत को 7 प्रमुख प्रदेशों में बांटा तथा फिर इनको 20 उप प्रदेशों तथा 62 सूक्ष्म उप प्रदेशों में विभाजित किया। ये सात प्रमुख प्रदेश इस

प्रकार हैं– हिमालय प्रदेश, उत्तरी मैदानी प्रदेश, केंद्रीय पहाड़ियां एवं पठार, दक्कन प्रदेश, पूर्वी समुद्र तटीय मैदानी प्रदेश, व पश्चिमी समुद्र तटीय मैदान तथा द्वीप समूह।

टिप्पणी

एस.पी. राय चौधरी– 1966 में योजना आयोग के भूमि एवं मिट्टी विशेषज्ञ डॉ. एस. पी. राय चौधरी ने भारत के 7 प्रमुख प्राकृतिक प्रदेश बताये तथा उनको 20 उप प्रदेशों में बांटा। यह विभाजन भौतिक विशेषताओं के साथ–साथ जलवायु एवं वनस्पति को ध्यान में रखकर किया गया है।

भारत के प्रमुख प्राकृतिक प्रदेश कितने हैं, इस बारे में विद्वान एक मत नहीं हो पाए हैं। इसलिए उप प्रदेशों के बारे में निश्चित रूप से अंतर मिलना स्वाभाविक है। भारत के वृहत् प्राकृतिक प्रदेश तीन हैं या चार, इस पर प्रत्येक विद्वान ने अपने तर्क दिए हैं। काजी अहमद ने तटीय मैदानों को 4 वृहत् प्रदेशों में माना है तथा तटीय मैदानों को प्रायद्वीपीय पठार से अलग करके बताया है। उनके विचार से भूगर्भिक दृष्टिकोण से समुद्र तटीय भाग दक्षिणी पठार से भिन्न है। इस विचार का पीठावाला व स्पेट विद्वानों ने समर्थन नहीं किया। भूगर्भिक दृष्टिकोण से भारत के तीन प्रदेश तो ठीक हैं, लेकिन धरातलीय दशा ने चौथे प्रदेश की उत्पत्ति की है। तटीय प्रदेश अपनी मैदानी व निम्न धरातलीय विशेषता, अधिक वर्षा, समुद्री प्रभाव, मैंग्रोव और दलदली प्राकृतिक वनस्पति आदि के कारण पठारी भूभाग से भिन्नता रखते हैं। पीठावाला का मानना था कि समुद्री तट दक्कन के ट्रेप के तटीय अग्र भूमि (Share Facies) से अधिक कुछ नहीं है। यह दक्षिण पठार का एक ही प्रांत है। स्पेट ने माना कि काजी अहमद के विचार पीठावाला की अपेक्षा कम यथार्थवादी हैं। यदि भूगर्भिक तत्वों को ही विभाजन का आधार माना जाए तो भारत के तीन या चार वृहत् प्रदेश नहीं बल्कि पांच वृहत् प्रदेश किये जा सकते हैं। पश्चिमी तटीय क्षेत्र एक ही दृष्टि से एक दूसरे से भिन्नता रखते हैं। 'इंडिया : ए रीजनल ज्योग्राफी के अनुसार इस विवाद के विषय का अन्त नहीं है। प्रमुख प्रश्न यह नहीं है कि पूर्वी व पश्चिमी तट एक दूसरे से भिन्नता रखते हें, बल्कि ये तटीय प्रदेश मानवीय व सांस्कृतिक दृष्टि से भी प्रायद्वीपीय पठार से भिन्नता रखते हैं। ये प्रदेश वास्तव में आकार की दृष्टि से भी वृहत् प्रदेश के रूप में मान्य किये जा सकते हैं।

स्पेट का मानना था कि भारत जैसे विशाल देश के लिए जिसमें अनेक भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक विभिन्नताएं मिलती हैं, लघु स्तर पर भी प्रदेशों का विभाजन करना आसान नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि स्वयं स्पेट भी अपने इस विभाजन, विशेषकर उप प्रदेशों के स्तर के विभाजन से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने भारतीय भूगोलवेत्ताओं के लिए इस बात का आह्वान किया कि वे भारत के प्रादेशिक भूगोल पर सूक्ष्म एवं विस्तृत अध्ययन करें।

1971 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. राम लोचन सिंह ने अपने भूगोल साथियों तथा देश के विभिन्न क्षेत्रों के भूगोलवेत्ताओं की सहायता से एक वृहत् ग्रंथ (India : A Regional Study) लिखा, जिसमें भारत के विभिन्न प्रदेशों का सीमांकन चार वृहत् प्रदेशों (Macro Regions) (1) हिमाचल पर्वतीय प्रदेश, विशाल मैदान, प्रायद्वीपीय उच्च भूमि प्रदेश, भारत के तटीय प्रदेश व द्वीप समूह के रूप में किया गया।

विशाल मैदान को 62 मध्य प्रदेशों (Meso Regions) में बांटा गया (1) एक राजस्थान मैदान (2) पंजाब का मैदान (3) अपर गंगा का मैदान (4) मध्य गंगा का मैदान (5) निम्न गंगा का मैदान व (6) असम की घाटी।

टिप्पणी

इन मेसो प्रदेशों को 13 प्रथम क्रम के तथा 38 द्वितीय क्रम के प्रदेशों में बांटा गया।

मेसो प्रदेश	प्रथम कर्म के प्रदेश	द्वितीय कर्म के प्रदेश
I. राजस्थान मैदान	1. मरुस्थली	(क) जैसलमेर मरुस्थली
		(ख) बाडमेर मरुस्थली
		(ग) बीकानेर–चूरु मरुस्थली
	2. राजस्थान बांगर	(घ) घग्घर प्रदेश
		(च) शेखवती प्रदेश
		(छ) नागौर प्रदेश
		(ज) लूनी प्रदेश
II. पंजाब मैदान	3. उत्तरी पंजाब	(क) होशियारपुर–चंडीगढ़ मैदान
		(ख) अपर बारी दोआब
		(ग) जालन्धर मैदान
		(घ) पंजाब मालवा मैदान
	4. दक्षिणी पंजाब मैदान	(च) अंबाला मैदान
		(छ) पूर्वी हरियाणा (कुरुक्षेत्र)
		(ज) पश्चिमी हरियाणा
		(झ) दक्षिणी हरियाणा
III. अपर गंगा का मैदान	5. उत्तरी ऊपरी गंगा मैदान	(क) रोहिलखंड मैदान
		(ख) अवध मैदान
	6. दक्षिणी ऊपरी गंगा मैदान	(ग) अपर गंगा–यमुना दोआब
		(घ) ट्रांस यमुना मैदान
		(च) निमन गंगा–यमुना दोआब
IV. मध्य गंगा मैदान	7. उत्तरी मध्य गंगा मैदान	(क) गंगा–घाघरा दोआब
		(ख) सरयू पार मैदान
		(ग) मिथिला मैदान
	8. दक्षिणी मध्य गंगा मैदान	(घ) सोन–गंगा विभाजक
		(च) मगध का मैदान
V. निम्न गंगा मैदान	9. उत्तरी बंगाल मैदान	(क) दुआर प्रदेश
		(ख) तिस्ता का मैदान
	10. बंगाल डेल्टा	(ग) मोरीबंद डेल्टा
		(घ) परिपक्व डेल्टा
		(च) क्रियाशील डेल्टा
	11. रार मैदान	(छ) मयूराक्षी मैदान
		(ज) बांकुड़ा उच्च प्रदेश

		(झ) मिदनापुर उच्च प्रदेश
VI. असम घाटी	12. ऊपरी असम घाटी	(क) उत्तरी ऊपरी असम घाटी
		(ख) दक्षिणी ऊपरी असम घाटी
	13. निम्न असम घाटी	(ग) उत्तरी निम्न असम घाटी
		(घ) दक्षिणी निम्न असम घाटी

टिप्पणी

हिमालय पर्वतीय प्रदेश को पांच मेसो प्रदेशों में बांटा गया है: (i) हिमालय प्रदेश (ii) हिमाचल प्रदेश (iii) उत्तर प्रदेश हिमालय (iv) पूर्वी हिमालय और (v) पूर्वांचल

इन पांच मेसो प्रदेशों को 11 प्रथम क्रम के तथा 33 द्वितीय क्रम के प्रदेशों में बांटा गया है–

मेसो प्रदेश	प्रथम कर्म के प्रदेश	द्वितीय कर्म के प्रदेश
VII. कश्मीर प्रदेश	14. उत्तरी कश्मीर प्रदेश	(क) जास्कर–लद्दाख प्रदेश
		(ख) देवसाई, स्काडूं प्रदेश
		(ग) गिलगित–बालिस्तान प्रदेश
	15. दक्षिणी कश्मीर प्रदेश	(घ) अक्साई–चिन प्रदेश
		(च) कश्मीर की घाटी
		(छ) जम्मू–मीरपुर प्रदेश
VIII. हिमाचल प्रदेश	16. हिमालय– हिमाचल	(क) चन्द्रभगा बेसिन
	प्रदेश	(ख) रावी बेसिन
		(ग) व्यास बेसिन
		(घ) हिमालय सतलज बेसिन
		(च) ऊपरी यमुना बेसिन
	17. हिमाचल–पार	(छ) स्पिति व सतलज बेसिन
	हिमालय प्रदेश	(ज) मलुगं बेसिन
IX. उत्तर प्रदेश हिमालय	18. हिमाद्रि	(क) हिमाद्रि श्रेणियां
		(ख) हिमाद्रि बेसिन
		(ग) यमुना–टोंस–बेसिन
	19. हिमाचल	(घ) भागीरथी–अलकनंदा बेसिन
		(च) रामगंगा–कोसी बेसिन
		(छ) सरयू–काली बेसिन
	20. शिवालिक पहाड़ियां	(ज) यमुना–गंगा क्षेत्र
		(झ) गंगा–रामगंगा क्षेत्र
		(ट) रामगंगा–काली क्षेत्र
X. पूर्वी हिमालय	21. दार्जिलिंग–सिक्किम भूटान हिमालय	(क) दार्जिलिंग–सिक्किम हिमालय
		(ख) भूटान हिमालय

टिप्पणी

	22. असम हिमालय	(ग) डाफला प्रदेश
		(घ) मिरी प्रदेश
		(च) अवोर प्रदेश
		(छ) मिश्मी प्रदेश
XI. पूर्वांचल प्रदेश	23. उत्तरी पूर्वांचल	(क) लोहित–तिराम प्रदेश
		(ख) नागालैंड
	24. दक्षिणी पूर्वांचल	(ग) मणिपुर प्रदेश
		(घ) मिजोरम प्रदेश
		(च) त्रिपुरा–कछार प्रदेश

प्रायद्वीपीय उच्च भूमि प्रदेश को 13 मेसो प्रदेशों में विभिन्न आधारों को ध्यान में रखकर बांटा गया है, जैसे– पठारी विशेषता, नदी बेसिन या गर्त, सांस्कृतिक तत्व, अर्थव्यवस्था का प्रकार व राजनैतिक आधार। ये मेसो प्रदेश हैं– (1) उदयपुर–ग्वालियर प्रदेश (2) मालवा प्रदेश (3) बुंदेलखंड प्रदेश (4) विंध्याचल बघेलखंड प्रदेश (5) छोटा नागपुर प्रदेश (6) मेघालय मिकिर प्रदेश (7) महाराष्ट्र प्रदेश (8) छत्तीसगढ़ प्रदेश (9) उड़ीसा उच्च भूमि प्रदेश (10) दंडकारण्य (11) कर्नाटक पठार (12) आंध्र पठार (13) तमिलनाडु पठार एवं दक्षिणी सह्याद्री। इन 13 प्रदेशों को 33 प्रथम क्रम व 96 द्वितीय क्रम के प्रदेशों में बांटा गया है।

मेसो प्रदेश	प्रथम कर्म के प्रदेश	द्वितीय कर्म के प्रदेश
XII. उदयपुर–	25. अरावली उच्च भूमि	(क) उत्तरी अरावली प्रदेश
ग्वालियर प्रदेश	प्रदेश	(ख) मध्य अरावली प्रदेश
		(ग) दक्षिणी अरावली प्रदेश
	26. चंबल–सिंध बेसिन	(घ) मध्य चम्बल बेसिन
		(च) निम्न चम्बल बेसिन
		(छ) सिंध बेसिन
XIII. मालवा प्रदेश	27. उत्तरी मालवा प्रदेश	(क) पूर्वी माही बेसिन
		(ख) ऊपरी चम्बल बेसिन
		(ग) ऊपरी बेतवा बेसिन
	28. दक्षिणी मालवा प्रदेश	(घ) पश्चिमी विंध्यन प्रदेश
		(च) मध्य नर्मदा की घाटी
		(छ) पश्चिमी सतपुड़ा
XIV. बुंदेलखंड प्रदेश	29. बुंदेलखंड मैदान	(क) बीहड़ प्रदेश
		(ख) जालौन प्रदेश
		(ग) हमीरपुर प्रदेश
		(घ) बांदा प्रदेश
	30. बुंदेलखंड उच्च भूमि	(च) बुंदेलखंड नीस प्रदेश

टिप्पणी

	प्रदेश	(छ) बुंदेलखंड विंध्यन पठारी प्रदेश
XV. विंध्याचल–बघेल खंड प्रदेश	31. उत्तरी विंध्याचल–बघेलखंड प्रदेश	(क) रीवा–पन्ना पठार
		(ख) मिर्जापुर–रोहतासगढ़ पठार
	32. दक्षिणी विंध्याचल–बघेलखंड प्रदेश	(ग) बघेलखंड प्रदेश
		(घ) छिंदवाड़ा–मैकान पठार
		(च) नर्मदा–सोन घाटी
XVI. छोटा नागपुर प्रदेश	33. उत्तरी छोटा नागपुर प्रदेश	(क) पलामू उच्च भूमि प्रदेश
		(ख) हजारीबाग पठार
		(ग) दामोदर घाटी
		(घ) संथाल परगना उच्च भूमि प्रदेश
	34. दक्षिणी छोटा नागपुर प्रदेश	(च) पाट भूमि का प्रदेश
		(छ) रांची का पठार
		(ज) सिंहभूमि प्रदेश
XVII. मेघालय–मिकिर प्रदेश	35. पश्चिमी मेघालय मिकिर प्रदेश	(क) उत्तरी गारो प्रदेश
		(ख) दक्षिणी गारो प्रदेश
	36. मध्य मेघालय मिकिर प्रदेश	(ग) उत्तरी खासी प्रदेश
		(घ) दक्षिणी खासी प्रदेश
	37. पूर्वी मेघालय मिकिर प्रदेश	(च) जयन्तिया प्रदेश
		(छ) पश्चिमी मिकिर प्रदेश
		(ज) पूर्वी मिकिर प्रदेश
XVIII. महाराष्ट्र प्रदेश	38. महाराष्ट्र सह्याद्री	(क) उत्तरी महाराष्ट्र सह्याद्री
		(ख) दक्षिणी महाराष्ट्र सह्याद्री
	39. ताप्ती–पूर्णा घाटी	(ग) पश्चिमी ताप्ती पूर्णा घाटी
		(घ) पूर्वी ताप्ती पूर्णा घाटी
	40. महाराष्ट्र पठार	(च) अजन्ता पहाड़ियां
		(छ) गोदावरी घाटी
		(ज) ऊपरी भीमा घाटी
		(झ) महादेव उच्च प्रदेश
	41. विदर्भ मैदान	(ट) वर्धा–पेनगंगा मैदान
		(ठ) वान गंगा मैदान
XIX. छत्तीसगढ़ प्रदेश	42. बाह्य प्रदेश	(क) उत्तरी बाह्य प्रदेश
		(ख) पश्चिमी बाह्य प्रदेश
		(ग) दक्षिणी बाह्य प्रदेश

टिप्पणी

	43. छत्तीसगढ़ मैदान	(घ) रायपुर–दुर्ग मैदान
		(च) बिलासपुर मैदान
		(छ) रायगढ़ मैदान
XX. उड़ीसा उच्च भूमि प्रदेश	44. उत्तरी पूर्वी पहाड़ी प्रदेश	(क) उत्तरी–पश्चिमी प्रदेश
		(ख) गढजात पहाड़ी प्रदेश
		(ग) उत्तरी–पूर्वी पठार प्रदेश
	45. मध्य महानदी घाटी	(घ) हीराकुंड–सोनपुर घाटी
		(च) बांध घाटी प्रदेश
	45. दक्षिणी–पश्चिमी पहाड़ी प्रदेश	(छ) हीराकुंड बोलमगिरी बेसिन
		(ज) उड़ीसा घाट प्रदेश
XXI. दण्डकारण्य	47. दण्डकारण्य घाट	(क) पूर्वी दण्डकारण्य घाट
		(ख) मध्य दण्डकारण्य घाट
		(ग) पश्चिमी दण्डकारण्य घाट
	48. दण्डकारण्य पठार	(घ) तेलजोंक घाटी प्रदेश
		(च) बस्तर पठार
		(छ) इंद्रावती सेवरी मैदान
XXII. कर्नाटक पठार	49. मालनाड़	(क) उत्तरी मालनाड़
		(ख) मध्य मालनाड़
		(ग) दक्षिणी मालनाड़
	50. उत्तरी मैदान	(घ) बीदर पठार
		(च) गुलबर्गा मैदान
		(छ) रायचूर मैदान
		(ज) विलारी का मैदान
		(झ) धारवाड़ पठार
		(ट) बीजापुर प्रदेश
	51. दक्षिणी मैदान	(ठ) चित्रदुर्ग प्रदेश
		(ड) तुमकुर प्रदेश
		(ढ) बंगलौर प्रदेश
		(ण) मैसूर प्रदेश
XXIII. आंध्र पठार	52. तेलंगाना	(क) हैदराबाद पठार भूमि
		(ख) तेलंगाना समप्राय
		(ग) गोदावरी घाटी
		(घ) कृष्णा घाटी
	53. रायलसीमा	(च) रायलसीमा समप्राय भूमि
		(छ) रायलसीमा पठार

	54. आंध्र घाट	(ज) उत्तरी आंध्र घाट
		(झ) दक्षिणी आंध्र घाट
XXIV. तमिलनाडु	55. दक्षिणी सह्याद्री पठार एवं दक्षिणी सह्याद्री	(क) अन्नामलाय–पालनी पहाड़ियां
		(ख) इलायची की पहाड़ियां
		(ग) अगस्तमलाय पहाड़ियां
	56. तमिलनाडु घाट	(घ) नीलगिरि
		(च) मेटूर–बेतूर प्रदेश
		(छ) तमिलनाडु पहाड़ियां
	57. कोयंबटूर–मदुराई पठार	(ज) कोयंबटूबर पठार
		(झ) मुदराई पठार

टिप्पणी

भारतीय तट और द्वीपसमूह को चार मेसो प्रदेशों (1) गुजरात प्रदेश (2) पश्चिमी तटीय प्रदेश (3) पूर्वी तटीय मैदान (4) भारतीय द्वीप समूह में विभाजित किया गया। इन चार मेसो प्रदेशों को पुनः 10 प्रथम क्रम के व 24 द्वितीय क्रम के प्रदेशों में विभाजित किया गया है।

मेसो प्रदेश	प्रथम कर्म के प्रदेश	द्वितीय कर्म के प्रदेश
XXV. गुजरात प्रदेश प्रदेश	58. पश्चिमी गुजरात	(क) भुज प्रदेश
		(ख) काठियावाड़ प्रदेश
	59. पूर्वी गुजरात प्रदेश	(ग) अहमदाबाद प्रदेश
		(घ) संभात प्रदेश
		(च) पूर्वी पहाड़ी प्रदेश
XXVI. पश्चिमी तटीय प्रदेश	60. कोंकण तट	(क) उत्तरी कोंकण प्रदेश
		(ख) दक्षिणी कोंकण प्रदेश
	61. कर्नाटक तट	(ग) उत्तरी तट
		(घ) दक्षिणी तट
	62. मालाबार तट	(च) उत्तरी मालाबार तट
		(छ) दक्षिणी मालाबार तट
XXVII. पूर्वी तटीय मैदान	63. तमिलनाडु तटीय मैदान	(क) वैगाई–ताम्रपर्णी प्रदेश
		(ख) डेल्टाई प्रदेश
		(ग) पलार–पोनियार मैदानी प्रदेश
	64. आंध्र तटीय प्रदेश	(घ) पेन्नार प्रदेश
		(च) कृष्णा–गोदावरी डेल्टा
		(छ) विशाखापट्टनम प्रदेश
	65. उत्कल तटीय प्रदेश	(ज) चिल्का प्रदेश
		(झ) महानदी डेल्टा

टिप्पणी

		(ञ) बालासौर मैदान
XXVIII. भारतीय द्वीप समूह	66. अरब सागरीय द्वीप समूह	(क) अभिनदीवी द्वीप समूह
		(ख) लक्कादीव द्वीप समूह
		(ग) मिनिकाय द्वीप समूह
	67. बंगाल की खाडी के द्वीप समूह	(घ) अण्डमान द्वीप समूह
		(च) निकोबार द्वीप समूह

इस प्रकार, इस योजना में भारत को चार वृहत् प्रदेशों 28 मेसो प्रदेशों अर्थात् मध्यम क्रम के प्रदेशों में बांटा गया है। इन मेसो प्रदेशें को कुल मिलाकर 67 प्रथम क्रम व 192 द्वितीय क्रम के उप प्रदेशों में बांटा गया है। India : A Regional Geography' पुस्तक में यह भी उल्लेख है कि इन प्रथम व द्वितीय क्रम के प्रदेशों को सूक्ष्म व गहन अध्ययन एवं विस्तृत सर्वेक्षण के आधार पर और भी लघु प्रदेशों में बांटा जा सकता है।

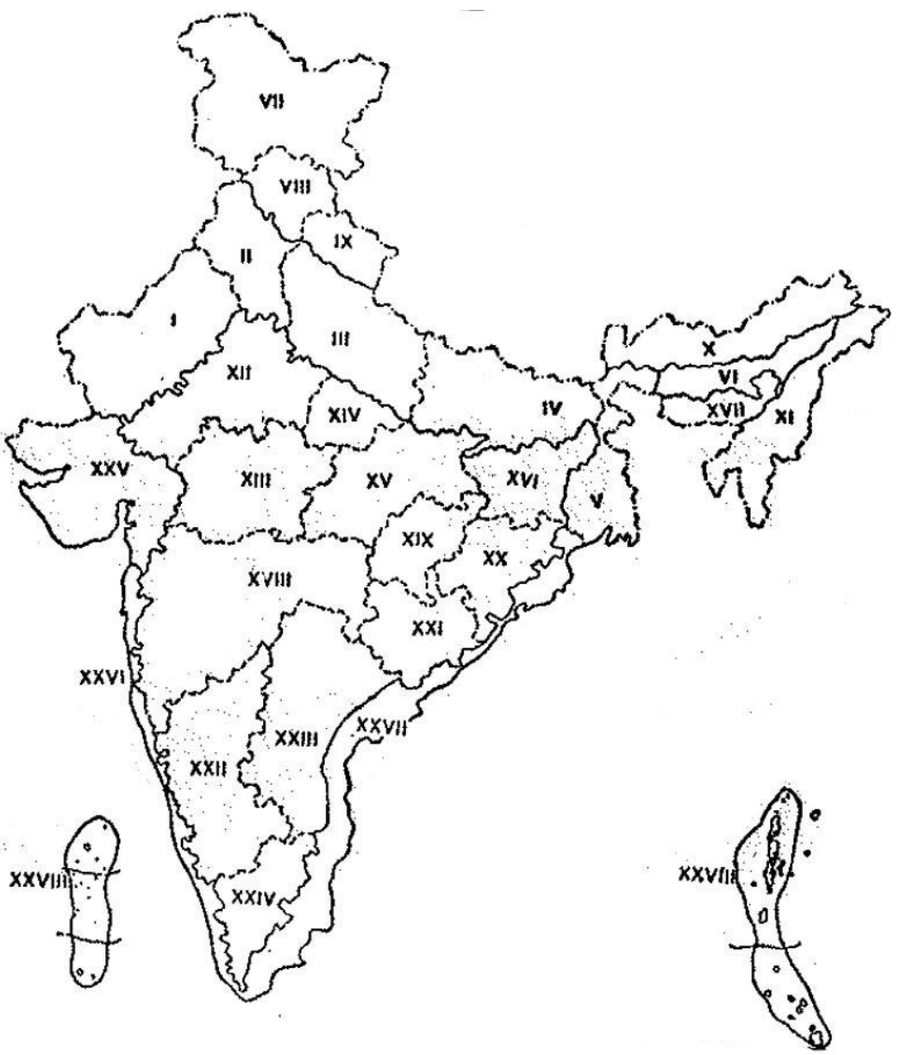

डॉ. आर. एल. सिंह के अनुसार भौगोलिक प्रदेश

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. किस भूगोलवेत्ता ने क्षेत्रीयकरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान नहीं दिया?
   (क) हरबर्टसन (ख) माल्थस
   (ग) कार्ल सावर (घ) रेटजेल
2. क्षेत्रीयकरण में वर्गीकरण के लिए किस विधि का प्रयोग करना आवश्यक है?
   (क) गणितीय विधि (ख) सांख्यिकी विधि
   (ग) वैज्ञानिक विधि (घ) इनमें से कोई नहीं
3. किस सन् में मेकफारलेन ने भारत को प्राकृतिक प्रदेशों में बांटा?
   (क) सन् 1912 (ख) सन् 1914
   (ग) सन् 1916 (घ) सन् 1918
4. भारत के प्राकृतिक प्रदेशों की एक नई योजना सन् 1944 में किसने प्रस्तुत की?
   (क) प्रो. बेकर (ख) डॉ. काजी सैयदउद्दीन
   (ग) प्रो. ओ. एच. के. केस्पेट (घ) प्रो. पी. सेन गुप्ता

1.3 भू–राजनीतिक जलवायु

पृथ्वी पर किसी देश की सीमा के निर्धारण के लिए विभिन्न कारक उत्तरदायी होते हैं। इन्हीं आधारों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

क्षेत्रीयकरण के एक मुख्य निर्धारक कारक के रूप में भू–राजनीति को माना जा सकता है। भू–राजनीति का विकास राजनीतिक भूगोल के समानांतर जर्मनी में हुआ था। जर्मन विद्वानों का मानना था कि ''भू–राजनीति राज्य की भौगोलिक आत्मा है।'' फ्रेंच भूगोलवेत्ताओं में से डिमेंजियोन (Demangeon) ने भू–राजनीति को प्रचार एवं उपदेश का राष्ट्रीय संस्थान कहा है। कुछ विज्ञान भू–राजनीति को नाजी जर्मनी की विस्तारवादी विचारधारा भी मानते हैं। भू–राजनीति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग रूडोल्फ जेलेन ने सन् 1899 में किया था। भू–राजनीति का उद्देश्य राज्यों के मध्य संबंध एवं उनकी परस्पर स्थिति के भौगोलिक आयामों के प्रभाव का अध्ययन करना है। भू–राजनीति के अनुसार, "राजनीतिक घटनाएं और उनके परिणाम उस स्थान के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखते हैं जिसमें वे घटित होते हैं।" राजनीतिक शक्ति, वास्तव में सीधे भौतिक स्थान से जुड़ी हुई है जो इसके संकायों के दायरे को निर्धारित करती है।

क्षेत्रीयकरण के निर्धारण में किसी भी प्रदेश का भूगोल व रणनीति महत्वपूर्ण कारक हैं।

भूगोल के अंतर्गत किसी प्रदेश की स्थिति, संसाधन, विकास का स्तर, अर्थव्यवस्था का स्तर, मानव संसाधन की प्रतिस्पर्धात्मकता, विज्ञान व तकनीक, सूचना व संचार, समीप के प्रदेशों का विकास व संबंध आते हैं।

प्रादेशिक रणनीति में विकास के उद्देश्य, संसाधनों की उपलब्धता व प्रयोग, वित्त का वितरण, सामाजिक व राजनीतिक संबंध, प्रशासनिक व्यवस्था, नीतियां व कार्यक्रम, सरकारों के मध्य संबंध आदि का विश्लेषण किया जाता है।

टिप्पणी

1.3.1 जलवायु संबंधी आधार

जलवायु एक प्रमुख प्राकृतिक तत्व है जिसका प्रभाव प्राकृतिक पर्यावरण पर अत्यधिक होता है। जलवायु का प्रभाव न केवल अन्य प्राकृतिक तत्वों जैसे प्राकृतिक वनस्पति मृदा आदि पर पड़ता है, वरन यह मानवीय अधिवास पर भी प्रभाव डालती है।

जलवायु एक लंबी समयावधि में मौसम की अवस्थाओं तथा विविधताओं का योग होती है अर्थात् यह लंबे समय की मौसमी दशाओं का औसत होता है। जलवायु के अंतर्गत तापमान, वायुभार, हवाएं, वर्षा, आर्द्रता आदि को सम्मिलित किया जाता है। भारत के एक विशाल देश होने के कारण यहां जलवायु की विविधता देखी जाती है। भारत की जलवायु के संबंध में ब्लैनफोर्ड का यह कथन उल्लेखनीय है, 'हम भारत की जलवायुओं के विषय में तो कह सकते हैं, लेकिन जलवायु के विषय में नहीं', क्योंकि विश्व में भारत से अधिक जलवायवीय विषमताऐं नहीं मिलती है। किंतु इन विविधताओं में भी एकता मिलती है और यहां की जलवायु को 'मानसूनी' अथवा 'उष्ण मानसूनी' (Tropical Mansoon Climate) कहा जाता है।

जलवायु के विभिन्न तत्व क्षेत्रीयकरण का आधार बनते हैं इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

अक्षांशीय स्थिति

भारत की अक्षांशीय स्थिति 8°4' उत्तर से 37°6' उत्तर आक्षांश के मध्य है तथा कर्क रेखा इसके मध्य से गुजरती है। अक्षांशीय स्थिति के कारण दक्षिणी भारत उष्ण कटिबंध में है। किंतु सामान्य रूप से यहां की जलवायु उपोष्ण है। इतने बड़े अक्षांशीय विस्तार के कारण विभिन्न स्थानों की जलवायु में विभिन्नता मिलती है।

समुद्र तल से ऊंचाई– इसका तापमान से विपरीत संबंध है। सामान्यतः प्रति 165 मीटर की ऊंचाई पर 1° से तापमान कम होता जाता है। इसी कारण हिमालय की उच्च ढालों पर हमेशा बर्फ जमी रहती है। एक ही आक्षांश पर स्थिति होते हुए भी ऊंचाई की भिन्नता के कारण ग्रीष्मकालीन औसत तापमान मसूरी में 24° से., देहरादून में 32° से. तथा अंबाला में 40° से. रहता है।

समुद्र से दूरी– समुद्र का नम व समप्रभाव पड़ता है। इसलिए समुद्र तट पर स्थित नगरों में तापांतर अति न्यून रहता है तथा जलवायु नम रहती है। जैसे–जैसे समुद्र से दूरी बढ़ती जाती है, वैसे–वैसे विषमता अर्थात तापांतर एवं शुष्कता बढ़ती जाती है। पश्चिमी तटीय क्षेत्रों में वर्षा का वार्षिक औसत 200 सेंटीमीटर से अधिक रहता है, जबकि जैसलमेर में यह औसत घटते–घटते 5 सेंटीमीटर रह जाता है।

भूमध्य रेखा से दूरी– यह तापमान को प्रभावित करने वाला आधारभूत कारक है। बढ़ते हुए अक्षांश के साथ तापमान में कमी आती जाती है, क्योंकि सूर्य की किरणों का तिरछापन बढ़ता जाता है। इससे सौर्यताप की मात्रा प्रभावित होती है। इसी कारण हिमालय की दक्षिणी ढालों पर हिमरेखा की ऊंचाई अधिक है किंतु तिब्बत की

ओर अर्थात उत्तरी ढालों पर इसकी ऊंचाई कम है। कर्क रेखा भारत के मध्य भाग से गुजरती है। अतः उत्तरी भारत शीतोष्ण प्रदेश में तथा दक्षिणी भारत उष्ण प्रदेश में सम्मिलित किया जाता है।

टिप्पणी

स्थलाकृति– धरातल अथवा उच्चावच विशेषकर पर्वतों का जलवायु पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। स्थलाकृति वहां के तापमान, वायुमंडलीय दाब, पवनों की दिशा तथा वर्षा की मात्रा को प्रभावित करती है। भारत के उत्तर में स्थित हिमालय की पर्वत श्रेणियां भारतीय जलवायु को नियंत्रित करती हैं। एक ओर ये दक्षिणी–पूर्वी मानसूनी हवाओं को रोककर वर्षा में सहायक होती हैं तो दूसरी ओर शीत ऋतु में साइबेरिया की ओर से आने वाली शीत हवाओं को भारत में प्रवेश करने से रोकती हैं। मेघालय पठार की कीपनुमा आकृति मानसूनी हवाओं द्वारा सर्वाधिक वर्षा में सहायक होती है। पश्चिमी घाट के कारण भारत का पश्चिमी तट पर्याप्त वर्षा प्राप्त करता है, दूसरी ओर इसका पूर्वी भाग वृष्टि छाया प्रदेश में होने के कारण कम वर्षा प्राप्त करता है। अरावली पर्वत मानसूनी हवाओं की दिशा के समानांतर होने के कारण वर्षा में सहायक नहीं है। इसी कारण राजस्थान का विस्तृत भाग कम वर्षा प्राप्त करता है तथा मरुस्थली है।

पवनों की दिशा– पवनें अपनी उत्पत्ति के स्थान एवं मार्ग के गुण लाती हैं। ग्रीष्मकालीन मानसून हिंद महासागर से चलने के कारण उष्ण व आद्र होते हैं, अतः वर्षा करते हैं। शरदकालीन मानसून स्थलों व शीत क्षेत्रों से चलते हैं, अतः सामान्यतः शीत व शुष्कता लाते हैं।

ऊपरी वायु संचरण– नवीनतम शोध के अनुसार उच्च स्तरीय वायु संचरण का मानसून से गहरा संबंध है। भारत की जलवायु मानसूनी होने से काफी हद तक क्षोभमंडल की गतिविधियों से प्रभावित होती है। मानसून की कालिक व मात्रात्मक अनिश्चितता भी उच्चस्तरीय वायु संचरण की दशाओं पर निर्भर करती है। ऊपरी वायु तंत्र में बहने वाली जेट स्ट्रीम का प्रभाव निम्न प्रकार से भारतीय जलवायु पर पड़ता है जो अंततः प्रादेशीकरण को निर्धारित करता है।

(i) **पश्चिमी जेट स्ट्रीम**– शीत ऋतु में पश्चिमी जेट स्ट्रीम समुद्र तल से लगभग 8 किलोमीटर की ऊंचाई पर तीव्र गति से समशीतोष्ण कटिबंध के ऊपर चलती है। हिमालय के कारण यह दो भागों में विभक्त हो जाती है। मौसम वैज्ञानिक भारत की शीतकालीन मौसमी दशाओं को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(ii) **पूर्वी जेट स्ट्रीम**– ग्रीष्म काल में पूर्वी जेट स्ट्रीम चलती है जो तिब्बत के पठार के गर्म होने से उत्पन्न होती है। यह दक्षिणी–पश्चिमी मानसूनी हवाओं के अचानक आने में सहायक होती है। पश्चिमी विक्षोभ तथा उष्णकटिबंधीय चक्रवात शीतकाल में उत्पन्न होने वाला पश्चिमी चक्रवातीय विक्षोभ भूमध्यसागरीय क्षेत्र से आने वाले पश्चिमी प्रवाह के कारण होता है। ये प्रायः भारत के उत्तरी एवं उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्रों को प्रभावित करते हैं। शीतकाल में उत्तरी भारत में होने वाली वर्षा इन्हीं के कारण होती है।

अल–नीनो प्रभाव– भारत की जलवायु पर अल–नीनो का भी प्रभाव होता है। अल–नीनो एक संकरी गर्म समुद्री धारा है जो कभी–कभी दक्षिणी अमेरिका के पेरू तट से कुछ दूरी पर दिसंबर में प्रभावित होती है। इसके फलस्वरुप उष्णकटिबंधीय प्रशांत

टिप्पणी

महासागरीय जल के गर्म होने से भूमंडलीय दाब एवं पवनों से हिंद महासागर में मानसूनी हवाएं भी प्रभावित होती हैं, जिनका प्रभाव भारत की जलवायु पर होता है।

'मानसून' शब्द अरबी भाषा के मौसिम (Mausim) शब्द से बना है जिसका अर्थ है मौसम या ऋतु। मानसूनी पवनें वस्तुतः मौसमी हवाएं ही हैं। ये वर्ष के छह माह स्थल की ओर से तथा छह माह जल की ओर से चलती हैं। भारत वर्ष भर मानसूनी हवाओं के प्रभाव में रहता है। अतः यहां की जलवायु इन हवाओं के द्वारा निर्धारित होती है। भारतीय मानसून का क्रमशः उत्तर की ओर अग्रसर होना एक विशिष्ट पहलू है जो यहां के वर्षा के वितरण को भी निर्धारित करता है।

इन सभी कारणों का प्रभाव जलवायु के तीन मुख्य सूचकांकों तापमान, वायुदाब एवं पवन व वर्षा के वितरण पर पड़ता है जिनके आधार पर भारत में एक वर्ष में चार ऋतुओ को पहचाना जा सकता है।

1. शीत ऋतु (मध्य दिसंबर से मध्य मार्च)
2. ग्रीष्म ऋतु (मध्य मार्च से मई)
3. वर्षा ऋतु (जून से सितंबर)
4. शरद ऋतु (अक्टूबर से मध्य दिसंबर)

तापमान– यह एक भौतिक मात्रा है जिससे गर्म व ठंडे का पता चलता है। यह सभी पदार्थों में उपस्थित तापीय ऊर्जा की अभिव्यक्ति है। शीत ऋतु में भारत में तापमान उत्तरी भारत से दक्षिण की ओर बढ़ता जाता है। उत्तरी भारत में औसत तापमान 8 डिग्री सेंटीग्रेड से 21 डिग्री सेंटीग्रेड तथा दक्षिणी भारत में औसत तापमान 21 डिग्री सेल्सियस से 26 डिग्री सेल्सियस तक रहता है। मार्च के पश्चात से ग्रीष्म ऋतु आरंभ हो जाती है तथा अप्रैल में प्रायद्वीपीय क्षेत्र में अधिकतम तापमान 40 डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुंच जाता है। संपूर्ण उत्तरी–पश्चिमी भारत में 45 डिग्री से 47 डिग्री सेल्सियस दिन के समय का तापमान रहता है। समुद्र तटीय प्रदेशों एवं पर्वतीय प्रदेशों में तापमान कम रहता है। वर्षा ऋतु के आरंभ के साथ जुलाई में तापमान गिरने लगता है। अक्टूबर से शरद ऋतु के आरंभ के साथ ही सूर्य धीरे–धीरे दक्षिणायन होने लगता है जिसके परिणामस्वरूप भारत में तापमान धीरे–धीरे कम होता जाता है। इस ऋतु में अधिकतम तापमान का औसत 30 डिग्री सेल्सियस से 35 डिग्री सेल्सियस के मध्य रहता है जो कि दिसंबर तक धीरे–धीरे घटकर तटीय क्षेत्रों में एवं दक्षिणी भारत में औसत रूप से 25 डिग्री सेल्सियस तथा उत्तरी भारत में 5 डिग्री सेल्सियस तक गिर जाता है। उच्च पर्वतीय क्षेत्र में तापमान हिमांक से नीचे रहता है।

वायुदाब एवं पवनें– वायुमंडलीय दाब एवं पवनें पृथ्वी के मौसम व जलवायु के निर्धारण के महत्वपूर्ण कारक हैं। ये दोनों कारक एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। पवनों की उपस्थिति वायुदाब की क्षैतिज व लंबवत विभिन्नता के कारण मिलती है। हवाएं सामान्यतया उच्च दाब के क्षेत्रों से निम्न दाब के क्षेत्रों की ओर वातावरण में दाब क्षेत्रों की ओर चलती हैं। वातावरण में दाब एक पृथ्वी के दिये हुए क्षेत्र के ऊपर उपस्थित वायु के वजन के बराबर होता है। वायुदाब को सामान्यतः मिलीबार में मापा जाता है।

टिप्पणी

भारत में शीतकाल में तापमान कम होने के कारण स्थानीय क्षेत्र में उच्च दाब विकसित हो जाता है जो सागर की ओर घटता जाता है। अतः भारत में इस ऋतु में पवनें स्थल से जल की ओर चलती हैं। इन्हें उत्तरी–पूर्वी मानसून के नाम से जाना जाता है। ग्रीष्म ऋतु में उच्च तापमान के कारण उत्तरी भारत में निम्न वायुदाब विकसित हो जाता है। यह न्यून वायुदाब चारों ओर से पवनों को आकर्षित करता है। अतः इस ऋतु में धूल भरी गर्म और शुष्क हवाएं चलती हैं जिन्हें लू कहते हैं। राजस्थान, हरियाणा तथा पंजाब में इन धूल भरी आंधियों का सर्वाधिक प्रभाव रहता है।

मई के अंत तक सूर्य, कर्क रेखा पर लंबवत चमकने लगता है। कम वायुदाब का केंद्र और भी सघन हो जाता है। अरब सागर के उत्तरी भाग में स्थित एक लघु निम्न वायुदाब का केंद्र समाप्त हो जाता है। इस समय दक्षिणी गोलार्ध की दक्षिणी–पूर्वी व्यापारिक पवनें भी विषुवत रेखा को पार कर भारत की ओर चल पड़ती हैं। विषुवत रेखा को पार करने पर ये पवनें फैरल के नियमानुसार दिशा परिवर्तन करके दक्षिणी–पश्चिमी मानसून के नाम से भारत के पश्चिमी तट पर पहुंचती हैं एवं वर्षा करती हैं।

ग्रीष्मकालीन मानसून की उत्पत्ति संबंधी आधुनिक विचार के अनुसार यह उत्पत्ति क्षोभमंडल में पूर्वी जेट स्ट्रीम के चलने से होती है। जून के आरंभ में मानसून प्रस्फोट अपनी वायुमंडलीय दशाओं पर आधारित होता है। दक्षिणी–पश्चिमी मानसून द्वारा भारत में लगभग 90 प्रतिशत वर्षा होती है।

शरद ऋतु में सूर्य के दक्षिणायन होने से उत्तर–पश्चिमी भारत में बना निम्न वायुदाब का केंद्र समाप्त होने लगता है। अक्टूबर में यह निम्न दाब क्षेत्र बंगाल की खाड़ी की तरफ बढ़ता जाता है। अतः मानसून लौटना प्रारंभ होता है।

वर्षा– वायु में मिला जलवाष्प शीतल पदार्थों के संपर्क में आने से संघनन के कारण ओसांक तक पहुंचता है। जब वायु का ताप ओसांक के नीचे गिर जाता है तब जलवाष्प पानी की बूंदों अथवा ओलों के रूप में धरातल पर गिरने लगता है। इसी को वर्षा कहते हैं। किसी भी स्थान पर किसी निश्चित समय में बरसे हुए जल कणों तथा हिम कणों से प्राप्त जल की मात्रा को वहां की वर्षा की माप कहते हैं।

भारत में सामान्यतया शीत ऋतु शुष्क होती है और इस ऋतु में बहुत कम वर्षा होती है। मध्य मार्च से मई तक ग्रीष्म ऋतु भी शुष्क होती है तथा सापेक्षिक आर्द्रता 30 प्रतिशत से भी कम होती है किंतु इस ऋतु में कहीं–कहीं अल्प वर्षा जैसे असम, मालाबार तट पर, उड़ीसा, पंजाब, बिहार व उत्तर प्रदेश में होती है। भारत में वर्षा ऋतु का समय जून से सितंबर तक रहता है। इस ऋतु में दक्षिणी–पश्चिमी मानसून सक्रिय रहता है और संपूर्ण भारत में वर्षा होती है। अक्टूबर के प्रारंभ में उत्तरी पश्चिमी भारत में वर्षा प्रायः समाप्त हो जाती है, किंतु उत्तरी–पूर्वी भारत में वर्षा होती है। यहां 15 अक्टूबर के बाद वर्षा समाप्त हो जाती है किंतु इस समय कोरोमंडल तट पर वर्षा होती है। भारत में वर्षा केवल वर्षा काल तक ही सीमित नहीं है अपितु विभिन्न समय पर भी वर्षा होती रहती है।

इन कारकों के आधार पर विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर भारत के जलवायु प्रदेशों का सीमांकन किया है।

एच. ई. ब्लैंड फोर्ड (H.E. Blandford.1889)

टिप्पणी

डब्ल्यू. कोपेन (W- Koppen, 1918, 1931, 1936)

सी. डब्ल्यू. थॉर्नवेट (C.W. Thornthwate,1931, 1933, 1948)

एल. डी. स्टैंप तथा सी. डब्लू. केण्ड्रयू (L.D. Stamp and C.W. Kendrew, 1953)

एस. पी. चटर्जी (S.P. Chatterji, 1953)

जी. टी. ट्रेवर्था (G.T. Trewartha, 1954)

वी. पी. सुब्रमण्यम (V.P. Subramanyam, 1956)

बी. एल. सी. जॉनसन (B.L.C. Johnson, 1969)

के. एल. राव (K.L. Rao, 1971)

आर. एल. सिंह (R.L. Singh, 1971)

1.3.2 कृषि जलवायु आधार

कृषि जलवायु प्रदेश प्रमुख जलवायु के संदर्भ में एक भूमि की इकाई है जो एक निश्चित सीमा के अंदर फसलों की किस्मों एवं जोतने वाले के लिए उपयुक्त होती है। इसका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण की स्थिति को प्रभावित किए बिना भोजन, फाइबर, चारा और लकड़ी से मिलने वाले ईंधन की उपलब्धता को बनाए रखना एवं इन क्षेत्रीय संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन करना है। एक कृषि जलवायु प्रदेश मुख्यतः मिट्टी के प्रकार, फसल की उपज, वर्षा, तापमान और पानी की उपलब्धता, वनस्पति के प्रकार को प्रभावित करने वाले कारकों के आधार पर सीमांकित किया जाता है। 329 लाख हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र के साथ देश कृषि जलवायु स्थितियों की एक बड़ी जटिल संख्या को प्रस्तुत करता है। मिट्टी, जलवायु, भौगोलिक और प्राकृतिक वनस्पति के संबंध में वैज्ञानिक आधार पर वृहद स्तरीय योजना निर्माण के लिए प्रमुख कृषि जलवायु प्रदेश को सीमांकित करने के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं।

ये इस प्रकार हैं–

- योजना आयोग द्वारा निर्धारित कृषि जलवायु क्षेत्र।
- राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान परियोजना के तहत कृषि जलवायु क्षेत्र।
- मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग योजना राष्ट्रीय ब्यूरो द्वारा कृषि जलवायु प्रदेश।

1.3.3 भौतिक आधार

पृथ्वी का भौतिक वातावरण क्षेत्रीयकरण का मुख्य आधार है। इसमें विभिन्न कारक जैसे स्थलाकृति, संरचनात्मक विविधता, जलवायु, अपवाह तंत्र, मृदा व वनस्पति विविधता आते हैं।

स्थलाकृति– यह ग्रह विज्ञान की वह शाखा है, जिसके अंतर्गत पृथ्वी अथवा अन्य ग्रहों, क्षुद्रग्रहों और उपग्रहों की सतह के आकार एवं आकृतियों के बारे में अध्ययन किया जाता है। पृथ्वी की सतह की स्थलाकृति को वर्गीकृत करते हुए सेलिसबरी नामक लेखक ने अपनी पुस्तक 'Physiography' में इसे तीन भागों में विभाजित किया है।

टिप्पणी

- प्रथम कोटि की स्थलाकृति के अंतर्गत महासागरों और महाद्वीपों को सम्मिलित किया जाता है।
- दूसरी कोटि की स्थलाकृति में मैदान, पर्वत व पठार को सम्मिलित किया जाता है।
- तीसरी कोटि की स्थलाकृति में अपक्षय यानी की अनाच्छादन, निक्षेपण और अपरदन की शक्तियों द्वारा बनी हुई नदी घाटियां, डेल्टा, हिमोढ़ को शामिल किया जाता है।

भारत में अनेक प्रकार की स्थलाकृतियां हैं। उत्तर की ओर गगनचुंबी हिमालय पर्वत, इसके नीचे तटीय क्षेत्र में ब्रह्मपुत्र–गंगा–सतलुज का विस्तृत मैदान, दक्षिण का पठार व तटीय प्रदेश। इनके आधार पर भारत का प्रादेशीकरण किया गया है।

संरचनात्मक विविधता प्रादेशीकरण का एक मुख्य निर्धारक है। संरचना की दृष्टि से पूरे विश्व में भारत कुछ गिने चुने देशों में से एक है, जहां सभी युगों की शैलें पाई जाती हैं। एक ओर दक्षिण का पठार विश्व के प्राचीनतम पठारों (प्राचीन विंडो – Old Mossifs) में से एक है। इसी प्रकार अरावली, सतपुड़ा, विंध्याचल आदि पर्वत श्रेणियां विश्व के प्राचीनतम पर्वतों में सम्मिलित की जाती हैं। उत्तरी सीमा पर विस्तृत विशाल हिमालय पर्वत विश्व के नवीन मोड़दार पर्वतीय क्रम के अंग हैं। विशाल गंगा–सतलुज का मैदान, नदियों के डेल्टा प्रदेश एवं बाढ़ के मैदान नवीनतम कांप मिट्टी से निर्मित हैं।

जलवायु– जलवायु भी प्रादेशीकरण का एक महत्वपूर्ण भौतिक आधार है। इसका प्रभाव प्राकृतिक पर्यावरण पर अत्यधिक होता है। जलवायु का प्रभाव न केवल अन्य प्राकृतिक तत्वों जैसे प्राकृतिक वनस्पति व मृदा आदि पर पड़ता है अपितु मानवीय क्रियाओं एवं उसके विविध स्वरूप अर्थात आवास, वस्त्र आदि पर भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होता है। कृषि, उद्योग, पशुपालन, परिवहन जैसी आर्थिक क्रियाएं जलवायु से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है। भारत एक विविध जलवायु वाला प्रदेश है। इसका क्षेत्र विस्तृत होने तथा अक्षांशीय विस्तार उच्चावच एवं सागरीय स्थिति आदि ने यहां की जलवायु में क्षेत्रीय विविधता को जन्म दिया है। यह विविधता यहां के तापमान एवं वर्षा में स्पष्टतः दृष्टिगत होती है। जलवायु की इसी विभिन्नता के आधार पर भारत को विभिन्न जलवायु प्रदेशों में विभाजित किया गया है।

अपवाह तंत्र– अपवाह तंत्र अर्थात नदियों का प्रारूप भौगोलिक पर्यावरण का अभिन्न अंग है। इसके अंतर्गत नदियों की मुख्यधारा, उप धाराएं तथा अन्य छोटी शाखाएं सम्मिलित की जाती हैं। अपवाह तंत्र का विकास क्रमिक रूप से होता है तथा इनमें भूगर्भिक हलचलों एवं अपरदन के फलस्वरुप भी परिवर्तन होता है। किसी भी क्षेत्र का अपवाह तंत्र वहां के भूमि विन्यास, चट्टानों की संरचना, विवर्तनिक क्रियाओं, प्रवाहित जल की मात्रा आदि पर निर्भर करता है। अपवाह तंत्र की विभिन्नता प्रादेशीकरण का मुख्य आधार है। भारत में नदियों का प्राचीन काल से विशेष महत्व रहा है क्योंकि इनके सहारे जीवन का विकास हुआ, ये सभ्यता का केंद्र रही हैं और इन्हें पवित्र माना जाता है। इनके अपवाह के आधार पर व जलीय उपलब्धता के आधार पर भी देश को विभिन्न प्रदेशों में बांटा गया है– जैसे

- उत्तरी भारत का अपवाह तंत्र
- प्रायद्वीपीय भारत का अपवाह तंत्र

- पूर्ववर्ती अपवाह तंत्र
- पश्चिमी अपवाह तंत्र

टिप्पणी

मृदा विविधता– मृदा भूमि की वह परत है, जो चट्टानों के विखंडन, विघटन और जीवांशों के सड़ने–गलने से मिलकर बनती है। यह पौधों को उगाने और बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

1.3.4 ऐतिहासिक आधार

क्षेत्रीयकरण में इतिहास का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इतिहास प्रादेशिक आर्थिक विकास से संबंधित पूर्व नीतियों को समझने में सहायक होता है। किसी भी स्थान के ऐतिहासिक विकास को समझने के लिए चार महत्वपूर्ण कारक होते हैं–

- व्यक्ति
- समाज
- स्थान
- समय

किसी भी स्थान का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, कूटनीतिक व बौद्धिक इतिहास प्रादेशीकरण के निर्धारण के बारे में एक आधार बनाता है। किसी भी स्थान की राजनीतिक उपलब्धियां और असफलताएं, नेतृत्व, महत्वपूर्ण घटनाएं, शांति संधियां, युद्ध, अंतर्राष्ट्रीय संबंध, लोग व उनकी जीवनशैली, खाने की आदतें, सामाजिक पृष्ठभूमि, आर्थिक इतिहास, लोगों के स्थानीय दर्शन का इतिहास प्रदेशों के सीमांकन की समझ को बढ़ाता है।

1.3.5 जनसांख्यिकीय आधार

जनसंख्या, प्रादेशीकरण का एक मुख्य आधार है। यह एक संदर्भ बिंदु भी है जिससे दूसरे तत्वों का अवलोकन किया जा सकता है। मानव पृथ्वी के संसाधनों का उत्पादन व उपभोग करता है इसीलिए यह जानना आवश्यक होता है कि एक देश में कितने लोग निवास करते हैं? वे कहां व कैसे रहते हैं? उनकी संख्याओं में वृद्धि क्यों हो रही है तथा उनकी कौन–कौन सी विशेषताएं हैं? भारतीय जनगणना हमारे देश की जनसंख्या से संबंधित जानकारी हमें प्रदान करती है।

जनसंख्या वृद्धि प्रादेशीकरण की विभिन्न योजनाओं में एक महत्वपूर्ण कारक मानी गई है। जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन की तीन मुख्य प्रक्रियाएं हैं– जन्म दर, मृत्यु दर एवं प्रवास।

जनसंख्या वृद्धि का पहला घटक है जन्म दर– एक वर्ष में प्रति हजार व्यक्तियों में जितने जीवित बच्चों का जन्म होता है, उसे जन्म दर कहते हैं। यह वृद्धि का एक मुख्य घटक है क्योंकि भारत में अधिकांशतया जन्म दर मृत्यु दर से अधिक रही है। जन्म दर व मृत्यु दर के बीच का अंतर जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि है।

जनसंख्या वृद्धि का दूसरा घटक है मृत्यु दर– एक वर्ष में प्रति हजार व्यक्तियों में मरने वालों की संख्या को मृत्यु दर कहा जाता है। मृत्यु दर में तेजी से गिरावट भारत की जनसंख्या में वृद्धि की दर का मुख्य कारण है।

टिप्पणी

जनसंख्या वृद्धि का तीसरा घटक है प्रवास– लोगों के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में चले जाने को प्रवास कहते हैं। प्रवास आंतरिक (देश के भीतर) या अंतर्राष्ट्रीय (देशों के बीच) हो सकता है।

आंतरिक प्रवास जनसंख्या के आकार में कोई परिवर्तन नहीं लाता है। लेकिन यह एक देश के भीतर जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करता है। जनसंख्या वितरण एवं उसके घटकों को परिवर्तित करने में प्रवास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

भारत में अधिकतर प्रवास ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों की ओर होता है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में 'अपकर्षण' (Push) कारक प्रभावी होते हैं। ये ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी एवं बेरोजगारी की प्रतिकूल अवस्थाएं हैं तथा नगर का अभिकर्षण (Pull) प्रभाव रोजगार में वृद्धि एवं अच्छे जीवन स्तर को दर्शाता है। प्रवास जनसंख्या परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह केवल जनसंख्या के आकार को ही प्रभावित नहीं करता वरन् उम्र व लिंग के दृष्टिकोण से नगरीय एवं ग्रामीण जनसंख्या की संरचना को भी परिवर्तित करता है। भारत में ग्रामीण–नगरीय प्रवास के कारण शहरों तथा नगरों की जनसंख्या में नियमित वृद्धि हुई है।

जनसंख्या की विशेषताएं

जनसंख्या के गुण या विशेषताएं जैसे आयु संरचना, लिंग अनुपात, साक्षरता दर, व्यावसायिक संरचना तथा स्वास्थ्य भी क्षेत्रीयकरण को प्रभावित करते हैं।

आयु संरचना– किसी देश में, जनसंख्या की आयु संरचना वहां के विभिन्न आयु समूहों के लोगों की संख्या को बताती है। किसी भी राष्ट्र की आबादी को तीन वर्गों में बांटा जाता है।

1. बच्चे (सामान्यतः 15 वर्ष से कम): ये आर्थिक रूप से उत्पादनशील नहीं होते।
2. वयस्क (15 से 19 वर्ष): ये आर्थिक रूप से उत्पादनशील व जैविक रूप से प्रजननशील होते हैं।
3. वृद्ध (59 वर्ष से अधिक): ये आर्थिक रूप से उत्पादनशील या अवकाश प्राप्त हो सकते हैं।

बच्चों व वृद्धों का प्रतिशत जनसंख्या के आश्रित अनुपात को प्रभावित करता है।

लिंग अनुपात : प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या को लिंग अनुपात कहा जाता है। यह जानकारी किसी दिये गये समय में पुरुषों व महिलाओं के बीच समानता की सीमा मापने के लिए एक महत्वपूर्ण सामाजिक सूचक है।

साक्षरता : साक्षरता किसी जनसंख्या का बहुत ही महत्वपूर्ण गुण है। स्पष्टतः केवल एक शिक्षित और जागरूक नागरिक ही बुद्धिमतापूर्ण निर्णय ले सकता है तथा शोध एवं विकास के कार्य कर सकता है।

व्यावसायिक संरचना : आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत, विकास का एक महत्वपूर्ण सूचक होता है। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों के अनुसार किये गये जनसंख्या के वितरण को व्यावसायिक संरचना कहा जाता है। किसी भी देश में विभिन्न व्यवसायों को करने वाले भिन्न–भिन्न लोग होते हैं। व्यवसायों को सामान्यतया प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।

टिप्पणी

स्वास्थ्य : स्वास्थ्य जनसंख्या की संरचना का एक महत्वपूर्ण घटक है जो कि विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। भारत में मृत्यु दर जो 1951 में प्रति हजार 25 प्रतिशत थी। 2011 में घटकर प्रति हजार 7.2 प्रतिशत रह गयी जो स्वास्थ्य में सुधार का सूचक है। यह सुधार बहुत से कारकों जैसे जन स्वास्थ्य, संक्रामक बीमारियों से बचाव व रोगों के इलाज में आधुनिक तकनीकों के प्रयोग के परिणामस्वरूप हुआ है।

1.3.6 क्षेत्रीयकरण के सामाजिक–आर्थिक आधार

सामाजिक आधारों में प्रजातीय स्वरूप, भाषा, धर्म, जातियां व अनुसूचित जनजातियां, मानव अधिवास, ग्रामीण व नगरीय तथा आर्थिक आधारों में आर्थिक गतिविधियां जैसे प्राथमिक, द्वितीयक व तृतीयक सेवा क्षेत्र, संसाधन उपलब्धता व विकास के स्तर को प्रमुखतः क्षेत्रीयकरण के आधार के रूप में देखा जा सकता है।

सामाजिक कारक

क्षेत्रीयकरण के सामाजिक आयाम को निम्न प्रकार से समझाया गया है–

प्रजातीय संगठन : भारत का प्रजातीय स्वरूप विविधता से युक्त है क्योंकि यहां प्राचीनकाल से विभिन्न प्रजातियों के लोग आते रहे और कालान्तर में यहां के निवासी बन गये। संक्षेप में भारत की प्रजातीय विशिष्टता यह है कि इसमें विविधता है किंतु निरंतर संपर्क, एकरूपता तथा अंतः मिश्रण ने एक व्यापक एकरूपता को जन्म दिया है। वास्तव में भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक भूगोल में अभिकेन्द्रीय एवं अपकेन्द्रीय बलों के मध्य एक सहजीवी संबंध दिखाई देता है जो यहां के प्रजातीय स्वरूप में भी परिलक्षित होता है।

भारतीय प्रजातियों का अनेक मानव विद्वानों ने वर्गीकरण किया है इनमें रिशले (Rishley), हैडन (Haddan), इक्स्टैड (Eickstedt) तथा गुहा उल्लेखनीय हैं। रिशले ने भारतीय प्रजातियों को सात वर्गों में विभक्त किया है। ये हैं–

1. इण्डो आर्यन
2. द्रविड़ियन
3. मंगोलाइड
4. आर्य–द्रविड़ियन
5. मंगोल–द्रविड़ियन
6. साइथो–द्रविड़ियन
7. तुर्की–इरानियन

हैडन ने प्राकृतिक विभागों के आधार पर प्रजातियों का वर्णन किया। उन्होंने दक्षिणी पठार, सिंधु–गंगा मैदान और हिमालय क्षेत्र की प्रजातियों का वर्णन इस प्रकार किया–

1. दक्षिण पठार की प्रजातियां
   (i) नीग्रीटो
   (ii) पूर्व द्रविड़ियन

(iii) द्रविड़

(iv) पश्चिमी लघु सिर वाली जाति

(v) दक्षिण लघु कापालिक जाति

2. सिंधु–गंगा मैदान की प्रजातियां

(i) इण्डो आर्यन

(ii) दीर्घ शिरस्त वाली प्रजातियां

3. हिमालय क्षेत्र की प्रजातियां – इसमें मंगोलॉयड प्रजाति की प्रधानता है।

टिप्पणी

बी.एस. गुहा का वर्गीकरणः भारतीय प्रजातियों का बी.एस. गुहा का वर्गीकरण विशेष है जिसे उन्होंने 1944 में प्रस्तुत किया, जो 'Racial Elements of Population' के नाम से प्रकाशित हुआ। गुहा ने भारतीय प्रजातियों को 6 जाति समूहों तथा उनके उपभेदों में विभक्त किया जो निम्नांकित हैं–

गुहा के अनुसार भारत की प्रजातियों का वितरण

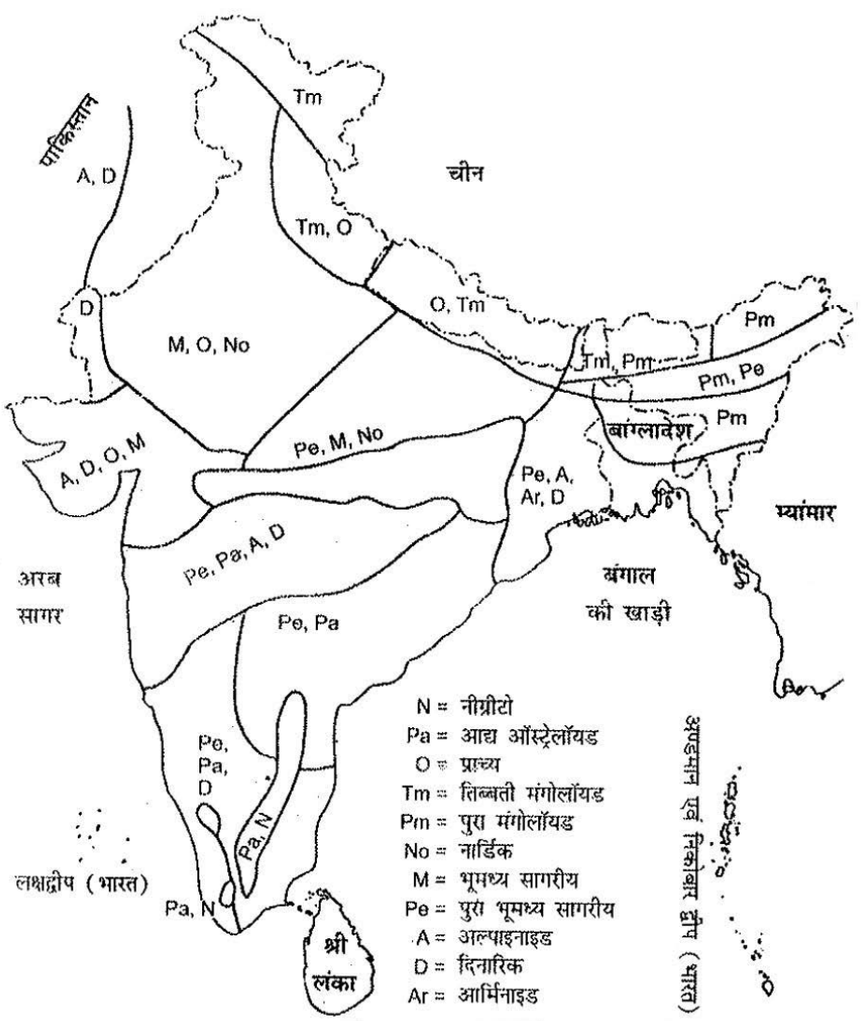

टिप्पणी

1. नीग्रीटो वर्ग (Negreto)
2. आद्य–ऑस्ट्रेलॉयड (Prato Australoid)
3. मंगोलॉयड (Mangoloid)
   (i) पुरा मंगोलॉयड (Palate Mangoloid)
   (ii) तिब्बती मंगोलॉयड (Tibeto Mangoloid)
4. भूमध्य सागरीय निवासी (Mediterranean)
   (i) पुरा–भूमध्य सागरीय निवासी (Palae Mediterranean)
   (ii) भूमध्य सागरीय निवासी (Mediterranean)
   (iii) भूमध्य सागरीय निवासियों के प्राच्य उपभेद
5. चौड़े सिर वाले पाश्चात्य अथवा लघु शीर्ष (Western Brachycephals)
   (i) अल्पाइन निवासी (Alpinoid)
   (ii) डिनैरिक (Dinaric)
   (iii) आर्मेनॉयड (Armenoid)

भाषा– भाषा व्यापक स्तर पर अभिव्यक्ति का एक माध्यम है तथा सांस्कृतिक तत्वों का एक प्रमुख घटक है जो समुदायों अथवा समूहों को एक दूसरे से संयुक्त करता है। भाषा बोली (Dialect) का ही विकसित रूप है। भारत में अनेक भाषाएं हैं। इसी कारण यहां 'भाषागत बहुलवाद (Lingerist Plarilism) देखने को मिलता है किंतु इनमें एक अंतर्निहित समानता भी दृष्टिगत होती है। यहां तक एक भाषा का दूसरी से कुछ समन्वय भी दृष्टिगत होता है। भारत का भाषा सर्वेक्षण जो जॉर्ज अब्राहम गेरीसन द्वारा 19वीं शताब्दी के अंत में किया गया था, के अनुसार भारत में 179 भाषाएं और 544 बोलियां प्रचलित हैं। 1961 की जनगणना में 187 भाषाओं को पहचाना गया किंतु इनमें से 94 भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 10,000 या इससे कम थी। वर्तमान में भारतीय संविधान के आठवें अनुच्छेद में अंग्रेजी के अतिरिक्त 22 भाषाओं को वर्णित किया गया है।

भारत के संविधान के अनुसार भारत की भाषाएं

1. कश्मीरी	2. पंजाबी	3. हिंदी	4. उर्दू
5. बांग्ला	6. असमिया	7. गुजराती	8. मराठी
9. कन्नड़	10. तमिल	11. तेलुगू	12. मलयालम
13. सिंधी	14. संस्कृत	15. उड़िया	16. नेपाली
17. कोंकणी	18. मणिपुरी	19. डोगरी	20. बोड़ो
21. मैथिली	22. संथाली।		

टिप्पणी

भारत में प्रमुख भाषाओं के बोलने वालों का प्रतिशत

भाषा	प्रतिशत	भाषा	प्रतिशत
हिंदी	39.85	उड़िया	3.32
बांग्ला	8.22	पंजाबी	2.76
तेलुगू	7.80	असमी	1.55
मराठी	7.38	सिंधी	0.25
तमिल	6.26	नेपाली	0.25
उर्दू	5.13	कोंकणी	0.21
गुजराती	4.81	मणिपुरी	0.51
कन्नड़	3.87	कश्मीरी	0.01
मलयालम	3.59	संस्कृत	0.01

भारत के भाषाई प्रदेश

भाषाई प्रदेश	राजनीतिक प्रदेश
1. कश्मीरी	जम्मू एवं कश्मीर
2. पंजाबी	पंजाब
3. हिंदी/उर्दू	उत्तर प्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान, झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड
4. बांग्ला	पं. बांगल, अंडमान–निकोबार
5. असमी	असम तथा उत्तरी–पूर्वी क्षेत्र के अन्य राज्य
6. उड़िया	उड़ीसा
7. गुजराती	गुजरात
8. मराठी	महाराष्ट्र, गोवा
9. कन्नड़	कर्नाटक
10. तेलुगू	आन्ध्र प्रदेश
11. तमिल	तमिलनाडु, पुडूचेरी
12. मलयालम	केरल, लक्षद्वीप

भाषा, भारत में क्षेत्रीयकरण का मुख्य आधार रही है। पंजाब, हरियाणा, असम, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों के सीमांकन का यह मुख्य आधार है।

धर्म– धर्म आस्था का विषय है जिसे व्यक्ति समुदाय अथवा सामाजिक जीवन में दर्शन के रूप में अपनाया जाता है। समान धर्म के अनुयायियों में एकात्मकता होती है जो उनकी धर्म में आस्था, विश्वास की उपज होती है।

टिप्पणी

भारत सदियों से धर्मावलम्बी देश रहा है। निम्न तालिका में भारत के विभिन्न धर्मावलम्बियों की संख्या दी गयी है।

भारत की धार्मिक जनसंख्या (2001 और 2011)

धर्म	2001		2011	
	कुल संख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत	कुल संख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
हिंदू	82.75 करोड़	80.4	96.6 करोड़	79.8
इस्लाम	13.8 करोड़	13.4	17.22 करोड़	14.2
ईसाई	2.4 करोड़	2.3	2.78 करोड़	2.3
सिख	1.92 करोड़	1.8	2.08 करोड़	1.7
बौद्ध	79 लाख	0.7	84 लाख	0.7
जैन	42.25 लाख	0.4	45 लाख	0.4
अन्य धर्म	66.4 लाख	0.6	79 लाख	0.7
धर्म दर्ज नहीं	7.27 लाख	0.07	29 लाख	0.2
योग	**102.86 करोड़**	**100**	**121.09 करोड़**	**100**

धर्म भी विभिन्न प्रदेशों के निर्धारण का मुख्य आधार है। यहां तक कि देशों की सीमाएं भी इस आधार पर निर्धारित हुई हैं। भारत व पाकिस्तान इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

सांस्कृतिक प्रदेश– भारत के सांस्कृतिक प्रदेशों का निर्धारण जे.ई. स्वाटर्जबर्ग (1967) ने धर्म, भाषा, प्रजातीय विशेषताओं, रीति–रिवाजों आदि को आधार बनाते हुए किया। उन्होंने भारत को निम्न सांस्कृतिक विभागों में विभक्त किया–

1. डार्डिक मुस्लिम प्रदेश
2. इंडिक सिख प्रदेश
3. इंडिक बौद्ध प्रदेश
4. पहाड़ी इंडिक प्रदेश
5. मुख्य इंडिक प्रदेश
6. पूर्वी इंडिक प्रदेश
7. पूर्वी जनजातीय प्रदेश
8. प्रायद्वीपीय जनजातीय प्रदेश
9. पश्चिमी इंडिक प्रदेश
10. द्रविड़ प्रदेश

टिप्पणी

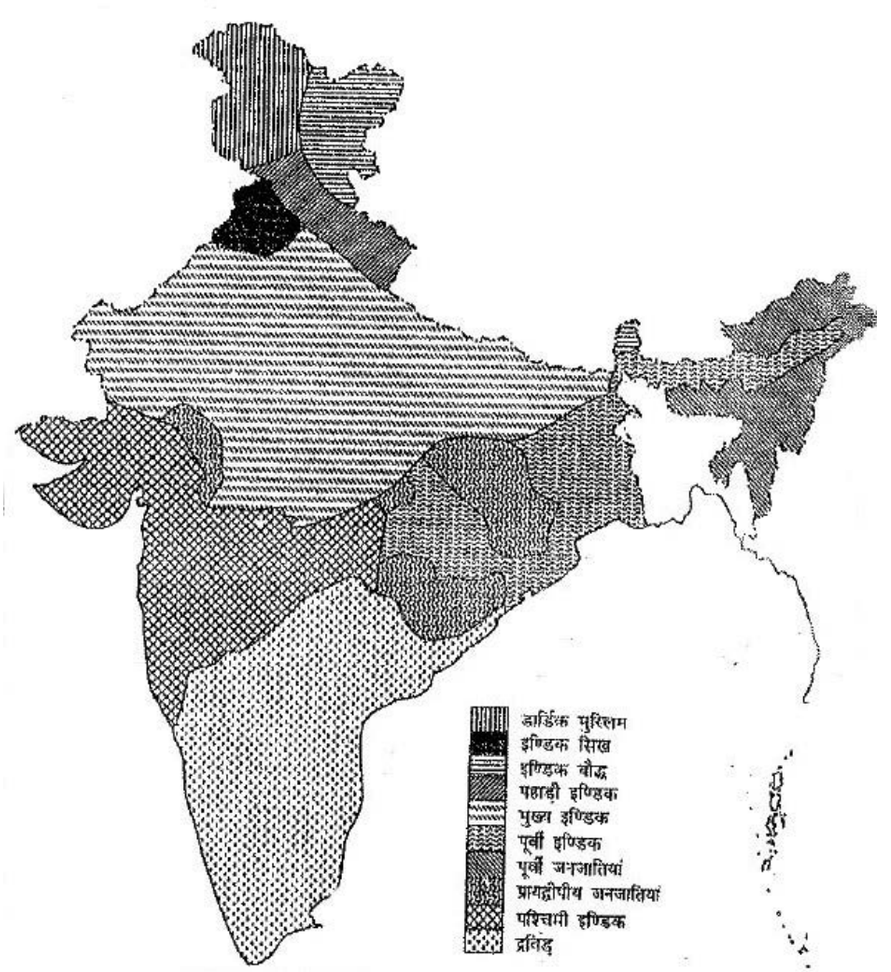

भारत के सांस्कृतिक प्रदेश

1.3.7 केस अध्ययन

यहां कुछ केस अध्ययन के माध्यम से प्रादेशिक नियोजन द्वारा वास्तविक समस्याओं के नियोजित समाधान पर विचार किया गया है। यह केस दौराला के औद्योगिक प्रदूषण प्रबंधन, झाबुवा जनजातीय प्रदेश के वाटरशेड मैनेजमेंट की सफलता व धारावी जो मुम्बई की सबसे बड़ी झुग्गी है, के अनियोजित विकास से संबंधित है।

दौराला : एक सार्वभौमिक कानून प्रदूषक द्वारा भुगतान (Palluter Pays) के तहत पर्यावरण को सुधारने, संरक्षण करने तथा मानव स्वास्थ्य की सुरक्षा जन भागीदारी से करने का एक बड़ा अच्छा उदाहरण उत्तर प्रदेश राज्य के मेरठ जिले के पास दौराला में देखने को मिला। दौराला में लगभग 12,000 व्यक्ति निवास करते हैं। यहां स्थित औद्योगिक इकाइयों के कारण यह गांव बहुत बुरी तरह प्रदूषित हो गया था। भूमिगत जल में असंशोधित जल के जाने के कारण कई धात्विक पदार्थों से युक्त जल भूमिगत जल में मिल गया था। वर्ष 2003 में गांव के लोगों की मदद से एक गैर सरकारी संगठन जनहित फाउंडेशन ने सरकारी मदद से पारिस्थितिकी के सुधार का एक मॉडल तैयार किया। इस गैर सरकारी संगठन ने घर–घर जाकर सर्वेक्षण किया व रिपोर्ट तैयार की।

टिप्पणी

इसके अनुसार पिछले पांच वर्षों में 192 लोगों की संदूषित जल के कारण मृत्यु हो चुकी थी। इस रिपोर्ट के बाद गैर सरकारी संगठन, सरकार व उद्योगपति यहां की पारिस्थितिकी को बचाने के लिए प्रयासरत हो गए। ओवरहैड टैंक की क्षमता को बढ़ाया गया, समुदाय को पेय जल प्रदान करने के लिए 800 मीटर लंबी अतिरिक्त पाइपलाइन डाली गई। गाद से भरे तालाब को बंद कर दिया गया जिससे औद्योगिक कचरे से भरा गाद और जल जमीन में रिस कर एक्वाकायर तक न पहुंच सके। वर्षा जल संचयन के लिए स्थान बनाया गया जिससे प्रदूषित भूमिगल जल दूसरे जल के साथ मिश्रित होकर ठीक हो जाए। इसके साथ ही वनारोपण किया गया जिसके कारण संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र में सकारात्मक बदलाव देखा गया।

धारावी : धारावी मुम्बई की एक मुख्य झुग्गी है। यह पश्चिम माहिम और पूर्व सायन के बीच में है और यह 175 हैक्टेयर या 0.67 वर्गमील के क्षेत्र में है। क्षेत्र की कम वृद्धि वाली इमारत शैली और संकीर्ण संरचना धारावी को बहुत तंग और सीमित बनाती है। धारावी में पारंपरिक मिट्टी के बर्तनों और कपड़ा उद्योगों के अलावा मुंबई के अन्य हिस्सों से रिसाइकिल योग्य कचरे का प्रसंस्करण करने वाला एक बड़ा पुनर्चक्रण उद्योग है। धारावी में पुनर्चक्रण उद्योग से लगभग 50,000 लोग जुड़े हुए हैं। चूंकि पुनर्चक्रण यहां के प्रमुख उद्योगों में से है, यह क्षेत्र भारी प्रदूषण का एक स्रोत भी है।

धारावी दुनिया भर में माल निर्यात करता है। अक्सर इसमें चमड़े के उत्पाद, गहने, वस्त्र व कई अन्य सामान सम्मिलित हैं। धारावी के सामानों के बाजारों में संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और मध्य पूर्व के स्टोर शामिल हैं। कुल कारोबार यहां 35 अरब से 60 अरब के बीच होने का अनुमान है। यह अधिकांशतः अनौपचारिक अर्थव्यवस्था है। यह स्थान अनियंत्रित कूड़े, गंदे पानी से भरे गड्ढों, एक ही कमरे में रहने वाले 12 व अधिक सदस्यों, संकरे रास्तों के कारण पहचाना जाता है। धारावी समुद्र की एक भुजा के रूप में था, जिसमें मुम्बई के अमीर व्यक्तियों ने अवशिष्ट पदार्थ भर कर अनुसूचित जातियों व गरीब मुस्लिम कारीगरों की बस्ती के रूप में निर्मित कर दिया।

वर्ष 2004 से अधर में लटकी धारावी पुनर्विकास परियोजना को 2016 में राज्य की भाजपा सरकार ने गति देने की कोशिश की। इसके तहत 30 जनवरी, 2016 को निविदा की प्रक्रिया घोषित की गई थी। इसमें 16 बिल्डरों ने भाग भी लिया था। किंतु बिल्डरों की अधिक एफएसआई की मांग के कारण निविदा पास नहीं की गई। तब से कई बार तारीख बढ़ चुकी है।

झाबुवा (मध्य प्रदेश) : झाबुवा मध्य प्रदेश के सबसे पिछड़े जिलों में से एक है जहां जनजातीय लोगों विशेषकर भील जनजाति का निवास है। भूमि व वन संसाधनों के अवनयन के कारण ये लोग अधिकांशतः गरीब हैं। जल विभाजक प्रबंधन (Watershed Management) कार्यक्रम के कारण इस क्षेत्र में भूमि की दशा व मृदा की गुणवत्ता में महत्वपूर्ण सुधार देखा गया है। यह कार्यक्रम यहां कृषि व ग्रामीण विकास मंत्रालयों द्वारा चलाया गया। इस कार्यक्रम को वित्त ग्रामीण विकास मंत्रालय से मिला लिया गया व यह कार्यक्रम राजीव गांधी मिशन फॉर वाटरशेड मैनेजमेंट के अंतर्गत क्रियान्वित किया गया। इसके अंतर्गत झाबुवा जिले के 20 प्रतिशत क्षेत्र का सुधार किया गया।

इस जिले का पेटलावाड ब्लॉक जो जिले के उत्तरी भाग में स्थित है। सरकार, गैर सरकारी संगठनों और सामुदायिक सहभागिता से प्रबंधित जल विभाजक प्रबंधन की

टिप्पणी

सफलता की कहानी बताता है। यहां प्रत्येक घर में सामुदायिक संपत्ति के रूप में एक–एक वृक्ष को लगाया गया और प्रबंधित किया गया। उन्होंने चरागाहों की भूमि पर हरा चारा भी उगाया और दो–दो साल तक इनकी निगरानी भी की। इन चरागाहों को चरने के लिए खुला नहीं छोड़ा गया। यद्यपि जानवरों को खिलाने के लिए स्टॉल बनाए गए और इस प्रकार वे पूर्णरूप से विश्वस्त थे कि उन्होंने जो चरागाह बनाए हैं वे आने वाले वर्षों में उनके जानवरों को पर्याप्त चारा प्रदान करेंगे। इस कार्यक्रम के आरंभ होने से पूर्व, एक समीप के गांव के निवासी ने उनकी भूमि पर कब्जा कर लिया। इस गांव के निवासियों ने तहसीलदार की सहायता से सामुदायिक संपत्ति संसाधन की दृष्टि से झगड़े का हल ढूंढ़ते हुए समाधान निकाला और कब्जा करने वाले को सामुदायिक चरागाह भूमि को प्रयोग करने व प्रबंधित करने में भागीदार बनाया।

इन अध्ययनों में यह देखा जा सकता है कि समुचित प्रयासों द्वारा ग्रामीण व नगरीय नियोजन की समस्याओं का समाधान संभव है किंतु यदि इन्हें अनदेखा किया जाए तो धारावी जैसी झुग्गी बस्तियों के लोग सदियों तक उन्हीं अस्वस्थ परिस्थितियों व वातावरण में ही जीते रहते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

5. भू–राजनीति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग रूडोल्फ जेलेन ने किस सन् में किया था?

   (क) सन् 1885 (ख) सन् 1887

   (ग) सन् 1889 (घ) सन् 1891

6. पश्चिमी तटीय प्रदेशों में वर्षा का वार्षिक औसत कितने सेंटीमीटर से अधिक रहता है?

   (क) 100 सेंटीमीटर (ख) 150 सेंटीमीटर

   (ग) 200 सेंटीमीटर (घ) 250 सेंटीमीटर

7. वायुदाब को सामान्यतः किसमें मापा जाता है?

   (क) मीटर (ख) मिलीबार

   (ग) सेंटीमीटर (घ) मिलीग्राम

8. भारतीय संविधान के आठवें अनुच्छेद में अंग्रेजी के अतिरिक्त कितनी भाषाओं को वर्णित किया गया है?

   (क) 18 (ख) 20

   (ग) 22 (घ) 26

1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ग)

टिप्पणी

3. (घ)
4. (ख)
5. (ग)
6. (ग)
7. (ख)
8. (ग)

1.5 सारांश

पृथ्वी अथवा उसके किसी वृहत् भूभाग के व्यवस्थित अध्ययन के लिए उस क्षेत्र का प्रादेशीकरण एक आवश्यक प्रक्रिया है। किसी वृहत् भूखण्ड को विभिन्न विशेषताओं के आधार पर क्रमबद्ध रूप से विभिन्न प्रदेशों में विभक्त करने का उद्देश्य केवल भौगोलिक अध्ययन करना ही नहीं है वरन नियोजित क्षेत्रीय विकास, क्षेत्रीय सन्तुलन, प्रशासनिक नियंत्रण तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों के सुचारु अध्ययन के लिए भी प्रादेशीकरण की आवश्यकता पड़ती है।

भारतीय पठार के प्राकृतिक प्रदेश का उप–विभाजन संरचना व ऊंचाई को आधार मानकर किया है। उत्तरी मैदान के दक्षिण में फैले पठार को भारतीय पठार का नाम दिया है।

भू–राजनीति का उद्देश्य राज्यों के मध्य संबंध एवं उनकी परस्पर स्थिति के भौगोलिक आयामों के प्रभाव का अध्ययन करना है। भू–राजनीति के अनुसार, "राजनीतिक घटनाएं और उनके परिणाम उस स्थान के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखते हैं जिसमें वे घटित होते हैं।" राजनीतिक शक्ति, वास्तव में सीधे भौतिक स्थान से जुड़ी हुई है जो इसके संकायों के दायरे को निर्धारित करती है।

जलवायु एक लंबी समयावधि में मौसम की अवस्थाओं तथा विविधताओं का योग होती है अर्थात् यह लंबे समय की मौसमी दशाओं का औसत होता है। जलवायु के अंतर्गत तापमान, वायुभार, हवाएं, वर्षा, आर्द्रता आदि को सम्मिलित किया जाता है। भारत एक विशाल देश होने के कारण यहां जलवायु की विविधता देखी जाती है।

भारत के उत्तर में स्थित हिमालय की पर्वत श्रेणियां भारतीय जलवायु को नियंत्रित करती हैं। एक ओर ये दक्षिणी–पूर्वी मानसूनी हवाओं को रोककर वर्षा में सहायक होती हैं तो दूसरी ओर शीत ऋतु में साइबेरिया की ओर से आने वाली शीत हवाओं को भारत में प्रवेश करने से रोकती हैं।

कृषि जलवायु प्रदेश प्रमुख जलवायु के संदर्भ में एक भूमि की इकाई है जो एक निश्चित सीमा के अंदर फसलों की किस्मों एवं जोतने वाले के लिए उपयुक्त होती है। इसका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण की स्थिति को प्रभावित किए बिना भोजन, फाइबर, चारा और लकड़ी से मिलने वाले ईंधन की उपलब्धता को बनाए रखना एवं इन क्षेत्रीय संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन करना है।

किसी भी स्थान का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, कूटनीतिक व बौद्धिक इतिहास प्रादेशीकरण के निर्धारण के बारे में एक आधार बनाता है। किसी भी स्थान की

राजनीतिक उपलब्धियां और असफलताएं, नेतृत्व, महत्वपूर्ण घटनाएं, शांति संधियां, युद्ध, अंतर्राष्ट्रीय संबंध, लोग व उनकी जीवनशैली, खाने की आदतें, सामाजिक पृष्ठभूमि, आर्थिक इतिहास, लोगों के स्थानीय दर्शन का इतिहास प्रदेशों के सीमांकन की समझ है।

टिप्पणी

मानव पृथ्वी के संसाधनों का उत्पादन व उपभोग करता है इसीलिए यह जानना आवश्यक होता है कि एक देश में कितने लोग निवास करते हैं। वे कहां व कैसे रहते हैं, उनकी संख्याओं में वृद्धि क्यों हो रही है तथा उनकी कौन–कौन सी विशेषताएं हैं। भारतीय जनगणना हमारे देश की जनसंख्या से संबंधित जानकारी हमें प्रदान करती है।

1.6 मुख्य शब्दावली

- **क्षेत्रीय भूगोल** : क्षेत्रीय भूगोल, भूगोल की एक शाखा है जो दुनिया के क्षेत्रों का अध्ययन करती है।
- **भौतिक भूगोल** : भूगोल की वह प्रमुख शाखा जिसमें पृथ्वी के भौतिक स्वरूप का अध्ययन किया जाता है।
- **जलवायु** : जलवायु किसी स्थान विशेष की दीर्घकालीन वायुमंडलीय दशाओं जैसे तापमान, दाब, पवन, आर्द्रता, वर्षा आदि का औसत होता है।
- **अपवाह तंत्र** : यह एक तरह का जालतंत्र है जिसमें नदियां एक–दूसरे से मिलकर जल के एक ही दिशा के प्रवाह का मार्ग बनाती हैं।
- **जनसांख्यिकी** : जनसांख्यिकी सामूहिक रूप में मानव जनसंख्या की वृद्धि, विकास तथा गतिशीलता से संबंधित अध्ययन है।
- **स्थलाकृति** : ग्रहविज्ञान की एक शाखा है जिसमें पृथ्वी या किसी अन्य ग्रह, उपग्रह या क्षुद्रग्रह की सतह के आकार व आकृतियों का अध्ययन किया जाता है।

1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. क्षेत्रीयकरण से आप क्या समझते हैं?
2. स्थलाकृति से क्या अभिप्राय है?
3. पश्चिमी जेट स्ट्रीम तथा पूर्वी जेट स्ट्रीम में क्या अंतर है?
4. कृषि जलवायु को स्पष्ट कीजिए।
5. अपवाह तंत्र किसे कहते हैं?
6. जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन की तीन प्रमुख प्रक्रियाएं कौन–कौन सी हैं?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. क्षेत्रीयकरण को समझाते हुए इसके मुख्य आधारों का वर्णन कीजिए?
2. प्रादेशिक योजना से आप क्या समझते हैं? टिप्पणी कीजिए।

टिप्पणी

3. क्षेत्रीयकरण के कृषि–जलवायु आधार कौन से हैं इन आधारों पर क्षेत्रीयकरण की किसी एक योजना का भारत के संदर्भ में वर्णन कीजिए।
4. जनसांख्यिकीय आधार पर भारत को कितने प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है? वर्णन कीजिए।

1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1. अहमद काजी, सिंह आर.एल., 1998 (पुनर्प्रकाशन), 'इंडियाः ए रीजनल ज्योग्राफी', यू.बी.एस. पब्लिशर्स डिस्ट्रिब्यूटर्स मि. नई दिल्ली।
2. माथेसन, आस. एस. 1968, 'फ्रंटीयर्स इन रीजनल ज्योग्राफी', ज्योग्राफीकल एजुकेशन, 63–70, 29–122.
3. निशुबल रोजर, 1967, 'रीजनल ज्योग्राफी : थ्योरी एंड प्रैक्टीस', लंदन हिर्चसन यूनिवर्सिटी
4. स्टैम्प, एल. डी., 1967, 'एशियाः ए जनरल एंड रीजनल ज्योग्राफी', लंदन मेथुएन एंड कंपनी लि.
5. पारसन टी, 1967, 'ऑन दी कॉन्सेप्ट ऑफ पोलटीकल पॉवर', पियर्सन (एडीटेड), सोशियोलोजिकल थ्योरी एंड मॉडर्न सोसाइटी, नई दिल्ली।
6. बासू, डी. एन. एंड राजगोपालन, वी., 1990, 'एग्रो क्लाइमेटिक रीजनल प्लानिंग इन इंडिया', इंडियन जरनल ऑफ एग्रीकल्चर इकॉनोमिक्स, वोल्यूम 45, नवम्बर 3, पेज 269–289, नई दिल्ली।
7. जेम्स, पी. ई., 1966, 'ए ज्योग्राफी ऑफ मैन', लंदनः ब्लासडेल पब्लिशिंग कंपनी
8. स्ट्रालर, ए.एन., 1963, 'दी अर्थ साइंस', न्यूयार्क, हारपर एंड रॉ पब्लिशर्स।

इकाई 2 वृहत् क्षेत्र

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 वृहत् क्षेत्र : उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा
2.3 भारतीय संघवाद : संक्षिप्त अवलोकन
2.4 प्राकृतिक एवं मानव संसाधन तथा उनका उपयोग
2.5 जनसंख्या विकास
2.6 पर्यावरण अंतराफलक
2.7 नीतियां एवं कार्यक्रम
2.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.9 सारांश
2.10 मुख्य शब्दावली
2.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.12 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

वृहत् क्षेत्र क्षेत्रीयकरण के पदानुक्रम में सबसे ऊंचे स्तर पर होते हैं। अधिकांशतः किसी एक विशिष्ट समस्या का समाधान करने के लिए बहुत सारे राज्य मिलकर एक वृहत् क्षेत्र का निर्माण करते हैं। इस स्तर पर संसाधनों के विकास को अत्यधिक महत्व दिया जाता है, जैसे नदी घाटी सिंचाई तंत्र या ऊर्जा व परिवहन का विकास। इस प्रकार के अन्तर्राज्यीय योजना क्षेत्रों में उत्पादन की संभावना, खाद्य आपूर्ति में आत्मनिर्भरता और जल्दी नष्ट होने वाले पदार्थों को पहुंचाने के लिए लम्बी रेलवे सुविधा होनी चाहिए। सामान्य आवश्यकताओं और समस्याओं के बावजूद इस प्रकार के क्षेत्रों में सामान्य प्राकृतिक दशाओं और संसाधनों की स्थानीय विविधता को देखा जा सकता है।

इस इकाई में वृहत् क्षेत्रों की उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा, भारतीय संघवाद का संक्षिप्त अवलोकन, प्राकृतिक व मानवीय संसाधन तथा उनका प्रयोग, जनसंख्या का विकास, पर्यावरण अंतराफलक का विस्तृत वर्णन किया गया है।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- वृहत् क्षेत्रों की उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा को समझ पाएंगे;
- भारतीय संघवाद का विश्लेषण कर पाएंगे;
- प्राकृतिक एवं मानव संसाधन तथा उनके प्रयोगों की विवेचना कर पाएंगे;
- जनसंख्या विकास के कारणों का उल्लेख कर पाएंगे;

- पर्यावरण अंतराफलक का आकलन कर पाएंगे;
- प्रादेशिक नियोजन से संबंधित नीतियों एवं कार्यक्रमों का विश्लेषण कर पाएंगे।

टिप्पणी

2.2 वृहत् क्षेत्र : उत्पत्ति और उनकी बदलती रूपरेखा

वृहत् क्षेत्र आर्थिक, राजनीतिक भूगोल व क्षेत्रीय नियोजन की एक स्थापित अवधारणा है। ऐतिहासिक दृष्टि से 'वृहत् क्षेत्र' की अवधारणा का उपयोग उन भू–राजनीतिक इकाइयों के लिए किया जाता रहा है जो विभिन्न राजनीतिक इकाइयों को सम्मिलित करते हुए सीमांकित की जाती हैं। यद्यपि प्रादेशिक आर्थिक विकास व विकास के कार्यक्रमों में सहभागिता के चिन्तन से इस महत्वपूर्ण अवधारणा की प्रायोगिकता को नीति निर्धारकों के समकक्ष महत्वपूर्ण रूप से हाल में ही प्रस्तुत किया गया है।

वर्ष 1990 से राजनीतिक इकाइयों व भागों के बीच सीमा–पार अंतर्राष्ट्रीय, अंतर्राज्यीय सहयोग तेजी से बढ़ा है। व्यापार, संचार व बाजारों के एकीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई है। विकास सम्बन्धी विभिन्न चुनौतियों जैसे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, बाढ़, जैव विविधता का ह्रास आदि ने संयुक्त व समन्वित प्रयासों की आवश्यकता को बढ़ा दिया है। यह भी देखा गया है कि प्रभावी भूप्रदेशीय सहयोग किसी भी प्रदेश के लिए एक प्रमुख आर्थिक व सामाजिक संसाधन बन जाता है और क्षेत्र को नये अवसर प्रदान करता है।

सीमाओं के पार सहयोग विकास के भूगोल का एक महत्वपूर्ण विषय है। इस सम्बन्ध में कार्यात्मक क्षेत्र व उदाहरण देखा जा सकता है। कार्यात्मक क्षेत्र (Functional Region) की अवधारणा स्पष्ट संकेत करती है कि विभिन्न भू–राजनीतिक इकाइयों के मध्य सम्बन्ध व सहयोग से प्रादेशिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। इसे विशेष से भौगोलिक परिधि में स्थित सीमा क्षेत्रों के संदर्भ में देखा जा सकता है। सामान्यतः देश की सीमा पर स्थित क्षेत्र केन्द्रीय क्षेत्रों की तुलना में कम विकसित होते हैं। किन्तु यदि सीमा पार सहयोग सम्भव हो तो दोनों देश मिलकर इन क्षेत्रों को विकसित कर सकते हैं।

वैश्वीकरण (Globalization) की अवधारणा के विकास के साथ ही वृहत् क्षेत्रों की अवधारणा तेजी से विकसित हुई है। सम्पूर्ण विश्व में विकास के दृष्टिकोण से विभिन्न केन्द्रों व परिधियों को पहचाना गया और यह माना गया कि यदि संसाधनों का मिलकर प्रयोग किया जाये तो केन्द्र व परिधि के अन्तर को कम किया जा सकता है। इसलिए विश्व में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठन जैसे, असियान, यूरोपियन यूनियन व सार्क आदि का संगठन हुआ।

वृहत् क्षेत्र के बारे में समय–समय पर विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। 1996 में हंटीगटन ने वृहत् सांस्कृतिक इकाई वालेसस्टेन (1979) ने विश्व तन्त्र एगन्यू, टेलर एण्ड फ्लिन्ट (1999) तथा हैम्प (2014) ने विश्व केन्द्र व परिधि संबंधी विचार दिये। अन्य महत्वपूर्ण तथ्य वकृत क्षेत्रों की विश्व में संख्या से है। छह महाद्वीपों के अतिरिक्त सभ्यताओं की पहचान के आधार पर क्लावसन (2007) ने आठ, मोरिस (1972) ने 15 वृहत् क्षेत्रों को वर्णित किया है। भारतीय वृहत् क्षेत्रों की पहचान इनकी सघन जनसंख्या, उच्च जन्म दर, कम आर्थिक विकास दर व सांस्कृतिक विशेषताओं के

टिप्पणी

आधार पर की गयी है। यद्यपि प्रादेशिक नियोजन में तुलनात्मक दृष्टि से किसी भी क्षेत्र को जो लघु व मध्यम क्षेत्रों से वृहत् हो तथा दो या दो से अधिक मध्यम आकार को समाहित करता हो वृहत् क्षेत्रों के रूप में जाना जाता है। नियोजन के क्षेत्र में किसी भी स्तर के क्षेत्र तथा आकार का मानकीकरण सम्भव नहीं होता।

इस प्रकार के क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर नियोजन में समन्वय किया जाता है। साथ ही, इस प्रकार की वृहत् इकाई का एक विशेष कार्य किसी एक विशेष राष्ट्रीय आर्थिक समस्या का समाधान करना है। इस प्रकार के क्षेत्र में आवश्यक संसाधनों और ऊर्जा संसाधनों की निरन्तर आपूर्ति व एकीकृत आर्थिक विकास की दिशा निर्धारित करने की संभाव्यता होनी चाहिए। इस प्रकार के क्षेत्रों में सुदृढ ऊर्जा आधार पर एक या एक से अधिक सम्भावित औद्योगिक संरचना स्थित होनी चाहिए। इनके ये स्थान सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए नगरीय वृद्धि केन्द्रों से माध्यमिक प्रादेशिक स्तर पर सम्बन्धों के कारण एक मूल बिन्दु के रूप मे कार्य करते हैं। वृहत् क्षेत्रों की सीमा को मध्यम क्षेत्रों के समूह बनाते हुए विभाजित किया जाता है।

अतः यह पूर्णतया स्पष्ट है कि यह एक विशाल क्षेत्र होता है जिसमें समय के साथ एक से अधिक उत्पादक संकुल बन जाते हैं। इसमें एक से अधिक राज्यों के विभिन्न जिले सम्मिलित होते हैं। यहाँ कुछ विशिष्ट उद्योग या नगरीय क्षेत्र एक आवश्यक संसाधन आधार बनाते हैं और कुछ ऐसे एकीकृत करने वाले तत्व होते हैं जो आर्थिक गतिविधियों को एकीकृत कर देते हैं।

कृषि प्रधान देश जैसे भारत में सिंचाई और जल विद्युत और परिवहन का एकीकृत विकास किसी भी क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ा देता है। इस कारण से एक समान नदी बेसिन के मध्यम स्तर के क्षेत्रों का सामूहीकरण सर्वाधिक तर्कसंगत पहुंच (Approach) एप्रोच साबित हुआ है।

भारत के नियोजन क्षेत्र

क्र. सं.	वृहत् क्षेत्र और इसमें आने वाले राज्य व जिले	मुख्य औद्योगिक व नगरीय क्षेत्र	एकीकृत विकास के लिए संसाधन	एकीकृत करने वाले तत्व
1.	दक्षिण प्रायद्वीप (इसमें केरल व तमिलनाडु के कुछ जिले सम्मिलित हैं)	कोयम्बटूर कोचीन मद्रास	तटीय मत्स्य, कृषि, खनिज संसाधन, वन व बागवानी, सिंचाई व विद्युत उत्पादन के लिए जल संसाधन, तापीय व आणविक ऊर्जा	भौतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक संबंध जो एकीकृत परिवहन से बड़े हैं
2.	मध्य प्रायद्वीप (कर्नाटक) गोवा और लगभग सम्पूर्ण आन्ध्र प्रदेश	हैदराबाद, बंगलौर	आंध्र मैदानों की तटीय मत्स्य कृषि, कर्नाटक व गोवा के लौह, मैगनीज व बॉक्साइट खनिज सिंगराई कोयला कुर्ग व मालनाड के प्लानटेशन व जल संसाधन	तुंगभद्रा पर बनी बहुउद्देशीय परियोजनाएं सम्भावित औद्योगिक उत्पादन के लिए ऐतिहासिक सांस्कृतिक संबंधों को पुनः आरम्भ करना
3.	पश्चिम प्रायद्वीप (पश्चिमी महाराष्ट्र व इसके तटीय और आंतरिक जिले)	मुम्बई, पूना, शोलापुर, नासिक	तटीय मत्स्य, कपास, लौह व अलौह खनिजों के भंडार, खदानें व शक्ति	महानगरीय केन्द्र और मुम्बई पत्तन का पृष्ट प्रदेश, सांस्कृतिक व आर्थिक निकट संबंध
4.	केन्द्रीय दवकन (पूर्वी महाराष्ट्र मध्य प्रदेश)	जेधपुर, बीकानेर, गंगानगर	बागवानी, कपास लौह अयस्क (छन्दा) कृषि औद्योगिक विकास नर्मदा जल शक्ति और सतपुरा तापीय संभावना	मृदा व भौतिक तथ्यों की समानता तथा विकास के बाहरी प्रेरकों का कम प्रभाव
5.	पूर्वी प्रायद्वीप (उडीसा, दक्षिण बिहार, उत्तर– पूर्व आंध्र प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश व पश्चिम बंगाल से लगे हुए जिले)	राउरकेला, जमशेदपुर, आसनसोल, भिलाई, दुर्गापुर, सम्बतपुर कटक, विशाखापटनम	तटीय मत्स्य कोयला, लौह अयस्क, मैगनीज बॉक्साइट, माइका, वन व महानदी बेसिन की कृषि जल व तापीय विद्युत का विकास, स्टील प्लांट और अन्य आधारभूत उद्योग	तेजी से विकसित होती हुयी तटीय रेखा द्वारा संसाधनों की संपूरकता

टिप्पणी

6.	गुजरात (गुजरात राज्य)	अहमदाबाद, सूरत, बडोदरा,पोरबंदर	पेट्रो कैमिकल्स साल्ट, चूनापत्थर, बॉक्साइट सिंचित कृषि की वचनबद्धता (नर्मदा) और मत्स्य	सांस्कृतिक एकता और परिवहन के रास्तों द्वारा संबंध
7.	पश्चिमी राजस्थान	जोधपुर, बीकानेर गंगानगर	लिग्नाइट कोयला, चूना पत्थर, कीमती पत्थर, पेट्रोलियम व आण्विक शक्ति के विकास की संभावना, पशुपालन व सिंचित कृषि (राजस्थान नहर)	भौतिक व जलवायु दशाओं की उच्च स्तरीय संमागता; राजस्थान नहर का विकास, सामाजिक सांस्कृतिक एकीकरण व संबंध
8.	अरावली प्रदेश (पूर्वी राजस्थान और पश्चिमी मध्य प्रदेश)	कोटा, जयपुर, अजमेर	अलौह धातुएं जैसे सीसा, जिंक, तांबा, अभ्रक, चूना पत्थर मारबल और नमक पशुपालन और सिंचित कृषि, जल व आण्विक विद्युत (चम्बल) परियोजना	राजपूत राजशाही द्वारा स्थापित ऐतिहासिक व सांस्कृतिक बंधन
9.	जम्मू कश्मीर और लद्दाख	श्रीनगर	वन संसाधन, बागवानी पर्यटन, जल विद्युत विकास	भौतिक, सामाजिक सांस्कृतिक समानतायें सीमा मनोविज्ञान
10.	ट्रान्स इन्डो गंगा मैदान और पहाडियां (पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के पहाड़ी जिले)	दिल्ली, मेरठ, लुधियाना, चंडीगढ	पंजाब के मैदान में सिंचित कृषि का उच्च विकास (गेहूं, कपास, गन्ना, चारा फसलें) कृषि औद्योगिक बागवानी वन विकास में अग्र हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश की पहाड़ियां, पर्यटन	उपजाऊ भूमि, मेहनती लोग, सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक सम्बन्ध, ट्रान्जीशनल जोन का क्षेत्र
11	गंगा यमुना का मैदान (उत्तर प्रदेश के जिले व मध्य प्रदेश का कुछ भाग) पूर्वी केंद्रीय और दक्षिणी पश्चिमी उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के उत्तरी जिले	कानपुर, आगरा, वाराणसी, इलाहाबाद, लखनऊ	गंगा के मैदान के कृषि संसाधन (गन्ना, चावल और गेंहू) मध्य प्रदेश के वन, कृषि उद्योग और विद्युत संभावना	तुलनात्मक सामाजिक स्थिरता, गंगा यमुना नदियों का सांस्कृतिक प्रभाव
12	निम्न गंगा का मैदान (लगभग सम्पूर्ण पश्चिम बंगाल व उत्तरी बिहार	कलकत्ता, पटना व बरौनी	मैदानों में कृषि (राष्ट्रीय महत्व की चाय व जूट) बरौनी की समीप तापीय व जल विद्युत उत्पादन की संभावना	आर्थिक आत्मनिर्भरता और पृष्टप्रदेशों पर पत्तन का प्रभाव, बडे भाग में सामाजिक और सांस्कृतिक समानता
13	उत्तर पूर्वी प्रदेश असम और अन्य उत्तर पूर्वी राज्य, राज्य संघ और उत्तरी बंगाल पर्वतीय जिले	डिगबोई, गौहाटी, शिलांग, टिन, सुखिया	चाय, जूट, पेट्रोलियम सिलीमेनाइट खनन व वन उत्पाद, जल विद्युत संभावना व तापीय विद्युत	आर्थिक अन्तर्निर्भरता सांस्कृतिक विविधता जो जनजातीय लोगों में सामाजिक अन्तर्निर्भरता को बढाती है।

भारत का सामान्य प्रारूप

भारत 8°4' उत्तरी अक्षांश से 37°4' उत्तरी अक्षांश तथा 67°7' पूर्वी देशान्तर से 97°25' पूर्वी देशान्तर तक स्थित है अर्थात भारत की स्थिति उत्तरी तथा पूर्वी गोलार्द्ध में है। कर्क रेखा 23°30' उत्तर में देश को लगभग दो भागों में विभक्त करती है। उत्तरी भारत जो शीतोष्ण अथवा उपोष्ण कटिबन्ध है तथा दक्षिणी भारत जो उष्ण कटिबंधीय है। कर्क रेखा भारत के मध्य से आठ राज्यों अर्थात गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, पश्चिमी बंगाल, त्रिपुरा और मिजोरम से गुजरती है। भारत का अक्षांश और देशान्तर विस्तार लगभग 30° है परन्तु फिर भी पूर्व–पश्चिम का विस्तार उत्तर–दक्षिण के विस्तार की अपेक्षा कम प्रतीत होता है। देशान्तरीय विस्तार के कारण अरुणाचल क्षेत्र में सूर्योदय के दो घंटे पश्चात् काठियावाड़ (गुजरात) में सूर्य उदय होता है। 82°30' पूर्वी देशान्तर रेखा का स्थानीय समय भारत का प्रमाणिक समय (Indian

Standard Time as IST) माना जाता है जिसके अनुसार भारतीय मानक समय ग्रीनविच औसत समय (GMT) से 5 घंटे 30 मिनट आगे रहता है। यह रेखा इलाहाबाद के पास से गुजरती है।

टिप्पणी

भारत के भूभाग का कुल क्षेत्रफल 32,87263 वर्ग किलोमीटर है जो भू–मंडल के क्षेत्रफल का 0.57 प्रतिशत और स्थलमंडल का 2.4 प्रतिशत है। रूस, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, ब्राजील और ऑस्ट्रेलिया के बाद भारत का विश्व के देशों में सातवां स्थान है।

भारत मे प्रशासनिक व्यवस्था हेतु 29 राज्य तथा 7 केंद्र शासित क्षेत्र हैं। यहां 640 जिले, 5924 सब डिवीजन (तहसील) 7,936 नगर और 6.40 लाख गांव हैं।

भारत का राजनीतिक मानचित्र

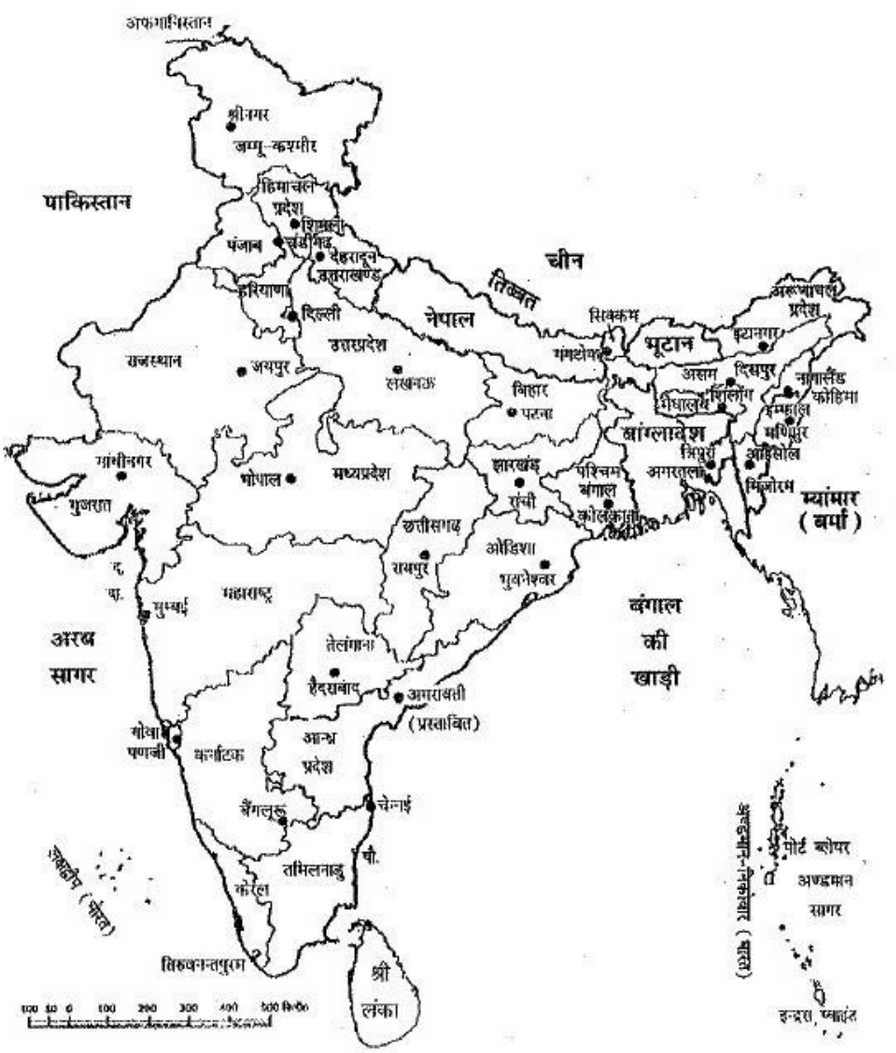

टिप्पणी

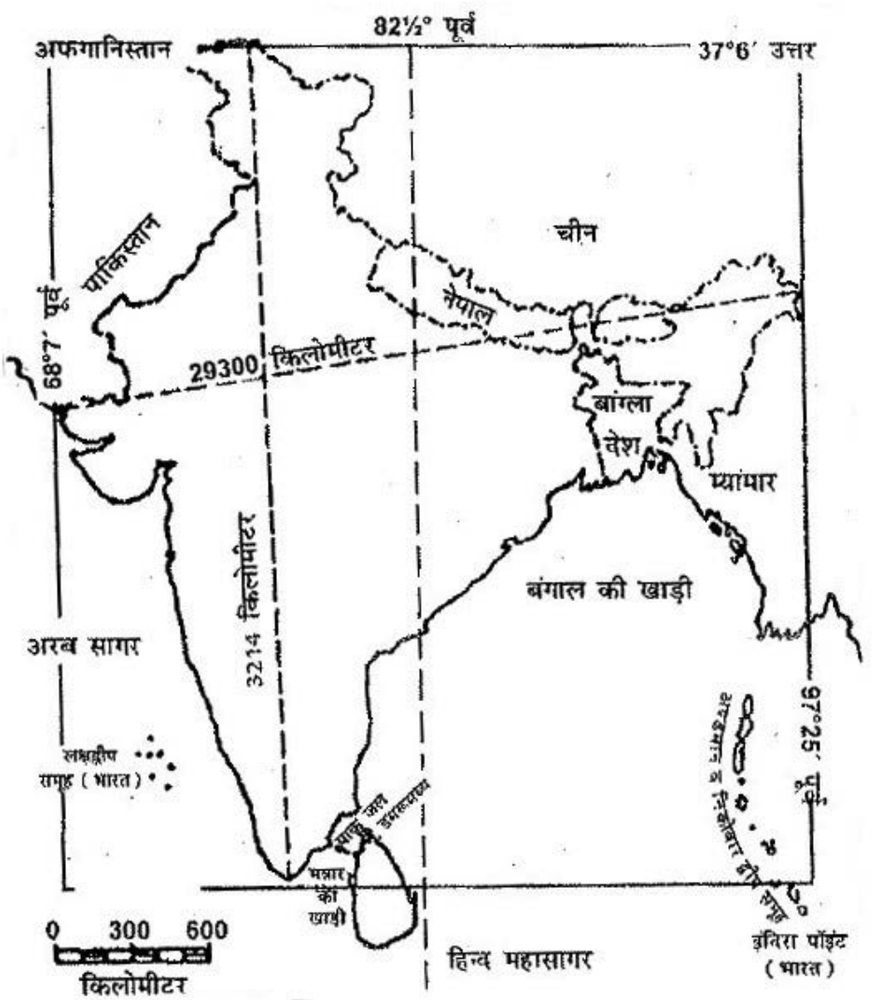

भारत : स्थिति एवं विस्तार

भारत के राज्य और केंद्र शासित क्षेत्र

क्र.सं.	भारत/राज्य का नाम	क्षेत्रफल (वर्ग किमी. में)	राजधानी
	भारत	**32,87,263**	**नई दिल्ली**
1.	जम्मू और कश्मीर	2,22,236	श्रीनगर
2.	हिमाचल क्षेत्र	55,673	शिमला
3.	पंजाब	50,362	चंडीगढ़
4.	उत्तराखंड	53,484	देहरादून
5.	हरियाणा	44,212	चंडीगढ़
6.	राजस्थान	3,42,239	जयपुर
7.	उत्तर प्रदेश	2,40,928	लखनऊ
8.	बिहार	94,163	पटना
9.	सिक्किम	7,096	गंगटोक

10.	अरुणाचल प्रदेश	83,743	ईटानगर
11.	नागालैंड	16,579	कोहिमा
12.	मणिपुर	22,327	इम्फाल
13.	मिजोरम	21,087	आइजोल
14.	त्रिपुरा	10,486	अगरतला
15.	मेघालय	22,429	शिलांग
16.	असम	78,438	दिशपुर
17.	पश्चिम बंगाल	88,752	कोलकाता
18.	झारखंड	79,714	रांची
19.	ओडिशा	1,55,707	भुवनेश्वर
20.	छत्तीसगढ़	1,35,191	रायपुर
21.	मध्य प्रदेश	3,08,245	भोपाल
22.	गुजरात	1,96,024	गांधीनगर
23.	महाराष्ट्र	3,07,577	मुंबई
24.	आन्ध्र प्रदेश	1,60,205	हैदराबाद (प्रस्तावित राजधानी अमरावती)
25.	कर्नाटक	1,91,791	बेंगलुरु
26.	गोवा	3,702	पणजी
27.	केरल	38,863	तिरुवनन्तपुरम
28.	तमिलनाडु	1,30,058	चेन्नई
29.	तेलंगाना	1,14,800	हैदराबाद

केंद्रशासित प्रदेश

1.	पुड्डुचेरी	480	पुड्डुचेरी
2.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	8,249	पोर्ट ब्लेयर
3.	चंडीगढ़	114	चंडीगढ़
4.	दिल्ली	1,483	नई दिल्ली
5.	दमन और दीव	112	दमन
6.	दादरा नगर हवेली	491	सिलवासा
7.	लक्षद्वीप	32	कवरती

टिप्पणी

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. भारतीय मानक समय ग्रीनविच औसत समय से कितने घंटे व मिनट आगे रहता है?

   (क) 5 घंटे 30 मिनट (ख) 10 घंटे 15 मिनट

   (ग) 15 घंटे 20 मिनट (घ) 20 घंटे 30 मिनट

2. भारत का विश्व के देशों में कौन सा स्थान है?

   (क) पांचवां (ख) सातवां

   (ग) नौवां (घ) दसवां

3. भारत में कितने केंद्र शासित प्रदेश हैं?

   (क) तीन (ख) पांच

   (ग) सात (घ) नौ

2.3 भारतीय संघवाद : संक्षिप्त अवलोकन

भारत विश्व में एक सबसे बडा लोकतांत्रिक देश है, भारत की जनसंख्या चीन के बाद विश्व में द्वितीय स्थान पर है। 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान अपनाया गया था तभी से भारतीय नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के स्वतंत्रता व समानता प्रदान की गयी है। भारतीय संविधान में संघात्मक व्यवस्था को अपनाया गया है। इसमें राष्ट्रपति देश का प्रमुख व प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है। भारत का प्रधानमंत्री बहुमत प्राप्त दल का नेता होता है। वर्तमान समय में लोकतंत्र विश्व के विभिन्न देशों में फैला है। भारत भी लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला देश है और देश की जनसंख्या अधिक होने से कार्य भार बढ जाता है जिसके कारण भारत ने संघवाद की व्यवस्था को अपनाया।

संघवाद की आवश्यकता देश की परिस्थितियों व जनसंख्या वृद्धि के कारण कार्य भार में वृद्धि के कारण केंद्र के भार को कम करने के लिए राज्यों की शक्तियों का बंटवारा करने के लिए एक अनिवार्य व्यवस्था के रूप में समझी गयी। संघात्मक व्यवस्था में शक्तियों का बंटवारा केंद्र व राज्यों में निश्चित अनुपात में किया है जब सारी शक्तियां केंद्र के पास होती हैं तो यह एकात्मक प्रणाली कहलाती है किन्तु जब शक्तियां केन्द्र व राज्यों में बंट जाती हैं तो यह प्रणाली संघवाद कहलाती है।

भारतीय संविधान को 26 जनवरी, 1950 को लागू किया गया और इसके साथ संघवाद प्रणाली के स्वरूप को अपनाया गया। भारत में अमेरिका की संघात्मक प्रणाली से भिन्न प्रणाली अपनाई गई है। भारत में संसदीय शासन प्रणाली के साथ अध्यक्षात्मक प्रणाली को भी अपनाया गया है। भारतीय संघात्मक व्यवस्था कनाडा की संघात्मक व्यवस्था पर आधारित है।

भारत के संविधान में स्पष्ट रूप से संघात्मक व्यवस्था का वर्णन नहीं किया गया है, वरन भारत के संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत को राज्यों का संघ कहा गया है। भारत संघ की इकाइयों को भारत से अलग होने का अधिकार नहीं है।

टिप्पणी

भारतीय संविधान का निर्माण करते समय इस बात पर ध्यान दिया गया कि भारत एक विविधता वाला देश है। भारत में विभिन्न लिंग, धर्म, जाति, वंश के व्यक्ति निवास करते हैं, इसलिए यहां पर संघात्मक व्यवस्था उपयुक्त रहेगी। किन्तु फिर भी आलोचकों ने भारतीय संघात्मक व्यवस्था को अर्ध संघात्मक व्यवस्था की श्रेणी में रखा है।

भारतीय संघात्मक व्यवस्था के पक्ष में दो तर्क मुख्य रहे हैं–

1. भारत की सीमा रेखा विस्तृत होने के कारण देश की एकता और अखंडता के लिए यह व्यवस्था उपयुक्त है।
2. भारत में विभिन्न प्रकार के समूहों की व्यवस्था पाई जाती है इसलिए भी संघात्मक व्यवस्था उपयुक्त है।

स्वतंत्रता से पूर्व भारत में संघात्मक प्रणाली का विकास

भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान केन्द्रीकृत प्रणाली को अपनाया गया था और सारी शक्तियां ब्रिटिश केन्द्रीय सरकार के पास थी। सन् 1861 में ब्रिटिश केन्द्रीकृत शासन में बदलाव आया और 1870 में लार्ड लिटन ने भूमि, राजस्व, कानून, न्याय के विषयों को प्रान्तों को सौंप दिया। इससे विकेन्द्रीकृत व्यवस्था का प्रारंभ हुआ। भारतीय प्रशासन अधिनियम 1919 के माध्यम से 50 विषयों पर कानून बनाने का अधिकार प्रान्तों को दिया गया। भारत में भारत सरकार अधिनियम के 1935 के माध्यम से सबसे पहले संघवाद शब्द का प्रयोग किया गया। इस प्रकार भारत में संघवाद का आरम्भ हुआ।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में संघवाद का विकास

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान निर्माताओं ने भारत के विविधता वाले स्वरूप को पहचाना क्योंकि भारत में विभिन्न धर्मो, नस्लों, वंशों व जातियों वाले व्यक्तियों का निवास है। भारत के विविध व विशिष्ट स्वरूप के कारण यह माना गया कि भारत में शक्तियों का केन्द्रीकरण न करके विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को अपनाया जाना चाहिए।

भारत संघ व राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन के कारण मतभेद था परंतु संघवाद की व्यवस्था से इस समस्या का समाधान किया गया। इस व्यवस्था में केन्द्र सरकार के अधिक शक्तिशाली होने का प्रावधान संविधान में किया गया। संघात्मक व्यवस्था की स्थापना भारत में राज्य सरकारों की सहमति से नहीं की गयी। भारत के संविधान में संघात्मक व एकात्मक दोनों के लक्षण पाये जाते हैं।

भारतीय संघवाद की मुख्य विशेषताएं निम्न हैं।

1. **शक्तियों का विभाजन**– भारत के संविधान की 7 वीं अनुसूची में शक्तियों के विभाजन का प्रावधान करते हुए इन शक्तियों को केन्द्र सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची में बांटा गया है।
2. **दोहरी शासन व्यवस्था का प्रावधान**– द्विसदनीय विधायिका, संविधान का सर्वोच्च रूप, न्यायपालिका की स्वतंत्रता व सर्वोच्चता, इसमें न्यायपालिका के माध्यम से संविधान के अनुरूप कानूनों की व्यवस्था की जाती है। एकात्मक लक्षण के रूप में भारतीय संविधान में एकल नागरिकता पायी जाती है इसमें सिर्फ केन्द्र की नागरिकता का प्रावधान है। शक्ति का विभाजन केन्द्र के पक्ष में किया गया है। भारतीय संविधान में राष्ट्रीय आपातकाल का प्रावधान किया गया

है। इसी के साथ ही राज्य वित्त मामलों में केन्द्र सरकार पर निर्भर होता है। राज्यों के राज्यपालों की नियुक्ति राष्ट्रपति के माध्यम से की जाती है और राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रतिनिधित्व के रूप में कार्य करते हैं।

टिप्पणी

3. **केन्द्र सरकार का अधिक शक्तिशाली होना**– केन्द्र सरकार को इस व्यवस्था में अधिक शक्तिशाली बनाया गया है। भारत की एकता व अखंडता को बनाए रखने के लिए व सामाजिक आर्थिक तथा भौतिक जरूरतों के कारण केन्द्र सरकार को अधिक शक्तियां दी गई हैं।
4. **केन्द्र राज्य संबंधों के लिए आयोग**– भारत में केंद्र राज्य संबधों में सुधार व संबंध बनाये रखने के लिए सरकार के द्वारा समय–समय पर कई आयोगों का गठन किया गया है, जो निम्न प्रकार से हैं–

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग : इस आयोग का गठन 1966 में किया गया। इसके अध्यक्ष हनुमन्तैया थे। इनकी मुख्य सिफारिशें थी– राज्यों में 356 का प्रयोग एकता व अखंडता के लिए किया जाये। राज्यों को वित्तीय स्वायत्तता प्रदान की जाए। समवर्ती सूची पर कानून केन्द्र व राज्यों के माध्यम से परस्पर सहमति से बनाए जाए।

राजमन्नार आयोग : सन 1969 में वी. पी. राजमन्नार की अध्यक्षता में इस आयोग का गठन किया गया था इस आयोग ने 1971 में तमिलनाडु सरकार को अपना प्रतिवेदन दिया था।

सरकारिया आयोग : सरकारिया आयोग केन्द्र और राज्य संबधों के बारे में सबसे प्रमुख आयोग माना जाता है। 1983 में रणजीत सिंह की अध्यक्षता में इसका गठन किया गया था।

इसके बाद केन्द्र और राज्य संबंधों के बारे में विश्लेषण के लिए पुंछी आयोग का गठन 27 अप्रैल, 2007 को किया गया था।

7वीं अनुसूची में 246 अनुच्छेद में तीन सूचियों का वर्णन किया गया है।

संसद की राज्य सूची के विषयों पर कानून : निर्माण शक्ति अनुच्छेद 249 के तहत राज्यसभा में उपस्थित व मत देने वाले सदस्यों के कम से कम 3/2 मत से किसी भी राज्य सूची के विषय को राष्ट्रीय महत्व का घोषित करके इस पर कानून बनाया जा सकता है।

प्रशासनिक संबंध

संविधान के भाग XI के अध्याय 2 में 256–263 अनुच्छेद तक प्रशासनिक संबधों का उल्लेख किया गया है। इसमें प्रशासनिक शक्तियां केन्द्र व राज्यों के बीच विभाजित की गई है। परंतु केन्द्र को राज्य से अधिक शक्तियां दी गई हैं। प्रत्येक राज्य को अपनी राज्य कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग इस प्रकार से करना है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति में कोई बाधा न हो। इसका भारतीय संविधान के अनुच्छेद 257 में प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 263 में अंतर्राज्यीय परिषद की स्थापना की गई है। इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय परिषद की व्यवस्था भी की गई है जिसके अध्यक्ष गृहमंत्री होते हैं। प्रशासनिक संबधों में एकता व अखंडता को बनाये रखने के लिए राष्ट्रीय एकता परिषद का गठन 1962 में किया गया था।

केन्द्र–राज्य वित्तीय संबंध

टिप्पणी

भाग 12 अध्याय 1 में केन्द्र व राज्यों के बीच वित्तीय सम्बन्धों के प्रावधान के बारे में है। यह विभाजन 1935 के भारत सरकार अधिनियम पर आधारित है। केन्द्र व राज्य दोनों का राजस्व वितरण स्वतंत्र रूप से किया गया है। इसमें संघ सरकार, संघ सूची के विषयों पर कर लगा सकती है और राज्य सरकार अपने विषयों पर कर लगा सकती है।

संघ सरकार सीमा शुल्क, शिक्षा कर, निगम कर, सेवा कर, आय कर पर अधिकार रखती है, वहीं राज्य सरकार भू–राजस्व, उत्तराधिकार शुल्क, संविदा शुल्क व कृषि भूमि कर लगा सकती है।

वर्तमान समय में भारतीय संघवाद का विकास

भारतीय संविधान में 73वां व 74वां संविधान संशोधन करके 1992 में पंचायती राज की व्यवस्था की गयी, इससे संघात्मक व्यवस्था को सुदृढ़ता प्राप्त हुई है।

सन् 1966 के बाद गठबंधन की सरकार का प्रचलन केन्द्र में चला था जिसके कारण आपस में केन्द्र–राज्य संबन्धों में दृढ़ता आयी और सहकारी संघवाद का रूप उभर कर सामने आया।

रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर डी. सुब्बाराव ने अपने एक लेख में हाल ही में यह व्यक्त किया कि जिस प्रकार देश का आर्थिक केन्द्र (Economic Center) राज्यों की ओर स्थानान्तरित हो रहा है उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि वर्तमान में भारत का विकास सहकारी संघवाद पर निर्भर है। ध्यातव्य है कि संघवाद सहकारी व प्रतिस्पर्धी दोनों प्रकार का होता है। सहकारी संघवाद में केन्द्र व राज्य एक दूसरे के साथ क्षैतिज संबंध स्थापित करते हुए एक दूसरे के साथ सहयोग से अपनी समस्याओं को हल करने का प्रयास करते हैं। सहकारी संघवाद की इस अवधारणा से स्पष्ट होता है कि केन्द्र व राज्यों में से कोई भी श्रेष्ठ नहीं है जबकि प्रतिस्पर्धी संघवाद में केंद्र सरकार व राज्य सरकारों के मध्य संबंध लंबवत होते हैं। इसमें राज्यों को आपस में और केंद्र के साथ लाभ के उद्देश्य से प्रतिस्पर्धा करनी होती है। गौरतलब है कि प्रतिस्पर्धी संघवाद की अवधारणा को देश में 1990 के दशक में आर्थिक सुधारों के बाद से महत्व प्राप्त हुआ था। उल्लेखनीय है कि प्रतिस्पर्धी संघवाद भारतीय संविधान की मूल संरचना का हिस्सा नहीं है।

अपनी प्रगति जांचिए

4. भारतीय संघात्मक व्यवस्था किस देश की संघात्मक व्यवस्था पर आधारित है?

   (क) अमेरिका (ख) फ्रांस

   (ग) रूस (घ) कनाड़ा

5. भारत सरकार के किस अधिनियम के माध्यम से सबसे पहले संघवाद शब्द का प्रयोग किया गया?

   (क) अधिनियम 1919 (ख) अधिनियम 1935

   (ग) अधिनियम 1940 (घ) अधिनियम 1954

6. संविधान के किस अनुच्छेद में अंतर्राज्यीय परिषद की स्थापना की गई है?

(क) अनुच्छेद 260 (ख) अनुच्छेद 261

(ग) अनुच्छेद 262 (घ) अनुच्छेद 263

टिप्पणी

2.4 प्राकृतिक एवं मानव संसाधन तथा उनका उपयोग

अनुकूल प्राकृतिक संसाधनों की उपस्थिति व अनुपस्थिति आर्थिक विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। प्राकृतिक संसाधनों में भूमि, जल, मत्स्य, खनिज, वन, सामुहिक, संसाधन, जलवायु, वर्षा व भू–आकृति सभी सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ संसाधन मनुष्य को ज्ञात हैं उदाहरण के लिए किसी भी देश के लोग उस प्रदेश का उच्चावच, भूमि का आकार, जलवायु, वनाच्छादित क्षेत्र और खोजी हुई खनिज की खदानों की जानकारी रखते हैं। किन्तु प्रकृति में बहुत अधिक संसाधन आविष्ट हैं। इन संभावित संसाधनों को खोजने व प्रयोग करने के लिए मनुष्यों को अपनी तकनीकों में सुधार करने की आवश्यकता है।

भूमि संसाधन

प्राकृतिक संसाधनों में भू–संसाधन सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि भूमि हमारे जीवन को आधार प्रदान करती है। हमारी अधिकांश आर्थिक व सामाजिक गतिविधियां भूमि पर निर्भर हैं। हम भूमि पर कृषि करते हैं, आवास बनाते हैं व हमारी आवश्यकता के अधिकांश संसाधन भूमि से प्राप्त होते हैं इसलिए भू–संसाधन के प्रयोग की सही योजना बनाना आवश्यक है। भारत में कई प्रकार की भूमि, जैसे पहाड़, पठार, मैदान और द्वीप हैं।

पहाड़– भारत की कुल भूमि का 30 प्रतिशत भाग पहाड़ी है। भारत की कई नदियों का उद्‌गम इन्हीं पहाड़ों से हुआ है।

मैदान– भारत की कुल भूमि का 43 प्रतिशत भाग मैदान के रूप में है। मैदान की भूमि समतल होती है और इसलिए अधिकतर आर्थिक क्रियाओं के अनुकूल होती है। इसलिए मैदानी भाग में अधिकांश जनसंख्या का बसाव मिलता है।

पठार– भारत की कुल भूमि का 27 प्रतिशत पठारों के रूप में है। पठारों से हमें कई प्रकार के खनिज जीवाश्म ईंधन और वन संपदा मिलती है।

भू–उपयोग और वर्गीकरण

सामाजिक आर्थिक दशाओं (भौतिक, आर्थिक व संस्थागत रूपरेखा के साथ मिलकर) द्वारा निर्देशित स्थलाकृतिक जलवायु, मृदा और मानवीय प्रयास से देश में भूमि उपयोग के प्रारूप निर्धारित किये गये हैं।

भूमि का वर्गीकरण मुख्यतः चरागाह, कृषि योग्य भूमि या वनाच्छादित भूमि पर आधारित होता है। स्वतंत्रता के पश्चात भारत में भूमि क्षेत्र को अनेक वर्गों में बांटा गया है जैसे– वनों में, अनुपजाऊ भूमि, अन्य गैर कृषि भूमि और शुद्ध बुवाई क्षेत्र। यह वर्गीकरण व्यापक होते हुए भी देश की कृषि योजना की आवश्यकता को पूरा करने के

लिए अपर्याप्त था। अतः केन्द्र सरकार ने 1948 में कृषि सांख्यिकी के समन्वय पर एक तकनीकी समिति का गठन किया, जिसने कई सुझाव दिये। भू–राजस्व अभिलेख द्वारा अपनाए गए भू–उपयोग वर्गीकरण को निम्न प्रकार से समझाया गया है–

टिप्पणी

1. **वनों के अधीन क्षेत्र**– वर्गीकृत वन क्षेत्र तथा वनों के अंतर्गत वास्तविक क्षेत्र पृथक हैं। सरकार ने वर्गीकृत वन क्षेत्र का सीमांकन इस प्रकार किया है जहां वन विकसित हो सकते हैं। भू–राजस्व अभिलेख में इस परिभाषा को अपनाते हुए वनों के अधीन भूमि का निर्धारण किया। इस प्रकार इस संवर्ग के क्षेत्रफल में वृद्धि दर्ज हो सकती है किन्तु वास्तव में यहां वन पाये जाएं यह आवश्यक नहीं हैं।
2. **गैर कृषि कार्यों में प्रयुक्त भूमि**– इस श्रेणी में बस्तियां (ग्रामीण व शहरी) अवसंरचना (सड़कें, नहरें आदि) उद्योगों व दुकानों आदि के लिए भूमि का उपयोग शामिल है। द्वितीयक व तृतीयक आर्थिक गतिविधियों के लिए प्रयुक्त भूमि इसमें सम्मिलित है।
3. **बंजर भूमि**– वह भूमि जो प्रचलित प्रौद्योगिकी की सहायता से कृषि योग्य नहीं बनायी जा सकती। जैसे बंजर पहाड़ी भूभाग, मरुस्थल खड्ड आदि को कृषि अयोग्य बंजर–भूमि में वर्गीकृत किया गया है।
4. **स्थायी चरागाह क्षेत्र**– इस प्रकार की अधिकतर भूमि पर ग्राम पंचायत या सरकार का स्वामित्व होता है। इस भूमि का केवल एक छोटा भाग निजी स्वामित्व में होता है। ग्राम पंचायत के स्वामित्व वाली भूमि इसमें आती है।
5. **विविध तरु फसलों व उपवनों के अंतर्गत क्षेत्र**– इस श्रेणी में वह भूमि सम्मिलित है जिस पर उद्यान व फलदार वृक्ष हैं। इस प्रकार के उद्यान अधिकतर निजी स्वामित्व में हैं।
6. **कृषि योग्य व्यर्थ भूमि**– वह भूमि जो पिछले पांच वर्षों तक या अधिक समय तक परती या कृषि रहित है, इस संवर्ग में सम्मिलित की जाती है। भूमि उद्धार तकनीक द्वारा इसे सुधार कृषि योग्य बनाया जा सकता है।
7. **वर्तमान परती भूमि**– यह भूमि जो एक कृषि वर्ष या उससे कम समय तक कृषि रहित रहती है। वर्तमान परती भूमि कहलाती है। भूमि की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु भूमि का परती रखना एक सांस्कृतिक चलन है। इस विधि से भूमि की क्षीण उर्वरकता या पौष्टिकता प्राकृतिक रूप से वापस आ जाती है।
8. **पुरातन परती भूमि**– यह भी कृषि योग्य भूमि है जो एक वर्ष से अधिक लेकिन पाँच वर्षों से कम समय तक कृषि रहित रहती है। अगर कोई भू भाग पाँच वर्ष से अधिक समय तक कृषि रहित रहता है तो इसे कृषि योग्य व्यर्थ भूमि संवर्ग में सम्मिलित कर दिया जाता है।
9. **निवल बोया क्षेत्र**– वह भूमि जिस पर फसलें उगाई व काटी जाती हैं। वह निवल बोया गया क्षेत्र कहलाता है।

भारत में भूमि का बहुत बड़ा भाग भूमि निम्नीकरण की समस्या से प्रभावित है दुर्भाग्यवश अधिकतर निम्नीकरण मानव जनित है, कुप्रबंधन, अधिक सिंचाई व उर्वरकों

टिप्पणी

तथा कीटनाशकों का अनियमित प्रयोग, मृदा अपरदन क्षारीयता, जलाक्रांती, सूखा व बाढ़, मरुस्थलीकरण इसके तथा खनिज पदार्थ भू–पृष्ठ की ऊपरी परत पर पाए जाते हैं, मृदा कहलाती है। मृदा जीव जगत और वनस्पति जगत का आधार होती है। किसी भी प्रदेश के आर्थिक विकास में उस क्षेत्र की मृदा का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

मृदा निर्माण एक सतत प्रक्रिया है, जो पृथ्वी के उद्भव के पश्चात् निरन्तर चलाती आ रही है। मृदा निर्माण मूलतः मूल चट्टानी पदार्थ, प्राकृतिक वनस्पति, जीव जन्तु तथा भौतिक एवं रासायनिक प्रक्रिया के फलस्वरुप होता है। इसमें उच्चावच जलवायु, जल का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (CSIR) ने भारत की मृदाओं के 8 प्रमुख तथा 27 गौण प्रकार वर्णित किये हैं। मुख्य मृदा प्रकारों में लाल मिट्टी, काली मिट्टी, लैटेराइट मिट्टी, क्षार युक्त मिट्टी, हल्की काली व दलदली मिट्टी, कांप मिट्टी, रेतीली मिट्टी, एवं वनों वाली मिट्टी आती है। इन मिट्टियों की उपस्थिति के आधार पर विभिन्न प्रदेशों का भी निर्धारण किया गया है।

प्राकृतिक वनस्पति अर्थात पादप जो प्राकृतिक अवस्था में विकसित होते हैं, दूसरे शब्दों में पर्यावरणीय अथवा पारिस्थितिक तन्त्र में विकसित विभिन्न प्रकार के पादपों (पौधों) को प्राकृतिक वनस्पति कहते हैं। इसके अन्तर्गत पेड़–पौधे झाड़ियाँ एवं घास आदि सम्मिलित हैं। इसे अक्षत (Vergin) वनस्पति भी कहा जाता है। किन्तु मानवीय प्रभाव एवं विभिन्न वानस्पतिक प्रजातियों के मिश्रण से इसके स्वरूप में परिवर्तन होता है, इसी कारण से वर्तमान वनस्पति आवरण का स्वरूप देशी और विदेशी पादपों का मिश्रण है।

प्राकृतिक वनस्पति व वन संसाधन– पर्यावरणीय अथवा पारिस्थितिक तन्त्र में विकसित विभिन्न प्रकार के पादपों को प्राकृतिक वनस्पति कहते हैं। भारत में प्राकृतिक वनस्पति के दो प्रमुख वर्ग हैं। प्रथम देशज या स्थानीय (Indigenous or Endemic) यह भारत में 60 प्रतिशत है। द्वितीय विदेशज (Exotic) जो तिब्बत, अफ्रीका मलाया आदि से और मुख्यतया गंगा के मैदान और मरुस्थली प्रदेशों में विस्तृत है। भारत में पाए जाने वाले पौधों की प्रजातियों का 40 प्रतिशत विदेशी है। इन्हें बोरियल वनस्पति कहते हैं। ये टिम्बर, ईंधन की लकड़ी और बहुत सारे गैर टिम्बर उत्पादों के स्रोत हैं। ये जैव विविधता के प्राकृतिक अधिवास हैं। ये पर्यावरण व आर्थिक संस्थिरता को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारत की प्राकृतिक वनस्पति का वर्गीकरण सर्वप्रथम एच. जी. चैम्पियन (H.G. Champion) ने 1936 में प्रस्तुत किया। इसके पश्चात जी. एस. पुरी लेगरिस, चेमीओन और एस. के. सेठी तथा एस. एस. नेगी ने भी भारत के वनस्पति प्रकारों को वर्णित किया। चैम्पियन ने तापमान के आधार पर चार प्रमुख वनस्पति वर्गों का उल्लेख किया। उन्होंने पुनः वर्षा और आर्द्रता के आधार पर 15 मुख्य एवं 136 उपखण्ड वर्णित किये। जी. एस. पुरी ने संशोधित कर इन्हें 5 प्रमुख खण्डों एवं 163 उप खण्डों में वर्णित किया। ये निम्न हैं–

1. उष्ण कटिबंधीय वन

(अ) आर्द्र उष्ण कटिबंधीय वन

(i) उष्ण कटिबंधीय आर्द्र सदापर्णी वन

टिप्पणी

(ii) उष्ण कटिबंधीय आर्द्र–आर्द्र सदापर्णी वन

(iii) उष्ण कटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वन

(ब) शुष्क उष्ण कटिबंधीय वन

(i) उष्ण कटिबंधीय शुष्क सदापर्णी वन

(ii) उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन

(iii) उष्ण कटिबंधीय कंटीले वन

2. उपोष्ण कटिबंधीय वन

(i) उपोष्ण कटिबंधीय आर्द्र वन

(ii) उपोष्ण कटिबंधीय पाइन वन

(iii) उपोष्ण कटिबंधीय शुष्क वन

3. शीतोष्ण कटिबंधीय वन

(i) क्लिन्न शीतोष्ण कटिबंधीय वन

(ii) आर्द्र शीतोष्ण कटिबंधीय वन

(iii) शुष्क शीतोष्ण कटिबंधीय वन

(iv) अल्पाइन वन

4. अन्य वन

(i) तटीय ज्वारीय वन

(ii) नदीय वन

(iii) मरुस्थलीय वन

वनों का वितरण

वर्ष 2019 की भारतीय वन स्थिति रिपोर्ट के अनुसार देश में वनों एवं वृक्षों से आच्छादित कुल क्षेत्रफल 8,07,276 वर्ग किलोमीटर (कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 24.56 प्रतिशत) है। भारत में सर्वाधिक वनावरण मिजोरम में 85.41 प्रतिशत है, अरुणाचल प्रदेश 79.63 प्रतिशत के साथ द्वितीय स्थान पर व मेघालय 76.33 प्रतिशत के साथ तृतीय स्थान पर है। सर्वाधिक वन क्षेत्रफल वाले राज्यों में मध्य प्रदेश (77,482 वर्ग किमी.) का स्थान प्रथम है। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के रिकार्डेड फॉरेस्ट एरिया में 330 (0.05 प्रतिशत) वर्ग कि.मी. की मामूली कमी आई है। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के वनों का कुल कार्बन स्टॉक लगभग 7,142.6 मिलियन टन अनुमानित है। वर्ष 2017 के आंकलन की तुलना में इसमें लगभग 42.6 मिलियन टन की वृद्धि हुई है।

वर्ष 1987 से भारतीय वन स्थिति रिपोर्ट को द्विवार्षिक रूप से 'भारतीय वन सर्वेक्षण' द्वारा प्रकाशित किया जाता है। यह इस श्रेणी की 16वीं रिपोर्ट है। राष्ट्रीय वन नीति (National Forest Policy) के अनुसार 'वन एक राष्ट्रीय संपदा है।' इसके विकास एवं संरक्षण हेतु समय–समय पर नीति बनाई जाती रही है। सर्वप्रथम ब्रिटिश शासक ने 1894 में वन नीति बनाई गई, जिसका उद्देश्य राजस्व प्राप्ति तथा वनों का संरक्षण था।

स्वतंत्रता के पश्चात, 1952 में वन नीति घोषित की गई, जिसमें यह भी निर्धारित किया गया कि भूमि के 33 प्रतिशत भाग पर वन होने चाहिए। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य वन संसाधनों के दीर्घकालीन विकास की व्यवस्था करना था।

टिप्पणी

इसके पश्चात 1988 में राष्ट्रीय वन नीति को 'संशोधित वन नीति' के रूप में प्रस्तुत किया गया जिसमें वनों की सुरक्षा, संरक्षण और विकास पर जोर दिया गया।

भारत सरकार ने 1998 में नवीन वन नीति की घोषणा की, जिसमें 1988 के नीति के प्रमुख बिंदुओं जैसे ग्रामीण व आदिवासी जनसंख्या की ईधन, चारा व वन उपजों की आवश्यकताओं को कम करना, वन संरक्षण में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना, राष्ट्रीय आवश्यकताओं के लिए वन उत्पादों में वृद्धि आदि के साथ पुनः पर्यावरण सुधार, वन्य जीव एवं मृदा संरक्षण, सामाजिक, वानिकी और वृक्षारोपण पर बल दिया गया। इसी क्रम में अगस्त 1999 में 'राष्ट्रीय वानिकी कार्य योजना' लागू की गयी जो 10 वर्षीय वन संरक्षण योजना के रूप में रखी गयी। इस दिशा में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा 7 फरवरी, 2001 को एक राष्ट्रीय वन आयोग का गठन किया गया। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि वन विकास तथा वन संरक्षण सरकार की प्राथमिकता है जिसे वन एवं पर्यावरण मंत्रालय नियमित रूप से विभिन्न नीतियों के माध्यम से समायोजित करता है।

जल संसाधन

भारत के जल संसाधन यहां की आर्थिक प्रगति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। भारत की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग कृषि पर निर्भर है और भारतीय कृषि काफी हद तक वर्षा जल की मात्रा पर निर्भर करती है।

भारत की अधिकांश सिंचाई नलकूपों द्वारा की जाती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा भूजल उपयोगकर्ता भी है। भारत में वर्षा की मात्रा पर्याप्त है किन्तु यह कुछ ही महीनों में होने के कारण बहुत अधिक जल व्यर्थ बह जाता है। भारत में 71 प्रतिशत जल संसाधन देश के 36 प्रतिशत क्षेत्र पर उपलब्ध है जबकि शेष 64 प्रतिशत क्षेत्र के पास देश के 29 प्रतिशत जल संसाधन ही उपलब्ध हैं। यद्यपि कुछ आंकड़ों को देखने पर देश में पानी की मांग अभी पूर्ति से कम दिखाई पड़ती है। 2008 में किए गए एक अध्ययन के अनुसार देश में कुल जल उपलब्धता 664 बिलियन क्यूबिक मीटर थी और मांग 634 बिलियन क्यूबिक मीटर।

भारत में वर्षा से पर्याप्त जल प्राप्त होता है। भारत में औसत दीर्घकालीन वर्षा 1960 मिलीमीटर है जो इस आकार के किसी देश में नहीं पाई जाती। भारतीय कृषि का बड़ा हिस्सा सीधे वर्षा पर निर्भर है जो लगभग 8.6 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्रफल पर है और विश्व में सबसे अधिक है।

वर्षा का वितरण वर्ष के सभी महीनों में समान न होने के कारण वर्षा बाहुल्य वाले इलाकों में भी अल्पकालिक जल संकट देखने को मिलता है। भारत की 12 मुख्य नदियों का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 252.8 मिलियन हेक्टेयर है जिसमें गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना सबसे बड़ी है। भारत में जल की आपूर्ति को संतुलित करने के लिए नदियों के एकीकरण की महत्वाकांक्षी योजना पर भी विचार किया जाता रहा है। अन्य सतही जल में झीलें, ताल, पोखरें व तालाब आदि आते हैं।

टिप्पणी

भारत विश्व का सबसे बड़ा भूमि जल का उपयोग करने वाला देश है। विश्व बैंक के अनुमान के अनुसार भारत लगभग 236 घन किलोमीटर भूमि जल का दोहन प्रतिवर्ष करता है। सिंचाई का लगभग 60 प्रतिशत और घरेलू उपयोग का लगभग 80 प्रतिशत जल भूजल ही होता है। उत्तर प्रदेश जैसे कृषि प्रधान और विशाल राज्य में सिंचाई का 71.8 प्रतिशत नलकूपों द्वारा प्राप्त होता है।

वर्षा के असमान वितरण व प्रबन्धन के कारण भारत के कई क्षेत्र पानी की कमी की समस्या का सामना कर रहे हैं। जल का प्रदूषण भारत के लिए जलाभाव से भी एक बड़ी समस्या है। वर्तमान में भारत की अधिकांश नदियाँ प्रदूषण का शिकार हैं व भूजल भी प्रदूषित है।

राष्ट्रीय जल नीति

स्वतन्त्रता के बाद से भारत में तीन राष्ट्रीय जल नीतियों का निर्माण वर्ष 1987, 2002 और 2012 में हुआ। वर्ष 2012 की राष्ट्रीय जल नीति में एकीकृत जल संसाधन प्रबन्धन के दृष्टिकोण की अवधारणा थी जिसके अंतर्गत जल संसाधनों के नियोजन, विकास और प्रबन्धन की इकाई के रूप में नदी बेसिन, उप बेसिन को लिया गया था।

खनिज संसाधन

भारत खनिजों की दृष्टि से सम्पन्न देश है और यहां खनिजों की विविधता है जो औद्योगिक विकास को आधार प्रदान करते हैं तथा देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारत की भूगर्भिक विविधता ने यहां के खनिजों में विविधता प्रदान की है। साथ ही उनका क्षेत्रीय वितरण भी इसी के द्वारा नियन्त्रित है। प्रसिद्ध भू–वैज्ञानिक वाडिया ने भारत के खनिजों को उनकी उपलब्धता के आधार पर निम्न चार श्रेणियों में विभक्त किया है–

1. **वे खनिज जिनमें भारत आत्मनिर्भर है**– कोयला, एल्यूमीनियम, चूने का पत्थर, डोलामाइट, कांच बनाने की बालू, संगमरमर, फल्सफर, स्लेट, तांबा, सुरमा, जिरकन, बैराइट्स, वैनेडियम, पाइराइट, शोरा, फास्फेट, क्रोमाइट, अभ्रक नमक, इमारती पत्थर आदि।
2. **वे खनिज जिनका निर्यात करके भारत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर प्रभाव डालता है**– कच्चा लोहा, टाइटेनियम, अभ्रक, संगमरमर, ग्रेनाइट, चूना पत्थर के चौके और थोरियम।
3. **वे खनिज जिनका भारत से निर्यात महत्वपूर्ण है**– मैगनीज, मैग्नेसाइट, बॉक्साइट, घीया पत्थर, मोनोजाइट, ग्रेनाइट, बेरिलियम, कोरेंडम, सिलिका प्राकृतिक घर्षण पदार्थ।
4. **वे खनिज जिन पर भारत मुख्यतः विदेशों पर निर्भर है**– पेट्रोलियम, चांदी, निकल, जस्ता, सीसा, टिन, पारा, टंगस्टन, ग्रेफाइट, मॉलिब्डेनम, एसफाल्ट, पोटाश, प्लैटिनम, गंधक, फ्लोराइड। इनमें सीसा, जस्ता, चांदी, ताँबा एवं ग्रेफाइट भारत में पर्याप्त उपलब्ध हैं।

टिप्पणी

भारत के खनिज क्षेत्र

भारत की भूगर्भिक बनावट के कारण यहां सर्वत्र खनिज संसाधन नहीं मिलते अपितु उनका संकेन्द्रण कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में ही हुआ है। इन्हें खनिज पेटी (Mineral Belt) के नाम से जाना जाता है।

1. छोटा नागपुर पेटी (Chota Nagpur Belt)
2. मध्यवर्ती पेटी (Central Belt)
3. दक्षिणी पेटी (Southern Belt)
4. पश्चिमी पेटी (Western Belt)
5. दक्षिणी पश्चिमी पेटी (Southern Western Belt)

1. **छोटा नागपुर पेटी**– झारखण्ड, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में फैली इस पेटी में कोयला, अभ्रक मैंगनीज क्रोमाइट, इटमेनाइट, बॉक्साइट, फास्फेट, लौह अयस्क, तांबा, चूना पत्थर, केल्साइट आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। अनुमान है कि इस पेटी में देश का 100 प्रतिशत काइनाइट, 93 प्रतिशत लौह अयस्क, 84 प्रतिशत कोयला, 70 प्रतिशत क्रोमाइट, 70 प्रतिशत अभ्रक, 50 प्रतिशत अग्निरोधक मिट्टी, 45 प्रतिशत चीनी मिट्टी, 20 प्रतिशत चूना पत्थर और 10 प्रतिशत मैंगनीज उपलब्ध है।
2. **मध्यवर्ती पेटी**– मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र में फैली इस पेटी में अधिकांश मैंगनीज बॉक्साइट, चूना पत्थर, संगमरमर, लिग्नाइट अभ्रक जवाहरात, लौह अयस्क तांबा ग्रेफाइट आदि उपलब्ध हैं। अभी भी इस पेटी की जानकारी पूर्णतया प्राप्त नहीं है।

चित्र : भारत की प्रमुख खनिज पेटियां

टिप्पणी

3. **दक्षिणी पेटी**– यह पेटी कर्नाटक और तमिलनाडु में विस्तृत है। यहां सोना, लोहा, तांबा, क्रोमाइट मैग्नीज, लिग्नाइट, अभ्रक बॉक्साइट, जिप्सम, चूना पत्थर आदि का भण्डार है।
4. **पश्चिमी पेटी**– राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र में विस्तृत इस पेटी में तांबा, जस्ता, यूरेनियम, अभ्रक, मैग्नीज एस्बेस्टस, नमक, कीमती पत्थर, खनिज तेल, प्राकृतिक गैस व बॉक्साइट के भण्डार हैं।
5. **दक्षिणी–पश्चिमी पेटी**– इसका विस्तार दक्षिणी कर्नाटक गोवा और केरल में है। इस पेटी में इटमेनाइट, जिरकन, मोनोजाइट, गार्नेट, चिकनी मिट्टी, लोहा, चूना पत्थर आदि के भण्डार हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि भारत के जो राज्य खनिज संसाधनों में समृद्ध हैं, वे हैं झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश व असम।

भारतीय संविधान के अनुसार भारत में खनिज संसाधनों के प्रबंधन की जिम्मेदारी केन्द्र व राज्य सरकार दोनों की है। देश में खनन और खनिज (विकास और विनिमय) अधिनियम 1957 खानों और खनिज क्षेत्रों के विनियमन के लिए मुख्य कानून है।

भारत में खनन नीति 2008 में बनी थी। इसकी समीक्षा के लिए 2017 में खनन मंत्रालय के अवर सचिव डॉ. के राजेश्वर राव की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। समिति के सुझावों व विधायी परामर्श से 2019 में एक नयी राष्ट्रीय खनिज नीति बनाई गई। इस नीति में पारदर्शिता, बेहतर विनिमय और प्रवर्तन, संतुलित सामाजिक व आर्थिक विकास के साथ–साथ खनन गतिविधि को औद्योगिक ऊर्जा देने पर बल दिया गया है।

ऊर्जा संसाधन

ऊर्जा संसाधन राष्ट्रीय विकास का आधार व अर्थव्यवस्था के निर्धारक होते हैं। ऊर्जा अर्थात, शक्ति के साधनों पर ही औद्योगिक विकास परिवहन संचालन संचार व्यवस्था तथा घरेलू उपयोग के अनेक कार्य निर्भर रहते हैं। ऊर्जा संसाधनों को क्षयशील (Exhaustible) और अक्षयशील अथवा नवीकरण (Renewable) श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। क्षयशील ऊर्जा संसाधनों में कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, आणविक स्रोत शामिल हैं। दूसरी ओर नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों में सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा आदि सम्मिलित हैं। क्षयशील ऊर्जा संसाधनों को परंपरागत व नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों को आधुनिक संसाधन भी कहा जाता है।

भारत में व्यापारिक स्तर पर तीन ऊर्जा संसाधन प्रयोग किये जाते हैं– कोयला, खनिज तेल अथवा पेट्रोलियम तथा जल विद्युत। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक गैस, परमाणु ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय, सौर और भूगर्भिक ऊर्जा के संसाधन भी अल्प योगदान दे रहे हैं।

टिप्पणी

कोयला

यह मुख्यतः हाइड्रो कार्बन निर्मित एक ठोस संस्तरित शिला है। कार्बन की घटती गुणवत्ता के अनुसार कोयले के प्रमुख प्रकार हैं–

एन्थ्रेसाइट (80–95 प्रतिशत) बिटुमिनस (55–65 प्रतिशत) लिग्नाइट (45–55 प्रतिशत) पीठ (35–45 प्रतिशत) एवं केनाल।

भारतीय भूविज्ञान सर्वेक्षण के आंकलन (वर्ष 2011) के अनुसार भारत में कोयले का भण्डार 285.87 अरब टन है जिसमें कोकिंग कोयला 33.47 अरब टन तथा मान कोकिंग कोयला 252.40 अरब टन है। भारत में कोयले के कुल उत्पादन का लगभग 77 प्रतिशत भाग ताप विद्युत उत्पादन में प्रयोग किया जाता है।

भारत में आधुनिक विधि से कोयला निकालने का प्रथम प्रयास पश्चिम बंगाल के रानीगंज कोयला क्षेत्र में किया गया था। देश में प्राचीन काल की गोंडवाना शैलों में कुल कोयले का 98 प्रतिशत भाग पाया जाता है। शेष 2 प्रतिशत कोयला द्वितीयक या टर्टियरी युगीन चट्टानों में मिलता है। गोंडवाना युगीन चट्टानों का सबसे प्रमुख क्षेत्र पश्चिम बंगाल, झारखंड तथा उड़ीसा राज्यों में विस्तृत है जहां से कुल उत्पादन का 76 प्रतिशत कोयला प्राप्त होता है।

मध्य प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश गोंडवाना क्षेत्र के अन्य प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। गोंडवाना युगीन कोयला बिटुमिनस प्रकार का है।

प्रायद्वीपीय भारत की नदी घाटियां कोयले की प्राप्ति के प्रमुख प्राप्ति स्थल हैं। जिनमें दामोदर नदी घाटी, सोम महानदी, ब्राह्मणी नदी घाटी, वर्धा गोदावरी–इंद्रावती नदी घाटी तथा कोयला–पेंच कान्दन नदी घाटी प्रमुख हैं। पश्चिम बंगाल का रानीगंज कोयला क्षेत्र ऊपरी दामोदर घाटी में है जो देश का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है। इससे देश का लगभग 35 प्रतिशत कोयला प्राप्त होता है। झारखंड राज्य में झरिया, बोकारो, गिरिडीह, करणपुरा, रामगढ़ आदि क्षेत्रों से उत्तम कोटि का बिटुमिनस कोयला प्राप्त किया जाता है। छत्तीसगढ़ का तातापानी–रामकोला कोयला क्षेत्र उड़ीसा का तलचर कोयला क्षेत्र (ब्राह्मणी नदी घाटी) व आंध्र प्रदेश का सिंगरेनी कोयला क्षेत्र (कृष्णा–गोदावरी नदी घाटी) भी प्रमुख कोयला उत्खनन क्षेत्र है। टशियरी युगीन कोयले के सबसे प्रमुख क्षेत्र माकुम (असम) नेवेली (तमिलनाडु) लिग्नाइट कोयले के लिए प्रसिद्ध हैं। पलना (राजस्थान) में भी लिग्नाइट कोयला मिलता है। कोयले के उत्पादन में चीन 47 प्रतिशत व संयुक्त राज्य अमेरिका 10 प्रतिशत के बाद भारत 9 प्रतिशत का तीसरा स्थान है। देश के कुल कोयला उत्पादन का 21.7 प्रतिशत भाग उत्पादन कर छत्तीसगढ़ पहले स्थान पर है। इसके बाद क्रमशः उड़ीसा 21.03 प्रतिशत, झारखंड 19.08 प्रतिशत, मध्य प्रदेश 15.84 प्रतिशत, तेलंगाना 8.98 प्रतिशत, महाराष्ट्र 6 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल 4.17 प्रतिशत एवं उत्तर प्रदेश 2.42 प्रतिशत, का स्थान आता है।

शेष कोयले का उत्पादन असम, जम्मू–कश्मीर व मेघालय में किया जाता है।

खनिज तेल अथवा पेट्रोलियम

तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम (ONGC) द्वारा 26 स्थलीय एवं सागरीय तेल संभावी बेसिनों का पता लगाया गया है। इसके अनुसार देश का कुल खनिज तेल भंडार 1750

लाख टन है। अंतर्राष्ट्रीय भूगर्भिक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में खनिज तेल का भंडार 620 करोड़ टन है वर्तमान देश के निम्नलिखित प्रमुख क्षेत्रों से खनिज तेल तथा पेट्रोलियम प्राप्त किया जा रहा है।

टिप्पणी

(i) **असम तेल क्षेत्र**– यहां के तेल क्षेत्रों में डिगबोई, नहरकटिया, दुर्गीजन, मोरान वसुरमा नदी घाटी प्रमुख हैं।

(ii) **गुजरात तेल क्षेत्र**– गुजरात राज्य में खंभात तथा अंकलेश्वर महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त नवगांव, कोसांबा, ओल्पाह, ढोलका, मेहसाना, कलोल आदि स्थानों पर भी तेल पाया जाता है। सौराष्ट्र में भावनगर से 45 कि.मी. दूर आलियावेट द्वीप में भी तेल खोजा जा चुका है।

(iii) **मुंबई हाई क्षेत्र**– मुंबई तट से 176 कि.मी. की दूरी पर मुंबई हाई क्षेत्र भी एक महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र है जहां से 1976 से ही तेल की प्राप्ति हो रही है। देश के कुल खनिज तेल उत्पादन का 60 प्रतिशत भाग इसी क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है। भारत में कच्चे तेल व प्राकृतिक गैस के उत्पादन में गुजरात का प्रथम स्थान है।

(iv) **कृष्णा–गोदावरी घाटी**– इस नदी घाटी अपतटीय क्षेत्र में भी खनिज तेल का उत्पादन किया जा रहा है। राजस्थान के बाड़मेर में केयर्न एनर्जी एवं ओएनजीसी के द्वारा संयुक्त रूप से मंगला तेल क्षेत्र से वाणिज्यिक स्तर पर तेल का उत्पादन प्रारंभ हो गया है। मंगला क्षेत्र पिछले दो दशकों में देश में तेल की सबसे बड़ी अपतटीय खोज है। ओएनजीसी ने पांचवीं पीढ़ी के अत्याधुनिक ड्रिलशिप वेल्फोर्ड डॉल्फिन के द्वारा गहरे समुद्र में तेल की खोज के लिए एक सागर समृद्धि परियोजना भी प्रारंभ की है।

प्राकृतिक गैस : प्राकृतिक गैस एक स्वच्छ ऊर्जा संसाधन है जो पेट्रोलियम के साथ व स्वतंत्र रूप से भी पाई जाती है। भारत में प्राकृतिक गैस दो प्रकार की पाई जाती है।

(क) कंप्रेस्ड नेचुरल गैस (CNG)

प्राकृतिक गैस को वाहनों में प्रयोग करने के लिए 200–250 कि.ग्रा. प्रति वर्ग से.मी. तक दबाया जाता है। इसलिए इसके दबे हुए रूप को कंप्रेस्ड नेचुरल गैस कहते हैं।

(ख) लिक्विफाइड नेचुरल गैस (LNG)

यह मुख्यतः प्राकृतिक गैस होती है, जिसे भंडारण व परिवहन की सुविधा की दृष्टि से तरल रूप में परिवर्तित किया जाता है। भारत में प्राकृतिक गैस अपतटीय क्षेत्र से 70. 17 प्रतिशत, असम से 9.44 प्रतिशत, गुजरात से 4.92 प्रतिशत, त्रिपुरा से 4.63 प्रतिशत, राजस्थान से 3.95 प्रतिशत और तमिलनाडु से 3.135 प्रतिशत, प्राप्त होती है। आंध्र प्रदेश में यनम काकीनाडा तट से 6 कि.मी. दूर 5061 मी. की गहराई पर प्राकृतिक गैस के नए भंडार प्राप्त हुए हैं। निजी क्षेत्र की रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड (RIL) ने बंगाल की खाड़ी में स्थित कृष्णा–गोदावरी बेसिन (केजी बेसिन) के डी–6 ब्लॉक में 2006 से प्राकृतिक गैस का उत्पादन प्रारंभ किया है।

टिप्पणी

जल विद्युत

भारत में नदियों की कुल जल विद्युत उत्पादन क्षमता 145000 MW है। अगस्त 2020 तक देश में जल विद्युत की स्थापित क्षमता चार लाख 45699 MW है जो कि देश की कुल स्थापित क्षमता का 12.3 प्रतिशत है। जल विद्युत को श्वेत कोयला भी कहा जाता है। यह एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है। देश में सर्वाधिक जल शक्ति संभावना ब्रह्मपुत्र बेसिन में है। इसके बाद प्रायद्वीपीय भारत के पूर्व की ओर बहने वाली नदियां आती हैं। विषम धरातल के कारण हिमालय क्षेत्र में जल शक्ति का सीमित विकास हो पाया है। देश में प्रथम जल विद्युत संयंत्र दार्जिलिंग के सितांग में 1897 में स्थापित हुआ। इसके बाद कर्नाटक के शिव समुद्रम (कावेरी नदी पर) में 1902 में दूसरा जल विद्युत संयंत्र स्थापित किया गया।

देश में सर्वाधिक जल शक्ति के संस्थापित क्षमता वाले राज्यों में आंध्र प्रदेश प्रथम है जबकि सर्वाधिक जल विद्युत का उत्पादन हिमाचल प्रदेश में किया जाता है। विद्युत क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि के बावजूद मांग बढ़ने के कारण मांग व आपूर्ति का असंतुलन उत्तम देखा गया है।

ऊर्जा नीति

भारत सरकार की नीति के अनुसार सभी के लिए विद्युत (Power for all) का उद्देश्य वर्ष 2022 तक देश के प्रत्येक व्यक्ति तक सस्ती, विश्वसनीय, टिकाऊ और नवीकरणीय ऊर्जा तक पहुंच प्रदान करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सरकार ने हाल ही में विद्युत अधिनियम (Electricity Act) 2003 में कुछ संशोधन करने की घोषणा की है। इन सुधारों में सब्सिडी वितरण हेतु 'प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (Direct Benefit Transfer-DBT) की प्रणाली का प्रयोग, विद्युत वितरण कंपनियां (डिस्काम्स) की वैधता, लागत आधारित दर, विद्युत अनुबंध प्रवर्तन प्राधिकरण की स्थापना और नियामकीय व्यवस्था को मजबूत बनाना है।

इसके साथ ही एक समावेशी राष्ट्रीय नवीकरण ऊर्जा नीति का विकास और शुल्कों का युक्तिकरण सम्मिलित है। बिजली क्षेत्र की अधिकांश समस्याएं डिस्कॉम वितरण कंपनियों के खराब निष्पादन से संबंधित हैं। इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2015 में उदय (उज्ज्वल डिस्कॉम एश्योरेंस योजना) को लांच किया गया था। इसके कुछ राज्यों में सकारात्मक परिणाम रहे।

मानव संसाधन

प्रकृति में उपलब्ध वे सभी पदार्थ जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं संसाधन कहलाते हैं। हमारे पर्यावरण में उपलब्ध वस्तुओं को संसाधनों में बदलने के लिए प्रकृति, तकनीक और संस्थाओं की अंतरनिर्भरता की आवश्यकता होती है। मानव तकनीकों की सहायता से प्रकृति से अंतरक्रिया करके अपने आर्थिक विकास के लिए संस्थाओं की स्थापना करता है। संसाधन प्रकृति के स्वतंत्र उपहार न होकर मानवीय गतिविधियों का परिणाम हैं। मानव स्वयं भी संसाधन निर्माण का एक आवश्यक घटक है। मानव ही प्रकृति में उपलब्ध तत्वों को संसाधनों में बदलता है।

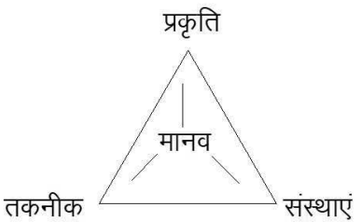

टिप्पणी

मानव संसाधन की अवधारणा मानव को परिसंपत्ति के रूप में देखती है। शिक्षा, प्रशिक्षण व चिकित्सा सेवाओं में निवेश के परिणामस्वरूप जनसंख्या मानव संसाधन के रूप में बदल जाती है।

मानव सभ्यता और संस्कृति की विकास यात्रा में प्राकृतिक, प्राविधिक एवं मानवीय संसाधनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। मानव को संसाधन मानकर इनके विकास की ओर सर्वप्रथम औद्योगिक संस्थानों ने ध्यान दिया। पश्चिमी देशों में आरम्भ हुई औद्योगिक क्रांति के पश्चात मनुष्य को कल कारखानों में मशीन की तरह उपयोग में लाने की प्रवृत्ति सभी देशों में विद्यमान थी। अग्रणी अर्थशास्त्री जॉन आर. कॉमन्स ने 1993 में अपनी पुस्तक 'दि डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ वैल्थ' में 'मानव संसाधन' शब्द का प्रयोग किया किन्तु इसका विस्तार से उल्लेख नहीं किया।

1910 से 1930 तक इस अवधारणा का प्रयोग मानव के मूल्यों को सही पहचान देने के लिए किया गया किन्तु 1950 में इसका अर्थ नियोक्ताओं के लिए किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन के रूप में किया गया। मानव संसाधन के इस प्रकार के प्रयोग की रिपोर्ट 1950 में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ई. वाइट बाके (E. Wight Bakke) ने की।

मानव को एक संसाधन मानने पर मुख्य चिन्ता का विषय यह है कि इन्हें एक वस्तु, पदार्थ की तरह मानकर इनका शोषण किया जाने लगता है। वास्तव में मनुष्य कोई वस्तु या संसाधन नहीं वरन एक उत्पादक विश्व में कार्य करने वाला रचनात्मक व सामाजिक प्राणी है। इसके विपरीत ISO 9001 (International Organization for Standardization) अन्तर्राष्ट्रीय मानक संगठन प्रक्रिया, क्रम व अन्तर्क्रिया का मानक स्थापित करती है जिससे प्रशासन को श्रम व उसके द्वारा उत्पादन के मानकीकरण का उत्तरदायित्व दिया जा सके। फ्रांस व जर्मनी जैसे कई देशों ने इन मानकों को अपनाया है, यद्यपि 2001 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने यह निर्णय लिया कि वह मानव संसाधन विकास के बारे में 1975 की 150 वीं अनुशंसा में संशोधन करेगा। जिसके परिणामस्वरूप यह माना गया कि 'श्रम एक वस्तु नहीं है'। यह भी माना गया कि एक अच्छे सामाजिक कल्याण तन्त्र व राजनीतिक अर्थव्यवस्था में सामाजिक सहमति के द्वारा श्रम को गतिशीलता प्रदान की जा सकती है और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को उत्पादक बनाया जा सकता है अर्थात श्रम विविध तरीकों से कुशलता व अनुभव अर्जित करते हुए एक से दूसरे उत्पादक संस्थान में सरलता से गतिशील हो सकता है।

मानव संसाधन से सम्बन्धित एक अन्य महत्वपूर्ण विषय विकासशील देशों से विकसित देशों में मानव पूंजी का प्रवास है। इस सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र ने विकासशील देशों के समर्थन में विदेशी सहायता के प्रवाह को बनाये रखने का समर्थन किया है

टिप्पणी

जिससे अधिक अवसरों के मिलने से मानव पूंजी के विकसित देशों में पलायन से विकासशील देश अपने मानव संसाधनों को प्रशिक्षण, कुशलता व अनुभव प्रदान करना बन्द न करें। इसलिए वर्तमान में मानव संसाधन विकास पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है।

प्रो. फ्रेड्रिक हार्बिसन के अनुसार, 'राष्ट्रों के धन का अन्तिम आधार मानवीय साधन हैं। पूंजी तथा प्राकृतिक साधन उत्पादन के निष्क्रिय साधन हैं। इसके विपरीत मानवीय साधन सक्रिय हैं। किसी भी उपक्रम की कार्यकुशलता उसके मानवीय साधनों की श्रेष्ठता पर ही आधारित होती है।'

संसाधनों का उपयोग

हमारा युग वैश्वीकरण का युग है जिसे जलवायु परिवर्तन उच्च स्तरीय औद्योगिक व तकनीकी विकास, सामाजिक व आर्थिक आवश्यकताओं की वृद्धि आदि के साथ जाना जाता है। ये सभी प्रक्रियाएं वातावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं, प्राकृतिक संसाधनों की समाप्ति, रासायनिक, तकनीकी, जैविक और घरेलू प्रदूषण व जीवन की गुणवत्ता का ह्रास इनके कारण देखा जा सकता है। विश्व में प्राकृतिक संसाधनों का उपयुक्त उपयोग चर्चा का एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है जिसके सम्बन्ध में बहुत से कानूनी व नियामक उपायों की भी बात की जाती है। इसलिए लगभग चालीस वर्ष पूर्व विश्व के विभिन्न देशों के प्रतिनिधि संयुक्त राष्ट्र संघ के एक सम्मेलन में एकत्रित हुए थे और इस पर विचार किया कि पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधन जिनमें, हवा, जल, भूमि, पौधे, जीव व सम्पूर्ण पारिस्थितिक तन्त्र के तत्व आते हैं, को इस प्रकार संरक्षित और प्रबन्धित किया जाये कि वे न केवल वर्तमान पीढ़ियों के लिए वरन भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी सुरक्षित और उपयोगी रहें।

संसाधन किसी भी अर्थव्यवस्था की प्रगति के आधार हैं और ये मुख्यतः दो प्रकार के कार्य करते हैं– वस्तुओं और सेवाओं के लिए कच्चा माल उपलब्ध करवाना तथा पर्यावरण सम्बन्धी सेवाएं प्रदान करना। प्राकृतिक संसाधनों का सामान्य वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है–

- अनवीकरणीय और गैर पुनर्चक्रण योग्य संसाधन, जैसे जीवाश्म ईंधन
- अनवीकरणीय किन्तु पुनर्चक्रण योग्य संसाधन, जैसे खनिज
- तीव्रता से नवीकरणीय संसाधन, जैसे मत्स्य उत्पादन
- धीमी गति से नवीकरणीय होने वाले संसाधन, जैसे वन
- पर्यावरणीय संसाधन, जैसे वायु, जल व मृदा
- प्रवाह वाले संसाधन, जैसे सौर व वायु उर्जा।

नवीकरणीय व अनवीकरणीय संसाधनों के सम्बन्ध में संसाधनों का ह्रास एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नवीकरणीय संसाधनों का ह्रास तब होता है जब उनका संदोहन नवीकरण की दर से अधिक होता है। पर्यावरण सेवाएं उत्पादन व उपभोग में होने वाले अवशेषों का पुनर्चक्रण व सम्मिलन कर लेती हैं। प्रवाह वाले व पर्यावरणीय संसाधनों का कभी ह्रास नहीं होता और ये हमेशा रहते हैं किन्तु ये प्रदूषित हो सकते

टिप्पणी

हैं और गुणवत्ता की समाप्ति के कारण बेकार हो जाते हैं। सम्पूर्ण इतिहास में प्राकृतिक संसाधन प्रचुरता में उपलब्ध रहे हैं यदि इनमें ह्रास हुआ तो प्रायः नयी तकनीक व विकास की रणनीति से इनके स्थान पर नये संसाधनों को खोज लिया गया। जैसे–जैसे समाज जटिल होता गया संसाधनों की प्रचुरता वित्तीय व आधारभूत संरचना सम्बन्धी सम्पत्तियों में बदलती गयी। रटान (1993) में उल्लेख करते हैं कि संसाधनों और पर्यावरण सम्बन्धी चिन्ता की तीन लहरें इतिहास में देखी गयी हैं।

1940 के अन्तिम वर्षों में, 1950 के दशक के प्रारम्भ में प्रारम्भिक चिन्ता संसाधनों की उपलब्धता व आर्थिक विकास के बीच मात्रात्मक सम्बन्ध की थी जिसके कारण उत्पादन की दर में वृद्धि करने के लिए तीव्र तकनीकी प्रगति हुई।

1960 के अन्त में व 1970 के दशक के प्रारम्भ में यह विचार किया जाने लगा कि सीमित संसाधन आर्थिक वृद्धि को सीमित कर देंगे साथ ही उस समय यह भी चिन्ता का विषय था कि वृद्धि से होने वाले प्रदूषण को समाप्त करके पुनर्चक्रण करने की पर्यावरण क्षमता भी सीमित है। अतः इससे पर्यावरण सेवाओं के सम्बन्ध में गम्भीर हितों का टकराव उत्पन्न हुआ। एक तरफ तो पारिस्थितिकी तन्त्र की वस्तुओं के उत्पादन व उपभोग से उत्पन्न प्रदूषण को नियन्त्रित करने की पारिस्थितिकी तंत्र की क्षमता के संबंध में चिन्ता थी दूसरी ओर प्रति व्यक्ति आय बढ़ने के परिणामस्वरूप पर्यावरण सम्बन्धी वस्तुओं और सेवाओं के उपभोग की मांग बढ़ रही थी। 1972 में क्लब ऑफ रोम ने एक रिपोर्ट 'लिमिट टू ग्रोथ' (विकास की सीमा) प्रकाशित की जिसने सम्पूर्ण विश्व का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया कि यदि संसाधनों के ह्रास की वर्तमान दर परिवर्तित नहीं हुई तो इस पृथ्वी पर जीवन का अर्थ निश्चित है। इसने रटन की चिन्ता की तृतीय लहर को उत्पन्न किया जो 1980 के दशक के मध्य में पर्यावरण परिवर्तन के कारण पर्यावरण गुणवत्ता, खाद्य उत्पादन और वर्तमान व भविष्य की पीढ़ियों के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में थी। यद्यपि स्लब ऑफ रोम की रिर्पार्ट दो मुख्य कारणों से विवादित रही एक तो यह कि तकनीकी प्रगति के कारण उस समय अनुमानित किये गये संसाधनों से वास्तविकता में संसाधन अधिक मात्रा में पाये गये व द्वितीय संसाधनों के प्रयोग की कुशलता, वैकल्पिक संसाधनों के विकास व पुनर्चक्रण की तकनीकों के कारण संसाधनों का प्रयोग उस मात्रा में नहीं बढ़ा जितना अनुमानित किया गया था।

किन्तु बढ़ते मानव विकास व प्रगति के कारण बहुत सी जैव विविधताओं का विलुप्त होना, अनवीकरणीय संसाधनों की कमी व पर्यावरणीय संसाधनों का प्रदूषण कुछ ऐसे स्पष्ट तथ्य हैं जिसने मानव को एक से दूसरी पीढ़ी के मध्य संसाधनों की उपलब्धता की समानता पर सोचने के लिए विवश किया। यही कारण है कि आज संस्थिर (Sustainable) विकास के लक्ष्यों पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है।

अपनी प्रगति जांचिए

7. भारत की प्राकृतिक वनस्पति का वर्गीकरण सर्वप्रथम एच.जी. चैम्पियन ने कब किया?

(क) सन् 1932 (ख) सन् 1934

(ग) सन् 1936 (घ) सन् 1938

टिप्पणी

8. भारत में सर्वाधिक वन क्षेत्रफल वाले राज्यों में किस राज्य का स्थान प्रथम है?

(क) मिजोरम (ख) मध्य प्रदेश

(ग) अरुणाचल प्रदेश (घ) असम

9. ब्रिटिश सरकार ने सर्वप्रथम वन नीति किस सन् में बनाई?

(क) सन् 1864 (ख) सन् 1874

(ग) सन् 1884 (घ) सन् 1894

10. भारत में कच्चे तेल व प्राकृतिक गैस के उत्पादन में किस राज्य का प्रथम स्थान है?

(क) मध्य प्रदेश (ख) गुजरात

(ग) राजस्थान (घ) आंध्र–प्रदेश

2.5 जनसंख्या विकास

मानव जनसंख्या प्रत्येक देश का एक अभिन्न घटक है जिसके बिना देश की कल्पना नहीं की जा सकती। वास्तव में जनसंख्या ही एक देश को विकसित बनाती है।

जनसंख्या एक संसाधन के साथ ही राष्ट्रीय विकास का आधार है। भारत के संदर्भ में यह कथन और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में चीन के पश्चात दूसरा स्थान रखता है। भारत की जनसंख्या 1 मार्च, 2011 को 121.07 करोड़ अंकित की गई है। इस विशाल जनसंख्या का भारत के आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक रूप पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

जनसंख्या वृद्धि

जनसंख्या वृद्धि दो समान बिंदुओं के बीच किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाले लोगों की संख्या में परिवर्तन को कहते हैं। इसकी दर को प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। भारत में जनसंख्या वृद्धि का दशकीय स्वरूप 1901 से 2011 तक दर्शाया गया है।

तालिका 1

भारत की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि 1901– 2011

जनगणना वर्ष	जनसंख्या	दशकीय वृद्धि		दशकीय वृद्धि में परिवर्तन	
		पूर्ण	प्रतिशत	पूर्ण	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6
1901	23,83,96327	–	–	–	–
1911	25,20,93,390	1,36,97,063,	5–75	–	–
1921	25,13,21,213	–7,72,177	0.13	1,44,69,240	6.06
1931	27,89,77,238	2,76,56,025	11.00	2,84,28,202	11.31
1941	31,86,60,580	3,96,83,342	14.22	1,20,27,317	3.22

टिप्पणी

1951	36,10,88,090	4,24,20,485	13.31	27,37,143	−0.9
1961	43,92,34,771	7,76,82,873	21.51	3,52,62,388	8.20
1971	54,81,59,652	10,89,24,881	24.80	3,12,42,008	3.29
1981	68,33,29,097	13,51,69,445	24.66	2,62,44,564	−0.14
1991	84,64,21,039	16,30,91,942	23.87	2,79,22,497	−0.79
2001	1,02,87,37,436	18,23,16,397	21.54	1,92,24,455	−2.33
2011	1,21,07,26,932	18,19,89,496	17.69	−3,26,901	−3.85

स्रोतः भारत 2016 प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार पृ. 101

www.censusindia.gov.in/2011census/P?CA/A-2 Data, Tables/00%20A%202 - India - pdf के अनुसार

2011 की कुल जनसंख्या – 1,21,08,54,977

पुरुष जनसंख्या – 62,32,70,258

महिला जनसंख्या – 58,76,84,719

दशकीय वृद्धि दर – 17.70 प्रतिशत

भारत में राज्यवार जनसंख्या वृद्धि का स्वरूप

राज्य–केंद्र शासित प्रदेश	जनसंख्या वृद्धि दर (%)		अंतर
	1991– 01	2001–11	1991 –2011
राज्य			
आंध्र प्रदेश	14.59	10.98	−3.61
अरुणाचल प्रदेश	27.00	26.03	−0.97
असम	18.92	17.07	−1.85
बिहार	28.62	25.72	−3.20
छत्तीसगढ़	18.27	22.61	+4.34
गोवा	15.21	8.23	−6.98
गुजरात	22.66	19.28	−3.38
हरियाणा	28.43	19.90	−8.53
हिमाचल प्रदेश	17.54	12.94	−4.60
जम्मू एवं कश्मीर	29.43	23.64	−5.79
झारखंड	23.36	22.42	−0.94
कर्नाटक	17.51	15.60	−1.91
केरल	9.43	4.91	−4.52
मध्य प्रदेश	24.26	20.35	−3.91

टिप्पणी

महाराष्ट्र	22.73	15.99	–6.74
मणिपुर	24.86	18.63	–6.23
मेघालय	30.65	27.95	–2.20
मिजोरम	28.82	23.48	–5.34
नागालैंड	64.53	–0.58	–65.11
उड़ीसा	16.25	14.05	–2.20
पंजाब	20.10	13.89	–6.21
राजस्थान	28.41	21.31	–7.10
सिक्किम	33.06	12.89	–20.17
तमिलनाडु	11.72	15.61	–3.89
त्रिपुरा	16.03	14.84	–1.19
उत्तर प्रदेश	25.85	20.23	–5.62
उत्तराखंड	20.41	18.81	–1.60
पश्चिम बंगाल	17.77	13.85	–3.93
केंद्र शासित प्रदेश			
अंडमान निकोबार द्वीप समूह	26.90	6.86	–20.04
चंडीगढ़	40.28	17.19	–23.09
दादरा नगर हवेली	59.22	55.88	–3.34
दमन एवं दीव	55.73	53.76	–1.97
दिल्ली	47.02	21.21	–25.81
लक्षद्वीप	17.30	6.30	–11.00
पुडुचेरी	20.62	28.08	+7.46
भारत	21.54	17.69	–3.85

भारत में राज्यवार जनसंख्या वितरण (2011)

राज्य –केंद्र शासित प्रदेश	जनसंख्या 2011	भारत की कुल जनसंख्या में प्रतिशत
उत्तर प्रदेश	19,95,81,477	16.49
महाराष्ट्र	11, 23, 72, 972	9.29
बिहार	10, 38, 04,673	8.58
पश्चिम बंगाल	9,13,47,769	7.55
आंध्र प्रदेश तेलंगाना सहित	8,46,65,533	7.00

टिप्पणी

मध्य प्रदेश	7,23,83,628	5.98
तमिलनाडु	7,21,38,958	5.96
राजस्थान	6,86,21,012	5.67
कर्नाटक	6,11,30,704	5.05
गुजरात	6,03,83,628	4.99
ओडिशा	4,19,47,358	3.47
केरल	3,33,87,677	2.76
झारखंड	3,29,66,238	2.72
असम	3,11,69,272	2.58
पंजाब	2,77,04,236	2.29
छत्तीसगढ़	2,55,40,196	2.11
हरियाणा	2,53,53,080	2.09
दिल्ली	1,67,53,235	1.38
जम्मू कश्मीर	1,25,48,926	1.04
उत्तराखंड	1,01,16,752	0.84
हिमाचल प्रदेश	68,65,509	0.57
त्रिपुरा	36,71,032	0.30
मेघालय	29,64,007	0.24
मणिपुर	27,21,756	0.22
नागालैंड	19,80,602	0.16
गोवा	14,57,723	0.12
अरुणाचल प्रदेश	13,82,611	0.11
पांडिचेरी	12,44,464	0.10
चंडीगढ़	10,54,686	0.08
मिजोरम	10,91,014	0.09
सिक्किम	6,07,688	0.05
अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	3,79,944	0.03
दादरा नगर हवेली	3,42,853	0.03
दमन एवं दीव	2,42,911	0.02
लक्षद्वीप	64,4,29	0.00051
भारत	1,21,01,93,422	100.00

टिप्पणी

भारत की जनसंख्या वृद्धि के स्वरूप से स्पष्ट है कि 1911–21 के दशक को छोड़कर भारत में निरंतर तीव्र वृद्धि अंकित की गई है। 1911–21 में न्यूनतम वृद्धि 0.31 प्रतिशत रही क्योंकि इस दशक में महामारी, सूखा तथा अकाल से जनसंख्या वृद्धि पर विपरीत प्रभाव रहा। सर्वाधिक दशकीय वृद्धि का प्रतिशत 24.80 दशक 1961–71 में रहा, 1971–81 के दशक में भी वृद्धि दर 24.66 प्रतिशत अंकित की गई। 1991 में 23.87 तथा 2001 में घट कर 21.54 प्रतिशत रही। 2011 की जनगणना में यह और घट कर 17.69 अथवा 17.70 प्रतिशत रही अर्थात दशकीय वृद्धि में 3.85 प्रतिशत की गिरावट (2001–2011) देखी गई।

संपूर्ण रूप से भारत की जनसंख्या वृद्धि की 1901 से 2011 की प्रवृत्ति को निम्नांकित 4 अवस्थाओं में व्यक्त किया जा सकता है।

अवस्था I– मंद वृद्धि : 1901 से 1921 की अवधि को भारत की जनसंख्या की वृद्धि की स्थिर अवस्था कहा जाता है क्योंकि इस अवधि में वृद्धि दर अत्यंत निम्न थी, यहां तक कि 1911–1921 के दौरान ऋणात्मक वृद्धि दर दर्ज की गई। जन्म दर और मृत्यु दर दोनों ऊंची थी, जिससे वृद्धि दर निम्न बनी रही। निम्न स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाएं अधिकतर लोगों की निरक्षरता, भोजन और अन्य आधारभूत आवश्यकताओं का अपर्याप्त वितरण इस अवधि में मोटे तौर पर उच्च जन्म और मृत्यु दरों के लिए उत्तरदायी थे। देश में महामारी, सूखा तथा अकाल भी प्रमुख कारण थे।

अवस्था II– स्थिर वृद्धि : 1921–1951 के दशकों को जनसंख्या की स्थिर वृद्धि की अवस्था के रूप में जाना जाता है। देशभर में स्वास्थ्य और स्वच्छता में व्यापक सुधारों ने मृत्यु दर को नीचे ला दिया। साथ ही साथ बेहतर परिवहन और संचार तंत्र से वितरण प्रणाली में सुधार हुआ। फलस्वरुप अशोधित जन्म दर ऊंची बनी रही जिससे पिछली अवस्था की तुलना में वृद्धि दर उच्चतर हुई। 1930 के दशक की महान आर्थिक मंदी और द्वितीय विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि में यह वृद्धि प्रभावशाली थी।

अवस्था III– तीव्र वृद्धि : 1951–81 के दशकों को भारत में जनसंख्या विस्फोट की अवधि के रूप में जाना जाता है। यह देश में मृत्यु दर में तीव्र ह्रास और जनसंख्या की उच्च प्रजनन दर के कारण हुआ। औसत वार्षिक वृद्धि दर 2.2 प्रतिशत तक ऊंची रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यही वह अवधि थी जिसमें एक केंद्रीकृत नियोजन प्रक्रिया के माध्यम से विकासात्मक कार्यों को आरंभ किया गया। अर्थव्यवस्था सुधरने लगी जिससे अधिकांश लोगों की जीवन की दशाओं में सुधार सुनिश्चित हुआ। परिणामस्वरूप जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि उच्च और वृद्धि दर पर उच्चतर हुई। इन सबके अतिरिक्त तिब्बतियों, बांग्लादेशियों, नेपालियों को देश में लाने वाले अंतर्राष्ट्रीय प्रवास और यहां तक कि पाकिस्तान से आने वाले लोगों ने भी उच्च वृद्धि दर में योगदान दिया।

अवस्था IV– घटती वृद्धि : 1981 के पश्चात, 2011 तक देश की जनसंख्या की वृद्धि दर, यद्यपि ऊंची बनी रही, परंतु धीरे–धीरे मंद गति से घटने लगी। ऐसी जनसंख्या वृद्धि के लिए अशोधित जन्म दर की अधोमुखी प्रवृत्ति को उत्तरदायी माना जाता है। बदले में यह देश में विवाह के समय औसत आयु में वृद्धि जीवन की गुणवत्ता विशेष रूप से स्त्री शिक्षा में सुधार से प्रभावित हुई।

टिप्पणी

जनसंख्या वृद्धि की घटती दरों को दशकीय वृद्धि के ये आंकड़े स्पष्ट करते हैं–

1981 – 24.66 दशकीय वृद्धि प्रतिशत

1991 – 23.87 दशकीय वृद्धि प्रतिशत

2001 – 21.54 दशकीय वृद्धि प्रतिशत

2011 – 17.69 दशकीय वृद्धि प्रतिशत

राज्य स्तरीय जनसंख्या वृद्धि

भारत के राज्यों में जनसंख्या वृद्धि में अत्यधिक भिन्नता देखी जा सकती है। वर्ष 2011 में देश के राज्यों व केंद्र शासित प्रदेशों में सर्वाधिक वृद्धि दादरा नगर हवेली में 55.88 प्रतिशत रही तथा सबसे कम वृद्धि नागालैंड में –0.50 प्रतिशत अंकित की गई। देश के 14 राज्यों और 4 केंद्र शासित प्रदेशों में वृद्धि दर राष्ट्रीय औसत 17.69 प्रतिशत से अधिक रही। जिन राज्यों में 2001–11 में जनसंख्या वृद्धि 15 प्रतिशत से कम रही वे हैं गोवा, हिमाचल प्रदेश, केरल, नागालैंड, पंजाब, सिक्किम, त्रिपुरा और पश्चिमी बंगाल। केंद्र शासित प्रदेश में लक्षद्वीप में केवल 6.30 प्रतिशत वृद्धि हुई। विगत (1990–2001) और वर्तमान (2001–11) के दशकों के दौरान जनसंख्या वृद्धि के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि देश के 26 राज्यों और 6 केंद्र शासित प्रदेशों में जनसंख्या वृद्धि में घटाव की प्रवृत्ति देखी गई। सर्वाधिक घटाव 65 प्रतिशत नागालैंड और न्यूनतम घटाव 6.94 प्रतिशत झारखंड में देखा गया है। देश में 15 राज्यों में घटाव का प्रतिशत राष्ट्रीय औसत 3.85 से अधिक तथा शेष 11 राज्यों में कम पाया गया है दूसरी तरफ पिछले दो दशकों के बीच धनात्मक वृद्धि प्रदर्शित करने वाले राज्यों का प्रतिशत 3.89 प्रतिशत (तमिलनाडु) से 7.46 प्रतिशत (पांडुचेरी) के बीच पाया गया है।

भारत में जनसंख्या का वितरण अत्यधिक समान है। इसका मूल कारण यहां की प्राकृतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिस्थितियां हैं जो न केवल जनसंख्या वितरण को प्रभावित करती हैं अपितु उसे नियंत्रित करती हैं। 2011 की जनसंख्या के राज्यवार आंकड़ों से स्पष्ट है कि भारत में सर्वाधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश में निवास करती है। यहां देश की 16.49 प्रतिशत जनसंख्या का निवास है। महाराष्ट्र 9.29 प्रतिशत जनसंख्या के साथ दूसरे स्थान पर है। बिहार में 8.58 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 7.55 प्रतिशत, आंध्र प्रदेश में 7.00 प्रतिशत जनसंख्या रहती है। तमिलनाडु, राजस्थान व कर्नाटक में देश की 5 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निवास करती है। भारत में सबसे कम जनसंख्या केंद्र शासित प्रदेश लक्षद्वीप में निवास करती है। अन्य कम जनसंख्या वाले केंद्र शासित प्रदेश हैं दमन एवं दीव (0.02 प्रतिशत), दादरा नगर हवेली (0.03 प्रतिशत), अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह (0.03 प्रतिशत), राज्यों में सिक्किम सबसे कम जनसंख्या वाला राज्य है जहां 0.05 प्रतिशत जनसंख्या का निवास है। देश में 1 प्रतिशत से कम जनसंख्या निवास करने वाले राज्य / केंद्र शासित प्रदेश हैं– उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, त्रिपुरा, मेघालय, मणिपुर, नागालैंड, गोवा, अरुणाचल प्रदेश, पांडुचेरी, चंडीगढ़, मिजोरम व सिक्किम देश का जनसंख्या वितरण पूर्णतया भौगोलिक पर्यावरण द्वारा नियंत्रित है। नदियों के उपजाऊ मैदानी भाग तथा संसाधनों से युक्त प्रदेशों में अधिक जनसंख्या है। दूसरी ओर पर्वतीय तथा असमतल धरातलीय क्षेत्र जहां प्राकृतिक परिस्थितियां अपेक्षाकृत अनुकूल नहीं हैं वहां कम जनसंख्या है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

11. भारत में सबसे कम जनसंख्या किस केंद्र शासित प्रदेश में निवास करती है?
    (क) दिल्ली (ख) पुडुचेरी
    (ग) लक्षद्वीप (घ) चंडीगढ़
12. भारत में सर्वाधिक जनसंख्या किस प्रदेश में निवास करती है?
    (क) उत्तर प्रदेश (ख) महाराष्ट्र
    (ग) राजस्थान (घ) गुजरात
13. भारत में एक प्रतिशत से कम जनसंख्या किस राज्य में निवास करती है?
    (क) उत्तराखंड (ख) हिमाचल प्रदेश
    (ग) अरुणाचल प्रदेश (घ) उपर्युक्त सभी।

2.6 पर्यावरण अंतराफलक

पूरे विश्व में विभिन्न कारणों से पर्यावरण दबाव की स्थिति में है। भारत के सन्दर्भ में भी कई क्षेत्रों में अधिक जनसंख्या घनत्व प्राकृतिक संसाधनों और वहन की क्षमता पर दबाव डाल रहा है। निर्धनता व आर्थिक वृद्धि दर में वृद्धि हुई इसके अनेक कारण हैं। भारत में पर्यावरण संरक्षण पर 70 के दशक से ही अत्यधिक महत्व दिया जा रहा है।

उल्लेखनीय है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 246 संसद की सातवीं अनुसूची की सूची–I (संघ सूची) में किसी मामले के संदर्भ में कानून बनाने की शक्ति प्रदान करता है और राज्य विधानमंडल की सूची–II (राज्य सूची) में किसी मामले के संदर्भ में कानून बनाने की शक्ति प्रदान करता है। सूची–III (समवर्ती सूची) में विषयों पर संसद या राज्य विधान मंडल दोनों ही कानून बना सकते हैं और विवाद की स्थिति में सामान्यतया केंद्रीय विधान अभिभावी होंगे, परंतु अनुच्छेद 245(2) के प्रावधान के अनुसार यदि राष्ट्रपति द्वारा अनुमति दे दी जाए तो राज्य में राज्य के कानूनों को अभिभावी होने के लिए समर्थ बनाते हैं। एक विषय के रूप में 'पर्यावरण' का किसी सूची की सातवीं अनुसूची में कोई स्थान नहीं है। संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम 1976 के परिणामस्वरूप संविधान में अंतःस्थापित अनुच्छेद 48(क) में राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों के रूप में एक प्रावधान किया गया है कि राज्य देश में पर्यावरण को सुरक्षित रखने और इसमें सुधार करने तथा वनों तथा वन्यजीवन की रक्षा करने का प्रयास करेगा। उक्त संविधान संशोधन अधिनियम के तहत वन और वन्यजीवों और पक्षियों के संरक्षण विषय को सातवीं अनुसूची की राज्य सूची से समवर्ती सूची में ले जाया गया। संविधान संशोधन अधिनियम का एक उद्देश्य वास्तव में 'सामाजिक आर्थिक क्रांति' जो गरीबी और अज्ञानता तथा बीमारियों और अवसरों की असमानता को समाप्त करेगी, को प्राप्त करने में उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करना था।

पर्यावरण से संबंधित विभिन्न विषयों को निम्न प्रकार से 'संघ', ' राज्य' व समवर्ती सूची में वितरित किया गया है।

टिप्पणी

केंद्रीय विषय

- अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में हिस्सा लेना और विदेशों के साथ संधियां/करार आदि कार्यान्वित करना (13)
- रेलवे (22), राष्ट्रीय राजमार्ग (23), राष्ट्रीय जलमार्ग (24), वायु मार्ग (29)
- उद्योग (केंद्र सरकार के अधीन) (52)
- तेल क्षेत्रों का नियंत्रण (53)
- प्रादेशिक जल सीमाओं के बाहर मछली पकड़ना (57)
- जी. एस. आई., बी. एस. आई. और जेड. एस. आई. (68)
- मौसम विज्ञान संगठन (68)
- अन्तर्राज्यीय स्थानांतरण और अंतर्राज्य संगरोध (81)
- किसी कर (97) सहित कोई विषय जिसका सूची II (राज्य सूची) और सूची III (समवर्ती सूची) में उल्लेख न किया गया हो।

  (किसी विषय के पास कोष्ठक की संख्या सातवीं अनुसूची की संघ सूची में प्रविष्टियों की क्रम संख्या है)

राज्य सूची

- भूमि (18) और जल (17)
- जन स्वास्थ्य (6), कृषि (14), पशुधन (15), मत्स्य पालन (21)
- उद्योग (रक्षा या कानून द्वारा संघीय नियंत्रण के अंतर्गत को छोड़कर) (24)
- 1976 तक वन और वन्य जीव तथा पक्षियों का संरक्षण राज्य का विषय था

  (किसी विषय के सम्मुख आने वाले कोष्ठक की संख्या सातवीं अनुसूची की संघ सूची में प्रविष्टियों की क्रम संख्या है)

समवर्ती सूची

- वन (17 क) वन्य जीव और पक्षियों का संरक्षण (17 ख)
- अंतर्राज्यीय जल मार्ग और नदी घाटी के विनियम (56)
- संक्रामक बीमारियों का अंतर्राज्यीय संक्रमण (29)
- यांत्रिक रूप से संचालित होने वाले वाहन (35)
- फैक्ट्रियां (36) बॉयलर (37)
- विद्युत (38)
- खान और मिनरल (23) वास्तव में राज्य विषय परंतु लोकहित में विधान बनाने की शक्ति केंद्र सरकार के पास है (54)
- आर्थिक और सामाजिक योजना (20)

  (किसी विषय के सम्मुख आने वाले कोष्ठक की संख्या सातवीं अनुसूची की संघ सूची में प्रविष्टियों की क्रम संख्या है)

टिप्पणी

संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम 1976 एक प्रकार से एक ऐतिहासिक घटना थी। इस संशोधन का विशिष्ट उद्देश्य नीति निदेशक तत्वों को व्यापक बनाना और मौलिक अधिकार पर इसे वरीयता देना था, ताकि सामाजिक–आर्थिक सुधारों को आसान बनाया जा सके। अन्य बातों के साथ इस संशोधन में संविधान में एक नया भाग जोड़ दिया गया, जिसे मूल कर्तव्य कहा गया। पर्यावरणीय मामलों के संदर्भ में इस अधिनियम ने संविधान में निम्न परिवर्तन किए।

- नीति निदेशक तत्वों में एक नया अनुच्छेद 48क अंतःस्थापित किया गया जिससे कि 'राज्य देश के पर्यावरण की रक्षा करने और वनों और वन्यजीवों को सुरक्षित करने' का प्रयास करेगा।
- नए सृजित भाग 'मूल कर्तव्य' में एक नया अनुच्छेद 51क अंतःस्थापित किया गया, जिसके तहत अन्य बातों के साथ वनों, झीलों, नदियों और वन्यजीवों सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करना और इसमें सुधार करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य बनाया गया।
- सातवीं अनुसूची की सूची III (समवर्ती सूची में) दो नई प्रविष्टियां अंतःस्थापित की गई। नामतः "17क वन" और "17ख वन्यजीवों और पक्षियों की रक्षा" और सूची II (राज्य सूची) में तदनुरूपी प्रविष्टियां 19 और 20 को विलोपित कर दिया गया।

यद्यपि इस संशोधन के द्वारा 'वन और वन्य जीव' और 'पक्षियों' के संरक्षण विषय को राज्य सूची से समवर्ती सूची में स्थानांतरित कर दिया गया किंतु पर्यावरण को समवर्ती सूची में नहीं रखा गया जिसके कारण पर्यावरण संरक्षण के एकीकृत प्रयासों में कई स्थानों पर व्यवधान देखे गए।

भारत में समय–समय पर पर्यावरण संरक्षण के लिए विभिन्न कानून बनाए गये।

पर्यावरण कानून जल संरक्षण संबंधी अधिनियम या एक्ट

- रिवर बोर्ड्स एक्ट, 1956
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1977
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986

वायु प्रदूषण संबंधी कानून

- फैक्टरीज एक्ट 1948
- इनफ्लेमेबट्स सबस्टेसेज एक्ट 1952
- वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986

भूमि प्रदूषण संबंधी कानून

- फैक्टरीज अधिनियम 1948
- इंडस्ट्रीज (डेवलपमेंट एंड रेगुलेशन) अधिनियम 1951
- इनसेक्टीसाइड्स एक्ट 1968
- अर्बन लैंड (सीलिंग एंड रेगुलेशन) अधिनियम 1976

टिप्पणी

वन तथा वन्य जीव संबंधी कानून

- फॉरेस्टोस कंजर्वेशन अधिनियम 1960
- वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन अधिनियम 1972
- फॉरेस्ट (कंजर्वेशन) अधिनियम 1980
- वाइल्ड लाइफ (प्रोटेक्शन) अधिनियम 1995
- जैव विविधता अधिनियम 2002

पर्यावरण नीति 2006

भारत में नई पर्यावरण नीति 2006 में लागू की गई थी। यह नीति विभिन्न सहभागियों जैसे सरकारी अभिकरणों, स्थानीय समुदायों, शैक्षिक व वैज्ञानिक संस्थानों, निवेश समुदायों एवं अंतर्राष्ट्रीय विकास सहयोगियों द्वारा उनसे संबंधित संसाधनों के उपयोग तथा पर्यावरण प्रबंधन के सशक्तिकरण हेतु उनकी भागीदारी को प्रोत्साहित करती है। यह पर्यावरण के विभिन्न क्षेत्रों की वर्तमान नीतियों का एकीकरण करती है। नियामकीय सुधार पर्यावरणीय संरक्षण कार्यक्रम एवं परियोजना केंद्र, राज्य व स्थानीय सरकार द्वारा कानूनों के पुनरावलोकन एवं उनके कार्यान्वयन में इसकी भूमिका मार्गदर्शन देने की है। यह नीति पर्यावरणीय संरक्षण कार्यक्रम एवं परियोजना केंद्र, राज्य व स्थानीय सरकारों द्वारा कानूनों के पुनरावलोकन एवं उनके कार्यान्वयन में मार्गदर्शन करती है। इस नीति की मुख्य विषय वस्तु पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण करके सबके कल्याण व आजीविका को सुनिश्चित करना है। यह इस तथ्य पर बल देती है कि संरक्षण का मुख्य आधार किसी संसाधन पर निर्भर रहने वाले लोगों को संसाधन निम्नीकरण के स्थान पर उसके संरक्षण व आजीविका के बेहतर अवसर प्राप्त हों।

सतत विकास और भारत

ट्रांसफॉर्मिंग आवर वर्ल्डः द 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट के संकल्प को, जिसे सतत विकास लक्ष्यों के नाम से भी जाना जाता है, भारत सहित 193 देशों में सितंबर 2015 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की उच्च स्तरीय बैठक में स्वीकार किया गया और 1 जनवरी 2016 को लागू किया गया। सतत विकास लक्ष्यों का उद्देश्य सबके लिए समान, न्याय संगत सुरक्षित, शांतिपूर्ण समृद्ध और रहने योग्य विश्व का निर्माण करना और विकास के तीनों पहलुओं अर्थात सामाजिक समावेश, आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण को व्यापक रूप से समाविष्ट करना है। सहस्राब्दी विकास लक्ष्य के बाद जो लक्ष्य 2000 से 2015 तक के लिए निर्धारित किए गए थे, विकसित इन नए लक्ष्यों का उद्देश्य विकास के अधूरे कार्यों को पूरा करना और ऐसे विश्व की संकल्पना को मूर्त रूप देना है, जिसमें कम चुनौतियां और अधिक आशाएं हों।

उल्लेखनीय है कि सतत विकास की अवधारणा 1987 में संयुक्त राष्ट्र की एक समिति ने प्रस्तुत की थी। उस समय संपूर्ण विश्व आर्थिक विकास के कारण पर्यावरण पर बढ़ने वाले दबाव के कारण परेशान था व विकास और पर्यावरण की प्राथमिकता से जूझ रहा था। इस समस्या पर विचार के लिए संयुक्त राष्ट्र ने नार्वे की तत्कालीन प्रधानमंत्री ग्रो हरलेम ब्रुटलैंड की अध्यक्षता में 1987 में एक समिति गठित की। इस कमीशन को संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास आयोग (UNCED) के रूप में जाना

टिप्पणी

जाता है। इसे ब्रुटलैंड कमीशन के नाम से भी जाना जाता है। आयोग द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट का शीर्षक था 'हमारा साझा भविष्य'। ब्रुटलैंड कमीशन में सतत पोषणीय विकास को इस प्रकार परिभाषित किया गया– "भविष्य की पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता से बिना समझौता किए वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति।" सतत् अथवा स्थायी विकास वह विकास है जिसके अंतर्गत भावी पीढ़ियों के लिए आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमताओं से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। विकास व पर्यावरण में संतुलन करके विकास करना ही स्थाई विकास है।

जलवायु परिवर्तन एवं भारत

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन हमारे समक्ष विद्यमान सबसे गंभीर पर्यावरणीय संकट है। यह केवल पर्यावरणीय समस्या भर नहीं है बल्कि वैश्विक से लेकर स्थानीय स्तर तक अपने बहुस्तरीय चरित्र में एक अभूतपूर्व परिदृश्य है। जलवायु परिवर्तन का संबंध हमारे कार्बन उत्सर्जन से है। वैश्विक कार्बन प्रणाली एक परस्पर संबद्ध प्रणाली है। इस प्रकार हमें निम्न कार्बन प्रणाली की ओर वैश्विक रूपांतरण और इसके परिणामी प्लवन प्रभावों (Spillaur Effects) अर्थात एक अर्थव्यवस्था में परिर्वतनों से दूसरी अर्थव्यवस्था में परिर्वतन, एक स्थान की राजनीति में परिर्वतनों से दूसरे स्थान की राजनीति में परिवर्तन आदि पर विचार करने की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन से निबटने हेतु वैश्विक प्रयास

जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (IPCC) का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन, इसके प्रभाव और भविष्य के संभावित जोखिमों के साथ–साथ अनुकूलन तथा जलवायु परिवर्तन को कम करने हेतु नीति निर्माताओं को रणनीति बनाने के लिए नियमित वैज्ञानिक आंकलन प्रदान करना है। IPCC आंकलन सभी स्तरों पर सरकारों को वैज्ञानिक सूचनाएं प्रदान करता है। जिसका प्रयोग जलवायु के प्रति उदारनीति विकसित करने के लिए किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क सम्मेलन (UNFCCC) एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है जिसका उद्देश्य वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। वर्ष 1995 से लगातार UNFCCC की वार्षिक बैठकों का आयोजन किया जाता है। इसके तहत ही वर्ष 1997 में बहुचर्चित क्योटो समझौता (Kyoto Protocol) हुआ और विकसित देशों (एनेक्स–1 में शामिल देश) द्वारा ग्रीन हाउस गैसों को नियंत्रित करने के लिए लक्ष्य तय किया गया। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत 40 औद्योगिक देशों को अलग सूची एनेक्स–1 में रखा गया है।

पेरिस समझौता– यह जलवायु परिवर्तन से निबटने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य के साथ संपन्न 32 पृष्ठों एवं 29 लेखों वाले पेरिस समझौते को ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए एक ऐतिहासिक समझौते के रूप में मान्यता प्राप्त है।

COP –25 सम्मेलन में लगभग 200 देशों के प्रतिनिधियों ने उन गरीब देशों की मदद करने के लिए एक घोषणा का समर्थन किया जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से जूझ रहे हैं।

COP –26 जलवायु सम्मेलन 31 अक्टूबर से 12 नवंबर तक यूनाइटेड किंगडम के ग्लासगो स्कॉटलैंड में हुआ। इसमें भारत ने उद्घोषणा की कि वह वर्ष 2017 तक कार्बन उत्सर्जन को नेट जीरो करने के लिए लक्ष्य को हासिल कर लेगा।

टिप्पणी

भारत में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना का शुभारंभ वर्ष 2008 में किया गया था। इसका उद्देश्य जनता के प्रतिनिधियों, सरकार की विभिन्न एजेंसियों, वैज्ञानिकों, उद्योग और समुदायों को जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न खतरे और इससे मुकाबला करने के उपायों के बारे में जागरूक करना है। इस कार्य योजना में 8 मिशन सम्मिलित हैं।

- राष्ट्रीय सौर मिशन।
- विकसित ऊर्जा दक्षता के लिए राष्ट्रीय मिशन।
- सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन।
- राष्ट्रीय जल मिशन।
- सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन।
- हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन।
- सुस्थिर कृषि हेतु राष्ट्रीय मिशन।
- जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन।

अपनी प्रगति जांचिए

14. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम किस सन् में बनाया गया?

    (क) सन् 1980 (ख) सन् 1982

    (ग) सन् 1986 (घ) सन् 1988

15. सन् 1976 में कौन–सा अधिनियम बनाया गया?

    (क) जैव विविधता अधिनियम (ख) वाइल्ड लाइफ अधिनियम

    (ग) जल उपकर अधिनियम (घ) अर्बन लैंड अधिनियम

16. भारत में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना का शुभारंभ किस वर्ष में किया गया था?

    (क) वर्ष 2008 (ख) वर्ष 2010

    (ग) वर्ष 2012 (घ) वर्ष 2014

2.7 नीतियां एवं कार्यक्रम

भारत की दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर के नियोजन को वृहत् प्रादेशिक नियोजन की श्रेणी में, राज्य स्तरीय नियोजन को मध्यम क्रम के प्रादेशिक नियोजन व ब्लाक, जिला तथा गांव स्तरीय नियोजन को लघु प्रादेशिक नियोजन की श्रेणी में रख सकते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन की दृष्टि से पूर्व में योजना आयोग व वर्तमान में नीति आयोग देश में केंद्रीय नियोजन के लिए उत्तरदायी है। भारत के प्रधानमंत्री इस आयोग के चेयरमैन

हैं। यह केवल भारत में राष्ट्रीय स्तर की योजनाओं को बनाने के लिए वरन विभिन्न केंद्रीय मंत्रालयों के, राज्यों के और राज्यसंघों के कार्यों का समायोजन करता है।

टिप्पणी

योजना आयोग को 52वें संविधान संशोधन द्वारा संवैधानिक दर्जा दिया गया। इस कारण बिना आयोग के पूर्व अनुमोदन के किसी भी बड़ी योजना को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता।

योजना आयोग तीन प्रकार की योजनाएं बनाने के लिए उत्तरदायी रहा है–

1. 15–25 वर्ष की परिप्रेक्ष्य योजनाएं
2. पंचवर्षीय योजनाएं
3. पंचवर्षीय नियोजन के ढांचे में वार्षिक योजनाएं।

योजना आयोग राज्यों के लिए दिशानिर्देश भी जारी करता रहा। यह योजनाओं का निर्माण प्रादेशिक व जिला नियोजन व उसका समायोजन तथा वर्तमान में चल रही परियोजनाओं का निरीक्षण व परीक्षण भी करता रहा है।

नीति आयोग (नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया) भारत सरकार द्वारा गठित एक नया संस्थान है जिसे योजना आयोग के स्थान पर बनाया गया है। जनवरी 2015 को इस नए संस्थान के संबंध में जानकारी देने के लिए मंत्रिमंडल का प्रस्ताव जारी किया गया। यह भारत सरकार का प्रमुख नीतिगत थिंक टैंक है जो दिशात्मक और नीतिगत इनपुट प्रदान करता है। नीति आयोग, भारत सरकार के लिए कार्यनीतिक और दीर्घकालिक नीतियों और कार्यक्रमों को अभिकल्पित करने के साथ–साथ केंद्र और राज्यों को प्रासंगिक तकनीकी सहायता भी प्रदान करता है। नीति आयोग की शासकीय परिषद के अध्यक्ष प्रधानमंत्री हैं और इसमें सभी राज्यों के मुख्यमंत्री और संघ राज्य क्षेत्रों के उपराज्यपाल सम्मिलित हैं। नीति आयोग का गठन संघवाद के महत्वपूर्ण लक्ष्य को साकार करने और एक मजबूत राष्ट्र राज्य के निर्माण के लिए भारत में सुशासन को संभव बनाने के लिए किया गया है।

नीति आयोग ने अपनी स्थापना के बाद से कृषि सुधार जिला कार्यक्रम, ऊर्जा क्षेत्र में सुधार, स्वास्थ्य शिक्षा, उद्योगों, पोषण क्षेत्रों में सुधार पर अत्यधिक बल दिया है व कई महत्वपूर्ण योजनाओं का प्रारंभ व सफल क्रियान्वयन किया है।

भारत में प्रादेशिक नियोजन से संबंधित विभिन्न कार्यक्रम

भारत में स्वतंत्रता के बाद से केंद्रीय व राज्य स्तर की ही योजनाएं अधिकांशतः बनाई गई। प्रादेशिक नियोजन पर भारत में कम ध्यान दिया गया। यहां खंड स्तरीय (Sectoral) योजनाओं को अधिक महत्व दिया गया, जैसे– कृषि, सिंचाई, परिवहन, उद्योग, ग्रामीण विकास, विद्युतीकरण आदि। यद्यपि कुछ महत्वपूर्ण विशिष्ट कार्यक्रम प्रादेशिक विशेषताओं, आवश्यकताओं व समस्याओं के संदर्भ में आरंभ किए गए। इन्हें प्रादेशिक योजनाओं की श्रेणी में इनके अन्तर्राज्यीय अथवा अंतःराज्यीय स्वरूप के कारण रखा जा सकता है।

दामोदर घाटी योजना

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1948 में केंद्र सरकार बिहार तथा पश्चिमी बंगाल सरकार ने अमेरिका की टेनिसी घाटी योजना के अनुसार दामोदर घाटी योजना को निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यान्वित किया।

टिप्पणी

1. बाढ़ नियंत्रण
2. भूमि कटाव को रोकना
3. सिंचाई के विकास द्वारा कृषि का विकास करना
4. मछली पालन
5. जल विद्युत उत्पादन
6. वनों का विकास
7. खनिज संसाधनों का विकास
8. जल परिवहन का विकास
9. दामोदर घाटी में आयोग का विकास करना।

इस योजना के अंतर्गत दामोदर व उसकी सहायक नदियों पर तिलैया बांध, कोनार बांध, मैथन बांध, पंचित हिल बांध व दुर्गापुर बैराज बनाए गए।

इन बांधों के अलावा बेल पहाड़ी बांध, एअर बांध, बोकारो बांध एवं कई नहरें भी बनाई गई हैं। इस योजना के अंतर्गत बोकारो, दुर्गापुर एवं चंद्रपुरा में कोयले पर आधारित ताप विद्युत घर बनाए गए हैं जिनकी क्षमता 1,077 मेगावाट शक्ति है।

दामोदर घाटी में खनिजों के आधार पर कई उद्योगों का विकास हुआ है जैसे– इस्पात, रेल इंजन, अभियांत्रिकी, सीमेंट आदि।

समग्र रूप से दामोदर घाटी परियोजना भारत की सफलतम प्रादेशिक योजना कही जा सकती है।

दंडकारण्य परियोजना – इसके अंतर्गत ओडिशा और उसके पड़ोसी राज्यों के जनजातीय क्षेत्र सम्मिलित हैं। इसका मुख्य उद्देश्य जनजातीय हितों को ध्यान में रखते हुए बांग्लादेश से आए शरणार्थियों को बसाना था। इस परियोजना का संचालन दंडकारण्य विकास प्राधिकरण द्वारा किया गया।

पश्चिमी घाट विकास कार्यक्रम

इस क्षेत्र में 6 राज्य गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, गोवा, केरल एवं तमिलनाडु शामिल हैं। एकीकृत योजना के तहत वनीकरण, मृदा संरक्षण, जल विद्युत विकास, कृषि, खनिज संसाधन विकास व वन्य जीव संरक्षण के मुद्दों को ध्यान में रखा गया है। एक उच्चस्तरीय निकाय द्वारा इस क्षेत्र के लिए दिशानिर्देशों का प्रारूप तैयार किया गया है एवं उसी के अनुसार योजनाओं का निर्माण किया जाता है।

उत्तर पूर्वी क्षेत्र– इस क्षेत्र में पूर्वोत्तर के 7 राज्य असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा, मिजोरम सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख समस्याएं हैं– दुर्गम भूभाग, कमजोर आधारभूत संरचना, कम पहुंच, मृदा क्षरण, बाढ़, निम्न कृषि उत्पादकता एवं औद्योगीकरण का निम्न स्तर। 1971 में उत्तर पूर्व परिषद की स्थापना की गई ताकि योजना प्रयासों में समन्वय एवं सुधार लाया जा सके। यह परिषद अंतर्राज्यीय प्रकृति की गतिविधियों– संचार, बिजली, बाढ़ नियंत्रण तथा विपणन व प्रशिक्षण सुविधाएं इत्यादि के संबंध में नियोजन संबंधी परामर्श देती है।

टिप्पणी

दक्षिणी–पूर्वी संसाधन क्षेत्र– टाउन एवं कंट्री प्लानिंग ऑर्गेनाइजेशन (जिसने दामोदर घाटी एवं दंडकारण्य परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार की थी) द्वारा इन दोनों क्षेत्रों के बीच स्थित संसाधनों से संपन्न मध्यवर्ती क्षेत्र की महत्ता का अनुभव किया गया जो विकास की समस्याओं से ग्रस्त था। इस क्षेत्र के अंतर्गत उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ एवं पश्चिम बंगाल के विभिन्न भाग सम्मिलित हैं। इस परियोजना की सफलता अंतर्राज्यीय सहयोग की मात्रा पर निर्भर करती है।

प्रादेशिक विकास कार्यक्रम

देश में विकास को नई दिशा देने हेतु पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत अनेक प्रादेशिक विशिष्ट क्षेत्र विकास कार्यक्रम चलाए गए। इनमें अधिकांश कार्यक्रम वर्तमान में भी जारी हैं।

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का आरंभ 1978–79 में किया गया। इससे पूर्व में जारी सामुदायिक क्षेत्र विकास कार्यक्रम (ADP), सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP), लघु किसान विकास कार्यक्रम (SFDA) तथा सीमांत कृषक एवं कृषि मजदूर अभिकरण (MFALA) को सम्मिलित कर समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का आरंभ किया गया। यह केंद्र और राज्य सरकारों का समान वित्त पोषित कार्यक्रम है। इसके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराना तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वाले कृषकों, मजदूरों, कारीगरों, अनुसूचित जाति एवं जनजाति आदि की आय में वृद्धि के प्रयास किए गए हैं।

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत चलाए जा रहे महत्वपूर्ण कार्यक्रम हैं–

1. राष्ट्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम (NRDP)
2. न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (MNP)
3. ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण (TRYSEM)
4. ग्रामीण क्षेत्र महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (DWCRA)
5. इंदिरा आवास योजना (IAY) आदि

पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम

भारत का लगभग 17 प्रतिशत क्षेत्र पहाड़ी है, जहां देश की लगभग 11 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। मोटे तौर पर ऐसे क्षेत्र दो प्रकार के हैं–

(i) वे जो संपूर्ण राज्य का निर्माण करते हैं।

(ii) वे जो किसी राज्य के भाग हैं। प्रथम वर्ग में उत्तर–पूर्व के राज्य जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड सम्मिलित हैं। ये विशिष्ट श्रेणी के राज्य कहलाते हैं। उत्तर–पूर्व के राज्यों के समन्वित विकास हेतु संसद अधिनियम (1971) द्वारा उत्तर–पूर्वी परिषद का गठन किया गया है। इस परिषद में ऊर्जा उत्पादन, पोषाहार, सड़क निर्माण, कृषि, पशुपालन, मत्स्यकी आदि आते हैं। इसने प्रादेशिक कार्यक्रमों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

टिप्पणी

द्वितीय वर्ग के अंतर्गत असम (कार्बी आंगलोंग एवं उत्तरी कछार जिले) और पश्चिमी बंगाल के दार्जिलिंग जिले के भाग सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त पहाड़ी क्षेत्र का विस्तार महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, गोवा एवं केरल के कुछ क्षेत्रफल 1,34,500 वर्ग किलोमीटर में पाया जाता है। यद्यपि इनके विकास की जिम्मेदारी संबंधित राज्य सरकारों की है परंतु केंद्र सरकार द्वारा अलग से भी वित्तीय सहायता दी जाती है। इसके माध्यम से पर्वतीय क्षेत्रों की भौगोलिक, आर्थिक व सामाजिक स्थिति को ध्यान में रखकर योजनाएं बनाई गई हैं। यह योजना उत्तरी पूर्वी भारत के पर्वतीय क्षेत्रों के विकास के लिए लाभकारी है।

जनजातीय क्षेत्र विकास

जनजातीय विकास कार्यक्रम उन क्षेत्रों के लिए तैयार किए जाते हैं, जिनमें जनजातियों की जनसंख्या 50 प्रतिशत या उससे अधिक पायी जाती है। इन क्षेत्रों के लिए कई योजनाएं बनाई जाती हैं। जिनका मुख्य उद्देश्य जनजातीय और अन्य क्षेत्रों के बीच विकास के अंतर को कम करना तथा जनजातीय समुदायों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है। देश के 19 राज्यों और 2 केंद्र शासित प्रदेशों में ऐसी उपयोजनाओं के क्षेत्रों की पहचान की गई है। यह क्षेत्र मुख्यतः मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र प्रदेश, राजस्थान और झारखंड राज्यों में स्थित है। इन योजनाओं हेतु संसाधन राज्य की योजना राशि, केंद्रीय मंत्रालयों, केंद्रीय सहायता और संस्थागत वित्त से प्राप्त होती है।

कमांड क्षेत्र विकास

इसे 1974–75 में केंद्र प्रायोजित कार्यक्रम के तौर पर सिंचित क्षेत्रों में सिंचाई क्षमता के भरपूर उपयोग तथा कृषि उत्पादकता एवं उत्पादन में वृद्धि करने के उद्देश्य से लागू किया गया था। सर्वप्रथम 1974 में इसे इंदिरा गांधी नहर कमांड क्षेत्र में प्रारंभ किया गया था। मार्च 1998 तक इसका विस्तार देश के 23 राज्यों और 2 केंद्र शासित प्रदेशों की 217 परियोजनाओं के 21.78 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर हो गया।

सूखा प्रवण क्षेत्र विकास

सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP) का प्रारंभ 1973 में किया गया। इसका उद्देश्य भूमि, जल एवं पशु संसाधन का इष्टतम उपयोग, पारिस्थितिक संतुलन का पुनर्स्थापन और लोगों में विशेष कमजोर वर्गों की आय का स्थरीकरण करना है। सूखा प्रणव क्षेत्र कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य समुचित प्रौद्योगिकी द्वारा क्षेत्र का समन्वित विकास करते हुए सूखे के प्रभाव को कम करना है।

मरुस्थल विकास कार्यक्रम

1974–75 में सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए सूखा प्रवण कार्यक्रम का प्रारंभ किया गया था जो मरु क्षेत्र से संबंधित था। किंतु 1977–78 में अलग से मरुस्थल विकास कार्यक्रम (DDP) आरंभ किया गया तथा 1989–90 में समेकित बंजर भूमि कार्यक्रम (IWPP) को लागू किया गया। इन तीनों क्षेत्रीय कार्यक्रमों को अप्रैल 1995 में जल विभाजन प्रबंधन (Watershed Management) के अंतर्गत कार्यान्वित किया जा रहा है। इन कार्यक्रमों को 7 राज्यों के 40 जिलों के 235 विकास खंडों में लागू किया गया है। आंध्र प्रदेश,

टिप्पणी

गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, कर्नाटक, जम्मू–कश्मीर और हिमाचल प्रदेश के विशिष्ट क्षेत्र इसमें सम्मिलित हैं। इसे उष्ण एवं शीतल मरु क्षेत्रों में लागू किया जा रहा है। यह कार्यक्रम मरुस्थलीकरण को रोकने के लिए ऐसी गतिविधियों पर जोर देता है जो पारिस्थितिक संतुलन पुनः स्थापन, बालुका स्तूपों के स्थिरीकरण तथा मृदा एवं जल के संरक्षण में सहायक है।

महानगरीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम

भारत में दस लाख तथा इससे अधिक जनसंख्या वाले नगरों को महानगर की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है। देश में महानगरों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है तथा 2011 में इसकी संख्या 53 हो गई। महानगरों की समस्याओं तथा विकास का स्वरूप भिन्न होता है। अतः इनके विकास की योजना भी भिन्न होती है। प्रत्येक महानगर के विकास हेतु विकास प्राधिकरणों का गठन किया गया जो नगरों के वर्तमान व भावी विकास को नियमित करता है। इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय 'राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र' (National Capital Region) है जिसे 1985 में संसद द्वारा विशेष रूप से प्रादेशिक नियोजन अधिनियम पारित करके आरंभ किया गया है।

अपनी प्रगति जांचिए

17. किस संविधान संशोधन द्वारा योजना आयोग को संवैधानिक दर्जा दिया गया?

    (क) 50 वें (ख) 52 वें

    (ग) 54 वें (घ) 56 वें

18. दामोदर घाटी योजना को किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यान्वित किया गया?

    (क) बाढ़ नियंत्रण (ख) मत्स्य पालन

    (ग) खजिन संसाधनों का विकास (घ) उपर्युक्त सभी।

19. समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम कब आरंभ किया गया?

    (क) 1950–55 (ख) 1960–65

    (ग) 1978–79 (घ) 1980–85

2.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ख)
3. (ग)
4. (घ)
5. (ख)
6. (क)
7. (ग)

8. (ख)
9. (घ)
10. (ख)
11. (ग)
12. (क)
13. (क)
14. (ग)
15. (घ)
16. (क)
17. (ख)
18. (घ)
19. (ग)

टिप्पणी

2.9 सारांश

वृहत् क्षेत्र आर्थिक, राजनीतिक भूगोल व क्षेत्रीय नियोजन की एक स्थापित अवधारणा है। ऐतिहासिक दृष्टि से 'वृहत् क्षेत्र' की अवधारणा का उपयोग उन भू–राजनीतिक इकाइयों के लिए किया जाता रहा है जो विभिन्न राजनीतिक इकाइयों को सम्मिलित करते हुए सीमांकित की जाती हैं। यद्यपि प्रादेशिक आर्थिक विकास व विकास के कार्यक्रमों में सहभागिता के चिन्तन से इस महत्वपूर्ण अवधारणा की प्रायोगिकता को नीति निर्धारकों के समकक्ष महत्वपूर्ण रूप से हाल में ही प्रस्तुत किया है।

वैश्वीकरण (Globalization) की अवधारणा के विकास के साथ ही वृहत् क्षेत्रों की अवधारणा तेजी से विकसित हुई है। सम्पूर्ण विश्व में विकास के दृष्टिकोण से विभिन्न केन्द्रों व परिधियों को पहचाना गया और यह माना गया कि यदि संसाधनों का मिलकर प्रयोग किया जाये तो केन्द्र व परिधि के अन्तर को कम किया जा सकता है। इसलिए विश्व में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठन जैसे, असियान, यूरोपियन यूनियन व सार्क आदि का संगठन हुआ।

वृहत् क्षेत्र के बारे में समय–समय पर विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। 1996 में हंटीगटन ने वृहत् सांस्कृतिक इकाई वालेसस्टेन (1979) ने विश्व तन्त्र एगन्यू, टेलर एण्ड फ्लिन्ट (1999) तथा हैम्प (2014) ने विश्व केन्द्र व परिधि संबंधी विचार दिये। अन्य महत्वपूर्ण तथ्य वकृत क्षेत्रों की विश्व में संख्या से है। छह महाद्वीपों के अतिरिक्त सभ्यताओं की पहचान के आधार पर क्लावसन (2007) ने आठ, मोरिस (1972) ने 15 वृहत् क्षेत्रों को वर्णित किया है। भारतीय वृहत् क्षेत्रों की पहचान इनकी सघन जनसंख्या, उच्च जन्म दर, कम आर्थिक विकास दर व सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर की गयी है। यद्यपि प्रादेशिक नियोजन में तुलनात्मक दृष्टि से किसी भी क्षेत्र को जो लघु व मध्यम क्षेत्रों से वृहत् हो तथा दो या दो से अधिक मध्यम आकार को समाहित करता हो, वृहत् क्षेत्रों के रूप में जाना जाता है। नियोजन के क्षेत्र में किसी भी स्तर के क्षेत्र तथा आकार का मानकीकरण सम्भव नहीं होता।

टिप्पणी

भारत विश्व में एक सबसे बडा लोकतांत्रिक देश है, भारत की जनसंख्या चीन के बाद विश्व में द्वितीय स्थान पर है। 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान अपनाया गया था तभी से भारतीय नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के स्वतंत्रता व समानता प्रदान की गयी है। भारतीय संविधान में संघात्मक व्यवस्था को अपनाया गया है। इसमें राष्ट्रपति देश का प्रमुख व प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है। भारत का प्रधानमंत्री बहुमत प्राप्त दल का नेता होता है। वर्तमान समय में लोकतंत्र विश्व के विभिन्न देशों में फैला है। भारत भी लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला देश है और देश की जनसंख्या अधिक होने से कार्य भार बढ जाता है जिसके कारण भारत ने संघवाद की व्यवस्था को अपनाया।

अनुकूल प्राकृतिक संसाधनों की उपस्थिति व अनुपस्थिति आर्थिक विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। प्राकृतिक संसाधनों में भूमि, जल, मत्स्य, खनिज, वन, सामूहिक, संसाधन, जलवायु, वर्षा व भू–आकृति सभी सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ संसाधन मनुष्य को ज्ञात हैं उदाहरण के लिए किसी भी देश के लोग उस प्रदेश का उच्चावच, भूमि का आकार, जलवायु, वनाच्छादित क्षेत्र और खोजी हुई खनिज की खदानों की जानकारी रखते हैं। किन्तु प्रकृति में बहुत अधिक संसाधन आविष्ट हैं। इन संभावित संसाधनों को खोजने व प्रयोग करने के लिए मनुष्यों को अपनी तकनीकों में सुधार की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों में भू–संसाधन सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि भूमि हमारे जीवन को आधार प्रदान करती है। हमारी अधिकांश आर्थिक व सामाजिक गतिविधियां भूमि पर निर्भर हैं। हम भूमि पर कृषि करते हैं, आवास बनाते हैं व हमारी आवश्यकता के अधिकांश संसाधन भूमि से प्राप्त होते हैं इसलिए भू–संसाधन के प्रयोग की सही योजना बनाना आवश्यक है। भारत में कई प्रकार की भूमि, जैसे पहाड़, पठार, मैदान और द्वीप हैं।

प्रकृति में उपलब्ध वे सभी पदार्थ जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं संसाधन कहलाते हैं। हमारे पर्यावरण में उपलब्ध वस्तुओं को संसाधनों में बदलने के लिए प्रकृति, तकनीक और संस्थाओं की अंतरनिर्भरता की आवश्यकता होती है। मानव तकनीकों की सहायता से प्रकृति से अंतरक्रिया करके अपने आर्थिक विकास के लिए संस्थाओं की स्थापना करता है। संसाधन प्रकृति के स्वतंत्र उपहार न होकर मानवीय गतिविधियों का परिणाम हैं। मानव स्वयं भी संसाधन निर्माण का एक आवश्यक घटक है। मानव ही प्रकृति में उपलब्ध तत्वों को संसाधनों में बदलता है।

मानव जनसंख्या प्रत्येक देश का एक अभिन्न घटक है जिसके बिना देश की कल्पना नहीं की जा सकती। वास्तव में जनसंख्या ही एक देश को विकसित बनाती है।

जनसंख्या एक संसाधन के साथ ही राष्ट्रीय विकास का आधार है। भारत के संदर्भ में यह कथन और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में चीन के पश्चात दूसरा स्थान रखता है। भारत की जनसंख्या 1 मार्च, 2011 को 121.07 करोड़ अंकित की गई है। इस विशाल जनसंख्या का भारत के आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक रूप पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

पूरे विश्व में विभिन्न कारणों से पर्यावरण दबाव की स्थिति में है। भारत के सन्दर्भ में भी कई क्षेत्रों में अधिक जनसंख्या घनत्व प्राकृतिक संसाधनों और वहन की क्षमता पर

दबाव डाल रहा है। निर्धनता व आर्थिक वृद्धि दर में वृद्धि हुई इसके अनेक कारण हैं। भारत में पर्यावरण संरक्षण पर 70 के दशक से ही अत्यधिक महत्व दिया जा रहा है।

टिप्पणी

भारत की दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर के नियोजन को वृहत् प्रादेशिक नियोजन की श्रेणी में राज्य स्तरीय नियोजन को मध्यम क्रम के प्रादेशिक नियोजन व ब्लाक, जिला तथा गांव स्तरीय नियोजन को लघु प्रादेशिक नियोजन की श्रेणी में रख सकते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन की दृष्टि से पूर्व में योजना आयोग व वर्तमान में नीति आयोग देश में केंद्रीय नियोजन के लिए उत्तरदायी है। भारत के प्रधानमंत्री इस आयोग के चेयरमैन हैं। यह केवल भारत में राष्ट्रीय स्तर की योजनाओं को बनाने के लिए ही नहीं वरन विभिन्न केंद्रीय मंत्रालयों के, राज्यों के और राज्यसंघों के कार्यों का समायोजन करता है।

2.10 मुख्य शब्दावली

- **संघात्मक शासन** : संघात्मक शासन वह राजनीतिक योजना है जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय एकता तथा राज्यों के अधिकारों में सामंजस्य स्थापित करना है।
- **एकात्मक शासन** : एकात्मक शासन वह होता है जहां केंद्रीय शक्ति के द्वारा शासन की सर्वोच्च शक्ति का प्रयोग किया जाता है।
- **बंजर भूमि** : बंजर भूमि उस भूमि को कहते हैं जिस भूमि के सभी पोषक तत्व समाप्त हो चुके हों तथा उसमें लवणों की अधिकता अधिक हो इससे उस भूमि में कुछ भी उत्पादन नहीं होता है।
- **वर्तमान परती भूमि** : यह वह भूमि है जिसमें पहले कृषि की जाती थी परंतु उपजाऊ शक्ति के कम होने से इसे वर्तमान समय में खाली छोड़ दिया जाता है।
- **मृदा** : यह कई ठोस, तरल और गैसीय पदार्थों का मिश्रण है जो भूपर्पटी के सबसे ऊपरी स्तर में पाई जाती है।
- **अक्षत वनस्पति** : वह वनस्पति जो मनुष्य की सहायता के बिना अपने आप पैदा होती है और लंबे समय तक, उस पर मानव का प्रभाव नहीं पड़ता है।
- **वनस्पति** : एक क्षेत्र विशेष में उगने वाले प्राकृतिक पेड़–पौधे।

2.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय संघवाद से क्या तात्पर्य है?
2. भूमि–संसाधन किसे कहते हैं?
3. वर्तमान परती भूमि तथा पुरातन परती भूमि में क्या अंतर है?
4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

   (क) राष्ट्रीय जल नीति (ख) जल विद्युत (ग) ऊर्जा नीति
5. दामोदर घाटी योजना को किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यान्वित किया गया?

6. समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत कौन से महत्वपूर्ण कार्यक्रम चलाए गए?

टिप्पणी

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. वृहत् क्षेत्र व उनकी उत्पत्ति की अवधारणा को समझाइए?
2. भारतीय संघवाद क्या है? इसकी मुख्य विशेषताएं विस्तार से बताइए।
3. भारतीय संविधान के 73वें व 74वें संशोधन का वर्णन कीजिए?
4. खनिज संसाधनों के संरक्षण पर एक निबंध लिखिए।
5. प्रायद्वीपीय भारत में पेट्रोलियम की उपलब्धता व वितरण का विस्तृत वर्णन कीजिए।
6. मानव संसाधन क्या है? आर्थिक विकास में इनकी भूमिका की विवेचना कीजिए।
7. भारत में जनसंख्या वृद्धि के मुख्य कारकों को समझाइए।
8. जनसंख्या विकास से आप क्या समझते हैं समझाइए?
9. तकनीकी और आर्थिक विकास संसाधनों के उपभोग को बढ़ाता है, विस्तार से समझाइए।
10. भारत में जनसंख्या की समस्या की एक रूपरेखा बनाते हुए उसके समाधान के सुझाव दीजिए।

2.12 सहायक पाठ्य सामग्री

1. मिश्रा, आर. पी., सुंदरम के.वी. और प्रकाश राव वी.एल.एस. 1976, "रीजनल डेवलपमेंट प्लानिंग इन इंडिया" विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
2. स्पेट एस.के. और लियरमाउथ, ऐ.टी.ए., 1967, "इंडिया एंड पाकिस्तान", मेथीन कंपनी प्रा. लि. लंदन
3. बोमवॉल, के.आर. 1967 'दी फाउंडेशन ऑफ इंडियन फेडरेशन' एशिया पब्लिशिंग हाउस मुंबई
4. खुल्लर डी.आर. 2008 भूगोल सरस्वती हाउस प्रा. लि. नई दिल्ली
5. जेलसंकी, डब्लू. (एडीटेड), 1978 "ह्यूमन जियोग्राफी कमिंग ऑफ एज " एन बिहवेरियल साइंस (स्पेशल इश्यू)
6. ट्रिवार्था ग्लेन, 1969, ए जियोग्राफी ऑफ पॉपुलेशन वर्ल्ड पैटर्न्स न्यूयॉर्क जॉन विले एंड संस
7. चांदना आर. सी. 2015, जियोग्राफी ऑफ पॉपुलेशन कल्याणी पब्लिशर्स
8. न्यूबोल्ड के. ब्रूस., 2017 "पापुलेशन जियोग्राफी टूल्स एंड इश्यूस, रोमन एंड लिटिल फील्ड यू.एस.ए.
9. मोइसले विलियम. जी., पैरामोंड एरिक, हापके एम. होली 2013, एन इंट्रोडक्शन टू ह्यूमन एनवायरमेंट जियोग्राफी लोकल डायनेमिक्स एंड ग्लोबल प्रोसेस, विले ब्लैकवैल।

इकाई 3 मध्यम क्षेत्र

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 मध्यम क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार
3.3 भौतिक एवं मानवीय संसाधन
3.4 आर्थिक अंतर्संबद्धता
3.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक
3.6 नीतियां एवं कार्यक्रम
3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.8 सारांश
3.9 मुख्य शब्दावली
3.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

मध्यम आकार के क्षेत्र मुख्यतः लघु आकार (तृतीय स्तर) के क्षेत्रों को मिलाकर बनते हैं। इनका सीमांकन लघु क्षेत्रों में पायी जाने वाली समान भौतिक या आर्थिक विशेषताओं के आधार पर किया जाता है।

भौतिक संसाधन पर्यावरण की स्थिति के कुल योग का हिस्सा हैं जो मानव अस्तित्व का निर्माण करते हैं। इन संसाधनों का उपयोग समाज की भौतिक और सांस्कृतिक जरूरतों को पूरा करने के लिए किया जाता है। भौतिक संसाधनों में सौर ऊर्जा, पवन, भूमि, मिट्टी, जल निकाय, उप सतह का पानी, खनिज, वनस्पति व पशु आदि सम्मिलित हैं।

आर्थिक वृद्धि जब सार्वजनिक संसाधनों को मानव विकास के लिए संचालित करती है तब यह रोजगार उत्पादकता में विस्तार और निर्धन लोगों की मजदूरी में वृद्धि करती है। यह आर्थिक वृद्धि और मानव संसाधन का अंतर्संबंधित चक्र तब कार्य करता है जब आर्थिक वृद्धि श्रम का प्रयोग और रोजगार उत्पन्न करती है तथा मानवीय कौशल और स्वास्थ्य सुधार तीव्रता से होता है।

इस इकाई में मध्यम क्षेत्र के क्षेत्रीयकरण के आधार, भौतिक और मानवीय संसाधन, जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक तथा मध्यम क्षेत्र की नीतियों और कार्यक्रमों को विस्तार से समझाया गया है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- मध्यम क्षेत्रों की अवधारणा को समझ पाएंगे;

टिप्पणी

- भौतिक संसाधनों के प्रकार व इनके महत्व का अध्ययन कर पाएंगे;
- मानव संसाधन व मानव विकास की अवधारणा का अध्ययन कर पाएंगे;
- जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक का विश्लेषण कर पाएंगे;
- मानव विकास की नीतियों एवं कार्यक्रमों के विषय में जान पाएंगे।

3.2 मध्यम क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार

द्वितीय स्तर के अथवा मध्यम आकार के क्षेत्रों का निर्धारण निम्न स्तर पर स्थित लघु इकाइयों को मिलाकर किया जाता है। दूसरे शब्दों में एक या एक से अधिक राज्यों में फैले ऐसे जिले जिनमें भौतिक विशेषताएं या समान प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता हो तो उन्हें एक मध्यम आकार के क्षेत्र के रूप में सीमांकित किया जाता है। दूसरी ओर मध्यम स्तरीय क्षेत्रों का निर्धारण वृहत् क्षेत्रों के उप क्षेत्रों या अंतर्मध्य स्तर के रूप में भी किया जाता है। इनमें भौगोलिक वातावरण की समानता होती है और स्थानीय, प्रादेशिक व कुछ हद तक राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संसाधनों की संभाव्यता होती है। क्षेत्रों के उपविभाग के रूप में मध्यम स्तर के क्षेत्र किसी भी क्षेत्र के संसाधनों के प्रभावी, दोहन, उपयोग और संरक्षण के आधारभूत क्षेत्र हैं।

इस प्रकार के किसी भी क्षेत्र के लिए यह आवश्यक है कि वह लोगों की भोजन और रोजगार की आवश्यकताओं की आपूर्ति के उत्पादन प्रतिरूप के निर्माण के लिए न्यूनतम आर्थिक विकास क्षमता रखता हो। ग्रामीण भारत के संदर्भ में प्रति व्यक्ति उपजाऊ भूमि की उपलब्धता का अनुपात आर्थिक विकास क्षमता का सूचक हो सकता है। यह एक बहुद्देश्यीय इकाई होती है जो अपनी विभिन्न उत्पादन गतिविधियों के द्वारा कुछ विशिष्टीकरण प्राप्त कर लेती है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि मध्यम स्तर की इकाई में राष्ट्रीय महत्व का एक उत्पादन चक्र अवश्य होना चाहिए और इसका प्रादेशिक वृद्धि केन्द्र उपखण्ड के स्तर पर वृद्धि केन्द्रों से सम्बन्धित होना चाहिए।

यदि दो पूर्णतया भिन्न भौतिक भाग और उनकी अर्थव्यवस्था अन्तर्सम्बन्धित हो व एक दूसरे के समीप हो तो वे एक मध्यम स्तरीय क्षेत्र का निर्माण कर सकते हैं। उदाहरण के लिए केरल की तटीय रेखा ने इसके उप पवर्तीय बागवानी क्षेत्र के साथ मध्यम स्तर के क्षेत्रों का निर्माण किया है क्योंकि ये दोनों भौतिक भू–भाग एक दूसरे को संसाधनों की आपूर्ति करते हैं और इसे एक जिले का स्वरूप प्रदान करते हैं। इसी प्रकार एक पिछड़ा हुआ क्षेत्र एक विकसित क्षेत्र के साथ मिलकर एक सुदृढ़, आर्थिक आधार वाला मध्यम स्तरीय क्षेत्र बन सकता है।

यहां मध्यम आकार के क्षेत्रीयकरण के आधारों की एक योजना दी गई है।

क्षेत्रीयकरण के आधार

मध्यम क्षेत्रों के नाम	उपलब्ध संसाधन	आर्थिक विशिष्टीकरण
1(क) केरल	बागवानी, टीक, नारियल, थोरियम, जल विद्युत संभावना	बागवानी अर्थव्यवस्था और संबंधित उद्योग, मत्स्य, जहाज निर्माण, ध्वनि अभियांत्रिकी

टिप्पणी

(ख)	मद्रास–कोयम्बटूर औद्योगिक क्षेत्र	नैवेली लिग्नाइट, लौह अयस्क, मैग्नेसाइट, कपास, नारियल, गन्ना, औद्योगिक महत्व की व्यापारिक फसलें	हल्की अभियांत्रिकी सिरेमिक, सीमेंट, लौह धातु उद्योग की संभाव्यता, टैक्सटाइल, गन्ना और सरसों के तेल का उत्पादन
(ग)	तमिलनाडु तटीय मैदान क्षेत्र	चावल की खेती, कपास और बाजरा, सामुद्रिक मत्स्य, नमक, चूना पत्थर	डेल्टा क्षेत्र की कृषि, कृषि उद्योग, मत्स्य व पर्यटन
2(क)	कर्नाटक तटीय और आन्तरिक औद्योगिक क्षेत्र	समृद्ध वन, जल शक्ति संसाधन, बागवानी, लौह अयस्क मैगनीज, सोना	वन आधारित उद्योग, इंजीनियरिंग और एरोनॉटीकल उद्योग
(ख)	रायलसीमा और उससे लगा हुआ तटीय मैदानी क्षेत्र	संभावित सिंचाई (तुंगभद्रा) संभावित लौह अयस्क भंडार, कीमती पत्थर	सिंचित कृषि, मिश्रित कृषि, भारी इंजीनियरिंग उद्योग
(ग)	बेल्लारी–हॉस्पेट खनन औद्योगिक क्षेत्र	लौह अयस्क और अलौह अयस्क खनिजों की विशाल संभाव्यता (लौह अयस्क, मैगनीज बाक्साइट, चीनी मिट्टी)	लौह व इस्पात उद्योग, पशुपालन, सिंचित कृषि (कृष्णा घाटी विकास)
(घ)	तेलंगाना और संलग्न तटीय मैदान	कोयला, जल विद्युत, लौह व अलौह खनिज, फसलें व तम्बाकू	नागार्जुन सागर बांध पर आधारित उद्योग, सघन खेती, खाद्य प्रसंस्करण व तम्बाकू उद्योग
3(क)	मुम्बई–दक्कन (मराठावाड़ा) और दक्कन ट्रैप कृषि औद्योगिक क्षेत्र	मुख्यतः कपास, बाजरा	कपास प्रसंस्करण पर्यटन
(ख)	कोमान व कृषि–औद्योगिक दक्कन क्षेत्र	शक्ति, कपास, बागबानी	कपास, प्रसंस्करण, हल्के इंजीनियरिंग उद्योग, मत्स्य
4(क)	मध्य क्षेत्र का नर्मदा घाटी क्षेत्र	कपास, बाजरा	कपास प्रसंस्करण, भारी मशीन, खाद सिरेमिक और रसायन के विकास के लिए नर्मदा की शक्ति की संभावना
(ख)	खांदेश–बेरार क्षेत्र	कपास, कोयला, लौहा	कपास प्रसंस्करण, लौह अयस्क धातु उद्योग की संभाव्यता
5(क)	उत्तर पूर्व दक्कन और तटीय मैदान	मैगनीज, खाद्य फसलें व मत्स्य	कृषि (महानदी डेल्टा), कृषि प्रसंस्करण मत्स्य
(ख)	दण्डकारण्य	वन, लौह अयस्क	वन आधारित उद्योग, लोहा व इस्पात

टिप्पणी

(ग)	महानदी बेसिन	शक्ति, बर्फ	चावल का कटोरा, संलग्न क्षेत्रों के खनिजों पर आधारित विकास
(घ)	सोन घाटी क्षेत्र	रिहन्द बांध की समीपता, छोटानागपुर के शक्ति और खनिज संसाधन	खनिज आधारित उद्योगों की संभाव्यता
(ङ)	छोटानागपुर औद्योगिक क्षेत्र	शक्ति के संसाधन लौह अयस्क और अलौह खनिज	भारी अभियांत्रिकी और रसायन उद्योग
(च)	ब्रह्माणी औद्योगिक क्षेत्र	लौह अयस्क	धातु आधारित उद्योग
6(क)	गुजरात का मैदान और पर्वतीय क्षेत्र	शक्ति के संसाधन पेट्रोलियम और कपास में समृद्ध	कपास प्रसंस्करण पेट्रो रसायन उद्योग
(ख)	काठियावाड़–कच्छ क्षेत्र	चूना पत्थर, नमक बॉक्साइट, कपास, सरसों	कपास प्रसंस्करण पशुपालन, रसायन उद्योग, कच्छ में सिंचाई की संभावना (नर्मदा घाटी)
7(क)	रेगिस्तान क्षेत्र	जिप्सम, चूना पत्थर, और लिग्नाइट आधारित उद्योग	पशुपालन व सीमित कृषि
8(क)	कोटा औद्योगिक व चम्बल घाटी क्षेत्र	शक्ति में समृद्ध अलौह धातुएं, चूना पत्थर व नमक	अलौह धातु उद्योग, सिंचित कृषि (चम्बल परियोजना)
(ख)	जयपुर, उदयपुर	तांबा (खेतरी)	मिश्रित कृषि, पर्यटन
9(क)	जम्मू एवं कश्मीर	वन व बागबानी	वन आधारित उद्योग और बागबानी उद्योग
(ख)	लद्दाख	कृषि, पशु, पर्यटन	कृषि, दुग्ध उत्पादन व पर्यटन
10(क)	भाखड़ा नांगल कृषि औद्योगिक क्षेत्र	चारा, गन्ना और गेहूं के उत्पादन के लिए उपजाऊ भूमि	गेहूं के विशिष्टिकरण वाली कृषि, कृषि प्रसंस्करण, टैक्सटाइल, हल्के इंजीनियरिंग, पर्यटन
(ख)	दिल्ली–पश्चिमी उत्तर क्षेत्र के मैदान व उत्तर क्षेत्र के पर्वतीय क्षेत्र	गेहूं, गन्ना, बागबानी व जल विद्युत	कृषि, कृषि आधारित और हल्के अभियांत्रिकी उद्योग
11(क)	कानपुर–आगरा औद्योगिक क्षेत्र	गन्ना, कपास, गेहूं, सरसों	कृषि, कृषि आधारित और हल्के अभियांत्रिकी उद्योग

टिप्पणी

(ख)	पूर्वी उत्तर क्षेत्र बघेलखंड क्षेत्र	गन्ना, गेंहू	कृषि, कृषि आधारित उद्योग
12(क)	उत्तरी बिहार कृषि औद्योगिक क्षेत्र	चावल, गन्ना, बरौनी तेल	कृषि आधारित उद्योग
(ख)	कोलकाता हुगली औद्योगिक क्षेत्र	चावल, जूट और शक्ति के संसाधनों की समीपता	उच्च तकनीकी क्षमता आधारित उद्योग
(ग)	उत्तरी बंगाल मैदान	चावल की कृषि	कृषि आधारित उद्योग
13(क)	निम्न ब्रह्मपुत्र, शिलांग पठारी क्षेत्र	जूट, चाय, सिलीमेनाइट, बागबानी उत्पाद, वन संसाधन एवं कोयला	जूट की कृषि, कोयला, रसायन उद्योग
(ख)	ऊपरी ब्रह्मपुत्र और पर्वतीय क्षेत्र	चाय, पेट्रोल, लकड़ी, कोयला व प्राकृतिक गैस	प्राकृतिक गैर और पेट्रोरसायन उद्योग
(ग)	पूर्वी पहाड़ी और मैदानी क्षेत्र	चाय, जूट व वन	वन आधारित उद्योग

नोटः भारत में आर्थिक क्षेत्रीयकरण की कोई भी योजना अन्तिम नहीं है। प्रत्येक योजना के सकारात्मक व नकारात्मक पहलू हैं। उपरोक्त योजना राष्ट्रीय नियोजन के लिए एक उदाहरण मात्र है।

आर्थिक/नियोजन प्रदेश की नयी अवधारणा

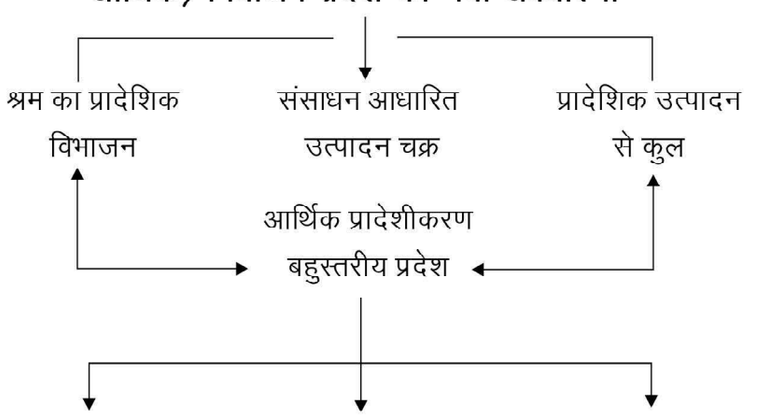

वृहत् क्षेत्र	मध्यम क्षेत्र	सूक्ष्म क्षेत्र
प्रथम स्तर के प्रदेश प्राकृतिक दशाओं में भिन्न होते हैं किंतु सामान्य समस्याएं व आवश्यकताएं, परिवहन तंत्र, ऊर्जा के आधार, औद्योगिक कच्चे माल और खाद्यान्न में आत्मनिर्भर	द्वितीय स्तर के प्रदेश सबसे निम्न स्तर पर बहुत–सी लघु इकाइयां रखते हैं। ये संसाधनों व प्रभावी उपयोग और विविध उत्पादक गतिविधियों के माध्यम से विशिष्टीकरण के लिए बहुउद्देश्यीय इकाइयां रखते हैं। न्यूनतम आर्थिक व्यवह्रयता व	तृतीय स्तर के प्रदेश आकार में सबसे लघु होते हैं व प्राकृतिक दशाओं की समानता एक समान सामुदायिक रुचि और अविवादित समस्याएं रखते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महानगरीय जिलों व यातायात प्रखंडों में

टिप्पणी

होते हैं। ये एकीकृत विकास के लिए आत्मनिर्भर होते हैं। ये एकीकृत विकास के लिए संसाधनों के विकास की संभाव्यता, उत्पादन संकुल एवं वृद्धि केंद्र भी रखते हैं।	लोगों को खाद्यान्न आपूर्ति की संभाव्यता भी इनमें होती है। दो भौतिक रूप व भिन्न–भिन्न आर्थिक स्तर के भागों को इन प्रदेशों में रखा जा सकता है यदि वे एक–दूसरे के निकट हों और एक–दूसरे को संसाधनों की संपूरकता प्रदान करते हों।	स्थानीय नियोजन के लिए जाने जाते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

1. तमिलनाडु तटीय मैदानी क्षेत्र के अंतर्गत कौन–सा उपलब्ध संसाधन नहीं आता है?

   (क) सामुद्रिक मत्स्य (ख) नमक

   (ग) कोयला (घ) चूना पत्थर

2. लद्दाख किन उपलब्ध संसाधनों के लिए प्रसिद्ध है?

   (क) कृषि (ख) पशु

   (ग) पर्यटन (घ) उपर्युक्त सभी

3.3 भौतिक एवं मानवीय संसाधन

भौतिक संसाधन प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले उत्पाद हैं जो मनुष्यों के लिए महत्वपूर्ण हैं। मानव अस्तित्व के लिए संसाधन आवश्यक हैं। मानव की आवश्यकता का निर्माण पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का केंद्र है। आवश्यकता संसाधन के रूप में व्यक्त होती है। अधिक से अधिक संसाधनों का निर्माण पूंजी का विस्तार करता है। भौतिक संसाधनों को कई प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है जैसे उत्पत्ति का स्रोत, विकास की स्थिति और संसाधनों का नवीनीकरण। उत्पत्ति के स्रोत के सम्बन्ध में भौतिक संसाधनों को जैविक और अजैविक संसाधनों में विभाजित कर सकते हैं। जैविक संसाधन, प्रकृति से सीधे प्राप्त होते हैं, ऐसे संसाधनों का स्रोत वन और खजिन भण्डार और इसके विभिन्न घटक हैं। इसमें तेल और पेट्रोलियम जैसे खनिज भी शामिल हैं जो कई वर्षों से कार्बनिक पदार्थों के क्षय के माध्यम से पृथ्वी के नीचे दबे हुए हैं।

अजैविक संसाधन यद्यपि स्वाभाविक रूप से पाये जाते हैं किंतु ये निर्जीव इकाई हैं। इनके विकास के चरण के आधार पर प्राकृतिक संसाधनों को (1) संभावित संसाधन (2) वास्तविक संसाधन (3) रिजर्व संसाधन (4) स्टॉक संसाधनों के रूप में विभाजित किया जा सकता है।

प्राकृतिक संसाधनों को नवीनीकरण के आधार पर नवीनीकरणीय तथा गैर–नवीनीकरणीय संसाधनों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

भौतिक संसाधनों की उपलब्धता मध्यम आकार के क्षेत्रों के निर्धारण का एक मुख्य आधार रही है।

योजना आयोग ने 1954 में भारत को निम्न मुख्य व मध्यम आकार के संसाधन क्षेत्रों में वर्गीकृत किया था।

टिप्पणी

	मुख्य क्षेत्र		उप क्षेत्र
(I)	हिमालय और उससे संबंधित पहाड़ियां		
	(i) पश्चिमी हिमालय क्षेत्र	(1)	उत्तर क्षेत्रीय हिमालय
		(2)	हिमाचल प्रदेश
		(3)	जम्मू और कश्मीर
		(4)	पंजाब का मैदान
		(5)	पश्चिमी राजस्थान का मैदान
		(6)	हरियाणा का मैदान
(II)	प्रायद्वीपीय पठार और पहाड़ियां		
	(i) पूर्वी पठार एवं पहाड़ी क्षेत्र	(17) (1)	छोटानागपुर का पठार
		(2)	उड़ीसा का भीतरी क्षेत्र
		(3)	मध्य प्रदेश की पूर्वी एवं छत्तीसगढ़ की पहाड़ियां
	(ii) मध्यवर्ती पठारी एवं पहाड़ी क्षेत्र	(18) (1)	पूर्वी राजस्थान मैदान एवं पहाड़ियां
		(2)	उत्तरी मध्य प्रदेश मैदान एवं पठार
		(3)	उत्तर प्रदेश बुन्देलखण्ड
		(4)	उत्तरी मध्य प्रदेश मैदान और पहाड़ियां
		(5)	विंध्यन पहाड़ियां और पठार
		(6)	मध्य प्रदेश मध्यवर्ती पठार एवं पहाड़ियां
		(7)	राजस्थान मालवा का पठार
		(8)	दक्षिणी राजस्थान पठार और पहाड़ियां
		(9)	पश्चिमी राजस्थान शुष्क क्षेत्र
	(iii) पश्चिमी पठारी एवं पहाड़ी क्षेत्र	(19) (1)	मध्य प्रदेश मालवा पठार
		(2)	महाराष्ट्र खानदेश मराठावाड़ा और बरार
		(3)	महाराष्ट्र, तेलंगाना मैदान एवं पहाड़ियां

टिप्पणी

	(iv) दक्षिणी पठारी और पहाड़ी क्षेत्र	(20)	(1) आन्ध्र–तेलंगाना
			(2) मैसूर–कर्नाटक पठार
			(3) आन्ध्र–रॉयलसीमा
			(4) मैसूर पहाड़ियां
			(5) मैसूर पठार
			(6) आन्ध्र चित्तूर
			(7) मद्रास का भीतरी क्षेत्र
			(8) मद्रास–नीलगिरि
(IV)	पश्चिमी तटीय मैदान		
	(i) गुजरात मैदान और पहाड़ियां	(21)	(1) शुष्क गुजरात मैदान एवं पठार
			(2) गुजरात मैदान एवं पठार
			(3) सौराष्ट्र का मैदान
			(4) गुजरात की पहाड़ियां
	(ii) पश्चिमी तटीय मैदान एवं घाट क्षेत्र	(22)	(1) महाराष्ट्र–कोंकण
			(2) गोवा
			(3) मैसूर तटीय क्षेत्र
			(4) मैसूर पहाड़ियां
			(5) केरल प्रदेश
			(6) मद्रास पश्चिमी तट
(V)	पूर्वी तटीय क्षेत्र	(23)	मद्रास पूर्वी तट
		(24)	तटीय आन्ध्र प्रदेश
		(25)	तटीय उड़ीसा प्रदेश
	(i) पूर्वी हिमालय क्षेत्र	(क)	(i) हिमाचल प्रदेश
			(ii) पश्चिम बंगाल हिमालय
			(iii) भूटान हिमालय
			(iv) उत्तरी पूर्वी सीमा क्षेत्र (NEFA)
		(ख)	(i) असम और उससे संबंधित पर्वतीय उप क्षेत्र
			(ii) असम पहाड़ियां
			(iii) नागालैंड
			(iv) मणिपुर
			(v) त्रिपुरा
		(ग)	(i) समतल क्षेत्र

टिप्पणी

(ii) ब्रह्मपुत्र और सुरमा घाटी

(ii) पश्चिमी बंगाल

(iii) गंगा का निचला मैदान

(VI) उत्तरी मैदान

(14) गंगा का मध्य मैदान

(1) उत्तरी बिहार का मैदान

(2) दक्षिणी बिहार का मैदान

(3) पूर्वी उत्तर क्षेत्र का मैदान

(15) गंगा का ऊपरी मैदान

(1) उ. प. उत्तर प्रदेश का मैदान

(2) द. प. उत्तर प्रदेश का मैदान

(3) मध्यवर्ती उत्तर प्रदेश का मैदान

16. गंगा का पठारीय मैदान

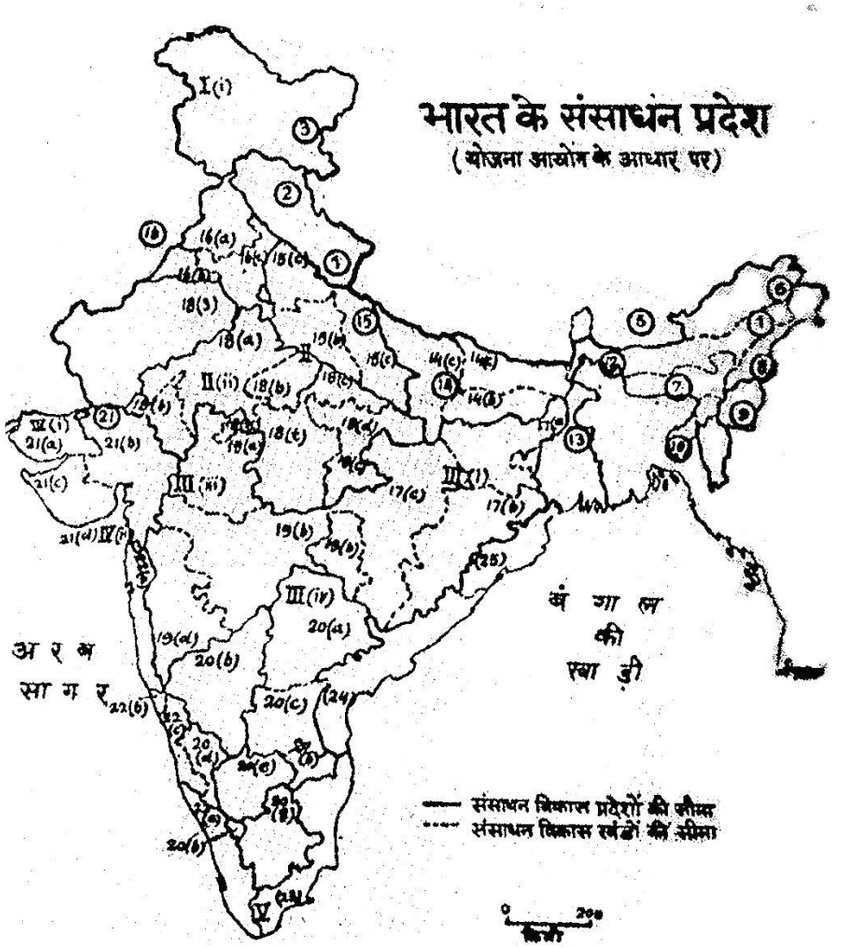

योजनाओं के आधार पर भारत के संसाधन क्षेत्र

टिप्पणी

डॉ. पी. सेन गुप्ता ने भारत के प्राकृतिक क्षेत्रों को निम्न संसाधन क्षेत्रों में विभक्त किया है।

मुख्य क्षेत्र		उप क्षेत्र	
(i)	हिमालय क्षेत्र	(1)	कश्मीर हिमालय
		(2)	पंजाब कुमायूं हिमालय
(ii)	पूर्वी हिमालय	(3)	सिक्किम दार्जिलिंग हिमालय
		(4)	असम हिमालय
		(5)	असम की पहाड़ियां और पठार
बड़ा मैदान			
(i)	गंगा का निचला मैदान	(6)	डेल्टाई मैदान
		(7)	मध्य गंगा का मैदान
		(8)	असम घाटी
(ii)	ऊपरी गंगा का मैदान	(9) (1)	रूहेलखण्ड मैदान
		(2)	अवध का मैदान
		(3)	यमुना गंगा का मैदान
(iii)	उत्तरी–पश्चिमी मैदान	(10) (1)	उत्तरी पंजाब का मैदान
		(2)	दक्षिणी पंजाब का मैदान
		(3)	राजस्थान का मैदान
प्रायद्वीपीय पठार और पहाड़ियां			
(i)	उत्तरी–पूर्वी प्रायद्वीपीय पठार	(11) (1)	छोटानागपुर पठार
		(2)	बुन्देलखण्ड पठार
		(3)	छत्तीसगढ़ बेसिन
		(4)	बस्तर का पठार
		(5)	उड़ीसा की पहाड़ियां
(ii)	उत्तरी–पश्चिमी प्रायद्वीपीय पठार	(12) (1)	अरावली की पहाड़ियां
		(2)	चम्बल बेसिन
		(3)	बुन्देलखण्ड का ऊपरी पठार
		(4)	मालवा पठार और विन्धयन पहाड़ियां
(iii)	महाराष्ट्र पठार और इसके अंग	(13) (1)	लावा का पठार
		(2)	पश्चिमी घाट
		(3)	वैनगंगा घाटी
(iv)	कर्नाटक का पठार	(14) (1)	मैदानी क्षेत्र
		(2)	मालनद क्षेत्र

टिप्पणी

(v) आन्ध्र का पठार — (15). (1) तेलंगाना पठार

(2) रॉयलसीमा पठार

(vi) तमिलनाडु का पठार — (16) (1) पठार और पहाड़ियां

(2) पश्चिमी घाटी क्षेत्र

(vi) पश्चिमी तट — (17) (1) कोंकण तट

(2) कर्नाटक मालाबार तट

(vii) पूर्वी तट — (18) (1) तमिलनाडु तट

(2) आन्ध्र तट

(3) उड़ीसा तट

भारत के इन संसाधन क्षेत्रों का विभाजन भौतिक परिस्थितियों, धरातलीय रचना, भूगर्भिक दशाएं, मिट्टी, वर्षा की मात्रा, फसलों के प्रारूप, सिंचाई एवं खनिज पदार्थों के संभावित भंडारों और उपयोग के आधार पर किया गया है।

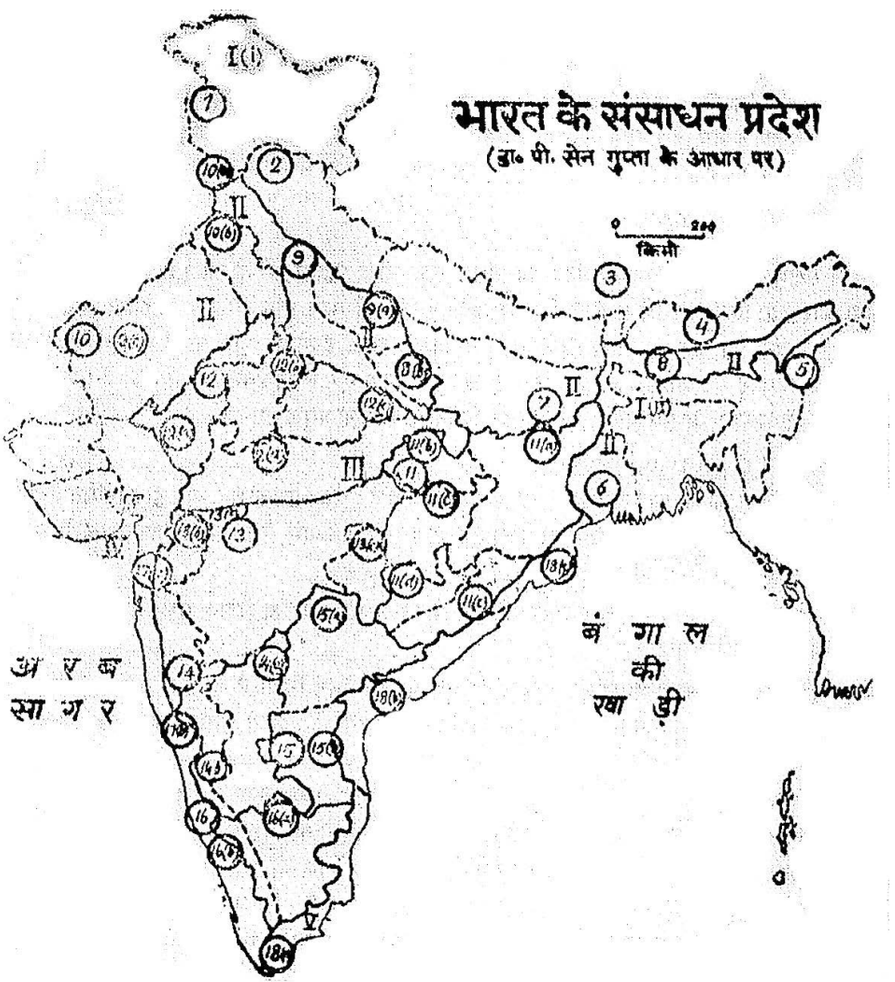

भारत के संसाधन क्षेत्र

टिप्पणी

मानव संसाधन

1997 की मानव विकास रिपोर्ट में मानव संसाधन विकास की अवधारणा को वर्णित करते हुए कहा गया है कि यह वह प्रक्रिया है जो लोगों की पसंद और लोगों की भलाई का दायरा बढ़ाती है। यह मानव विकास की अवधारणा का केंद्र है। विकास के स्तर को यदि छोड़ भी दिया जाये तो लोगों की तीन आवश्यक इच्छाएं होती हैं– पहली लम्बा और स्वस्थ जीवन, दूसरी ज्ञान प्राप्त करना और तीसरी सामान्य जीवन स्तर प्राप्त करने के लिए संसाधनों तक पहुंच। मानव विकास केवल तीन इच्छाओं तक ही सीमित नहीं है लोग अन्य इच्छाओं जैसे राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक स्वतन्त्रता से रचनात्मक और उत्पादक होने के अवसरों और अपने सम्मान और मानवाधिकारों की आश्वस्ति को भी मानव विकास के महत्वपूर्ण तत्व मानते हैं।

पहली बार इन विचारों को 80 के दशक के अंत और 90 के दशक के आरंभ में स्पष्ट किया गया था। इस संबंध में दो दक्षिण एशियाई अर्थशास्त्रियों महबूब–उल–हक और अमर्त्य सेन का कार्य महत्वपूर्ण है। इस अवधारणा में सभी प्रकार के विकास का केंद्र बिंदु मनुष्य है। यह विकल्प स्थिर नहीं है बल्कि परिवर्तनशील है। 1990 में मानव विकास रिपोर्ट के प्रकाशन के बाद से तीन अन्य सूचकांक, मानव विकास सूचकांक Human Development Index (HDI), लिंग–संबंधित विकास सूचकांक Gender-Related Development Index (GDI) और मानव निर्धनता सूचकांक Human Poverty Index (HPI) को विकसित किया गया।

मानव विकास सूचकांक

मानव विकास सूचकांक (HDI) स्वास्थ्य, शिक्षा और संसाधनों तक पहुंच जैसे प्रमुख क्षेत्रों में निष्पादन के आधार पर देशों का क्रम तैयार करता है। यह क्रम 0 से 9 के बीच के स्कोर पर आधारित होता है जो एक देश, मानव विकास के महत्वपूर्ण सूचकों में अपने रिकार्ड से प्राप्त करता है।

स्वास्थ्य का मूल्यांकन करने के लिए चुना गया सूचक जन्म के समय जीवन प्रत्याशा है। उच्चतर प्रति व्यक्ति आय के बावजूद मानव विकास में केरल का प्रदर्शन पंजाब और गुजरात से कहीं बेहतर है।

अर्जित मानव विकास स्कोर के आधार पर देशों को चार समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

मानव विकास का स्तर	मानव विकास सूचकांक का स्कोर	देशों की संख्या
अति उच्च	0.800 से ऊपर	66
उच्च	0.700 से 0.799 के बीच	53
मध्यम	0.550 से 0.699 के बीच	37
निम्न	0.549 से नीचे	33

स्रोतः मानव विकास प्रतिवेदन 2020

उच्च मानव विकास सूचकांक वाले देश वे हैं जिनका स्कोर 0.8 से ऊपर है। मानव विकास प्रतिवेदन 2020 के अनुसार इस वर्ग में 66 देश सम्मिलित हैं।

टिप्पणी

उच्च मानव विकास समूह में 53 देश सम्मिलित हैं। उच्च मानव विकास वाले देश वे हैं जहां सामाजिक खंड में बहुत निवेश हुआ है। लोगों और सुशासन में उच्चतर निवेश ने इस वर्ग के देशों को अन्य देशों से सर्वथा अलग कर दिया है। उच्च मानव विकास स्कोर वाले देश यूरोप में अवस्थित हैं और वे औद्योगीकृत पश्चिमी विश्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। फिर भी गैर–यूरोपीय देशों की संख्या आश्चर्यचकित करने वाली है जिन्होंने इस सूची में अपना स्थान बनाया है।

सर्वोच्च उच्च मूल्य सूचकांक वाले नौ देश

क्रम संख्या	देश
1.	नार्वे
2.	आयरलैण्ड
3.	स्विट्जरलैण्ड
4.	हांग–कांग चीन
5.	जर्मनी
6.	स्वीडन
7.	ऑस्ट्रेलिया
8.	नीदरलैण्ड
9.	डेनमार्क

मानव विकास के मध्यम स्तरों वाले देशों का वर्ग विशालतम है। मध्यम मानव विकास वर्ग में कुल 17 देश हैं। इनमें से अधिकांश देशों का विकास द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की अवधि में हुआ है। इस वर्ग के कुछ देश पूर्वकालीन उपनिवेश थे जबकि अन्य अनेक देशों का विकास 1990 ई. में तत्कालीन सोवियत संघ के विघटन के पश्चात हुआ है। इनमें से अनेक देश अधिक लोकोन्मुखी नीतियों को अपनाकर तथा सामाजिक भेदभाव को दूर करके तेजी से अपने मानव विकास स्कोर में सुधार कर रहे हैं। इनमें से अधिकांश देशों में उच्चतम मानव विकास के स्कोर वाले 40 वर्ष की आयु तक जीवित न रह पाने की संभाव्यता, प्रौढ़ निरक्षरता दर, स्वच्छ जल तक पहुंच न रखने वाले लोगों की संख्या और अल्पभार वाले छोटे बच्चों की संख्या सभी इसमें गिने जाते हैं। प्रायः मानव गरीबी सूचकांक, मानव विकास सूचकांक की अपेक्षा अधिक कमी उद्घाटित करता है।

मानव विकास के इन दोनों मापों का संयुक्त अवलोकन किसी देश के मानव विकास की स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है।

मानव विकास को मापने की विधियां निरन्तर परिष्कृत हो रही हैं और मानव विकास के विभिन्न तत्वों को ग्रहण करने की नूतन विधियों का अनुसंधान हो रहा है। शोधकर्ताओं ने किसी क्षेत्र विशेष में भ्रष्टाचार के स्तर और राजनीतिक स्वतंत्रता के बीच संबंध ज्ञात किये हैं।

टिप्पणी

अंतर्राष्ट्रीय विश्लेषण

मानव विकास की अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएं रुचिकर हैं। क्षेत्र के आकार और प्रति व्यक्ति आय का मानव विकास से प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। प्रायः मानव विकास में बड़े देशों की अपेक्षा छोटे देशों का कार्य बेहतर रहा है। इसी प्रकार मानव विकास में अपेक्षाकृत निर्धन राष्ट्रों का कोटि–क्रम धनी पड़ोसियों से ऊंचा रहा है।

उदाहरण के लिए श्रीलंका व त्रिनिदाद और टोबैगो की अर्थव्यवस्था भारत से छोटी होते हुए भी इनका मानव सूचकांक भारत से ऊंचा है। इसी प्रकार कम जीवन प्रत्याशा का अर्थ है कि लोगों के पास अधिक दीर्घ और अधिक स्वस्थ जीवन जीने के ज्यादा अवसर हैं। प्रौढ़ साक्षरता दर और सकल नामांकन अनुपात ज्ञान तक पहुंचने को प्रदर्शित करते हैं। पढ़ और लिख सकने वाले वयस्कों की संख्या और विद्यालयों में नामांकित बच्चों की संख्या दर्शाती है कि किसी देश विशेष में ज्ञान तक पहुंचना कितना आसान अथवा कठिन है।

संसाधनों तक पहुंच को क्रयशक्ति (अमेरिकी डालरों में) के संदर्भ में पाया जाता है।

इनमें से प्रत्येक आयाम को 1/3 भारिता दी जाती है। मानव विकास सूचकांक इन सभी आयामों को दिये गये भारों का कुल योग होता है।

स्कोर 1 के जितना निकट होता है मानव विकास का स्तर उतना ही अधिक होता है। इस प्रकार 0.983 का स्कोर अति उच्च स्तर का जबकि 0.268 का स्कोर मानव विकास का अत्यन्त निम्न स्तर का माना जाएगा।

मानव विकास सूचकांक मानव विकास में प्राप्तियों का मापन करता है। यह प्रदर्शित करता है कि मानव विकास के प्रमुख क्षेत्रों में क्या उपलब्धियां हुई हैं। फिर भी यह सर्वाधिक विश्वसनीय माप नहीं है। इसका कारण यह है कि यह सूचकांक वितरण के संबंध में मौन है।

लिंग संबंधित विकास सूचकांक

लिंग संबंधित विकास (GDI) एक सूचकांक है। इसका लिंग समानता को मापने के लिए प्रारूप तैयार किया गया।

लिंग संबंधित विकास सूचकांक (GDI) लिंग सशक्तिकरण उपाय (GEM) के साथ 1995 में प्रारंभ किया गया था। इन मापों का उद्देश्य मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) में लिंग–संवेदनशील आयाम जोड़ना था। परिणामस्वरूप उन्होंने जो पहला माप बनाया, वह लिंग–संबंधी विकास सूचकांक (GDI) था। जीडीआई को– "वितरण–संवेदनशील उपाय के रूप में परिभाषित किया गया है जो एचडीआई के तीन घटकों में मौजूदा लिंग अंतराल के मानव विकास प्रभाव के लिए जिम्मेदार है।" (क्लासेन, 243)

वितरण– संवेदनशील का अर्थ है कि GDI न केवल किसी देश के अंदर धन के औसत या सामान्य स्तर को ध्यान में रखता है, बल्कि इस बात पर भी ध्यान केंद्रित करता है कि यह धन और भलाई समाज के अंदर विभिन्न समूहों के बीच कैसे वितरित की जाती है। एचडीआई और जीडीआई (साथ ही जीईएम) विकास के अधिक परंपरागत सामान्य आय–आधारित उपायों को प्रतिद्वंद्वी बनाने के लिए बनाए गए थे

टिप्पणी

जैसे सकल घरेलू उत्पाद (GDP) और सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP)। जीडीआई को प्रायः 'एचडीआई का लिंग–संवेदनशील विस्तार' माना जाता है। यह जीवन प्रत्याशा, शिक्षा और आय में लिंग–अंतराल को संबोधित करता है। यह एक 'असमानता फैलाव' दंड का उपयोग करता है, जो मानव विकास सूचकांक की श्रेणियों में से किसी में लिंग अंतराल के लिए एक विकास स्कोर जुर्माना बनाता है, जिसमें जीवन प्रत्याशा, वयस्क साक्षरता, स्कूल की भागीदारी और प्रति व्यक्ति आय का लघुगणकीय रूपांतरण शामिल हैं। जीवन प्रत्याशा के संदर्भ में, GDI मानती है कि महिलाएं पुरुषों की तुलना में औसतन पांच साल अधिक जीवित रहेंगी। इसके अतिरिक्त, आय के संदर्भ में GDI वास्तविक अर्जित आय के संदर्भ में आय–अंतराल पर विचार करता है। GDI का उपयोग स्वंतत्र रूप से मानव विकास सूचकांक (HDI) स्कोर से नहीं किया जा सकता है और इसलिए, इसका उपयोग लिंग–अंतराल के संकेतक के रूप में नहीं किया जा सकता है। केवल HDI और GDI के बीच की खाई को वास्तव में सही माना जा सकता है; GDI अपने आप में लिंग–अंतराल का एक स्वतंत्र माप नहीं है।

मानव निर्धनता सूचकांक

मानव निर्धनता सूचकांक मानव विकास सूचकांक से संबंधित है। यह सूचकांक मानव विकास में कमी मापता है। यह एक बिना आय वाला माप है। किसी क्षेत्र के मानव विकास में कमी दर्शाने के लिए 40 देशों की तुलना में सामाजिक विविधता अधिक पाई जाती है। इस वर्ग के अनेक देशों ने अपने अभिनव इतिहास में राजनीतिक अस्थिरता और सामाजिक विद्रोह का सामना किया है।

मानव विकास के निम्न स्तर वाले देशों की संख्या 33 है। इनमें से अधिकांश छोटे देश हैं, जो राजनीतिक उपद्रव, गृहयुद्ध के रूप में सामाजिक अस्थिरता, अकाल अथवा बीमारियों की अधिक घटनाओं के दौर से गुजर रहे हैं। सुविचारित नीतियों के माध्यम से इस वर्ग के देशों को मानव विकास की आवश्यकताओं के समाधान की तत्काल आवश्यकता है।

मानव विकास प्रतिवेदन 2006 के अनुसार भारत 126वें स्थान पर था। 2020 में यह और नीचे 131वें स्थान पर चला गया है।

मानव संसाधन केवल मानव विकास के सूचकांक को ही निर्धारित नहीं करते वरन् अन्ततः यह किसी भी देश के आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। आर्थिक विकास मानवीय प्रयत्नों का ही परिणाम है। आर्थिक विकास के लिए भौतिक पूंजी की अपेक्षा मानवीय पूंजी अधिक महत्वपूर्ण है। भौतिक पूंजी का निर्माण मानव पूंजी के द्वारा ही किया जाता है। यदि मानव पूंजी में कम विनियोग किया जाए तो आर्थिक विकास की प्रक्रिया धीमी पड़ जायेगी।

अल्प विकसित देशों में आर्थिक विकास कम होने का कारण संसाधनों की कमी के साथ–साथ कौशल तथा ज्ञान में कमी होना भी है। इन देशों द्वारा भौतिक संपत्ति के निर्माण पर अधिक बल दिया गया है जबकि विकास के लिए मानव पूंजी निर्माण पर अधिक बल दिये जाने की आवश्यकता है।

एक विकासशील अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास की गति को तेज करने में मानव पूंजी निर्माण निम्न प्रकार से सहायक हो सकता है।

टिप्पणी

1. यह अल्पविकसित देशों के पूर्ण वातावरण में परिवर्तन ला सकता है। यह लोगों की आकांक्षाओं, अभिव्यक्तियों एवं अभिप्रेरणाओं को विकासोन्मुखी बनाकर आर्थिक विकास के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करता है।
2. मानव पूंजी निर्माण करके भौतिक पूंजी को अधिक उत्पादक बनाया जा सकता है।
3. मानव पूंजी निर्माण में निवेश भौतिक पूंजी निर्माण की अपेक्षा अधिक प्रतिफल देता है।
4. मानव पूंजी निर्माण श्रम बल की गतिशीलता बढ़ाता है
5. आधुनिक प्रौद्योगिकी के कुशल प्रयोग से उत्पादन को बढ़ा सकता है।

इस प्रकार मानव पूंजी निर्माण में किया गया निवेश उपलब्ध संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करके आर्थिक विकास की दर में वृद्धि कर सकता है

मानव पूंजी निर्माण शिक्षा, स्वास्थ्य, कार्यस्थल, प्रशिक्षण, प्रवसन और सूचना निवेश का परिणाम है। इसमें शिक्षा तथा स्वास्थ्य, मानव पूंजी के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत हैं। भारत में शिक्षा क्षेत्र के अंतर्गत केन्द्र व राज्य स्तर पर शिक्षा मंत्रालय तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग शिक्षा संबंधी विभिन्न नीतियों का निर्धारण करते हैं। सरकारी नियंत्रण के द्वारा ही भारत में निजी शिक्षण संस्थाओं की गुणवत्ता तथा कीमत को भी नियन्त्रित किया जाता है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजी तथा सार्वजनिक दोनों संस्थाओं का अस्तित्व है। निजी क्षेत्र में सुविधाएं उपलब्ध कराने वाली संस्थाएं कभी–कभी एकाधिकार स्थापित कर लेती हैं और शोषण करती हैं। अतः सरकारी नियन्त्रण द्वारा इन्हें नियन्त्रित करने की व्यवस्था है। स्वास्थ्य क्षेत्र के अंतर्गत केंद्र व राज्य स्तर पर स्वास्थ्य मंत्रालय, विभिन्न संस्थाओं के स्वास्थ्य विभाग तथा भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद निगरानी का कार्य करते हैं। हमारे देश में एक बड़ा वर्ग गरीबी की रेखा के नीचे है तथा स्वास्थ्य व शिक्षा का भार वहन नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में सरकार पिछड़े वर्गों को ये सुविधाएं निःशुल्क उपलब्ध कराने का प्रयास कर रही है

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर व्यय

योजनाएं	प्रतिशत व्यय
पहली पंचवर्षीय योजना	7.6%
दूसरी पंचवर्षीय योजना	5.8%
तीसरी पंचवर्षीय योजना	10.3%
चौथी पंचवर्षीय योजना	7.9%
पांचवीं पंचवर्षीय योजना	6.3%
छठी पंचवर्षीय योजना	6.8%
सातवीं पंचवर्षीय योजना	6.6%
आठवीं पंचवर्षीय योजना	8.3%
नौवीं पंचवर्षीय योजना	5.2%

दसवीं पंचवर्षीय योजना	5.7%
ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	6.2%

बारहवीं पंचवर्षीय योजना में 6.2% करोड़ रुपये स्वास्थ्य क्षेत्र के लिए रखे गये। केन्द्र व राज्यों द्वारा 12वीं योजना के अंत में GDP का 2.5% इस क्षेत्र में निवेशित करने का लक्ष्य रखा गया। योजना के आरम्भ में इसमें 1.2% की वृद्धि पिछली योजना की तुलना में की गयी। शिक्षा के क्षेत्र के लिए इस योजना में 4537.38 करोड़ की योजना की गयी जो पिछली योजना से 155.57% अधिक थी। भारत में विभिन्न योजनाओं में शिक्षा व स्वास्थ्य पर मात्र 5 से 8 प्रतिशत के बीच व्यय किया गया है जबकि विकसित देशों में यह प्रतिशत बहुत अधिक है।

टिप्पणी

भारत में कुल शिक्षा व्यय का बहुत बड़ा भाग प्राथमिक शिक्षा पर व्यय होता है उच्च तथा तकनीकी शिक्षा में होने वाला व्यय काफी कम है। इस व्यय में क्षेत्रीय विषमताएं भी मिलती हैं। इन विषमताओं के कारण ही विभिन्न राज्यों में शिक्षा के अवसरों और शैक्षिक उपलब्धियों के स्तर में भारी अंतर पाया जाता है।

मानव पूंजी का विकास मानव को श्रम की उत्पादकता बढ़ाने का साधन मानता है। शिक्षा और स्वास्थ्य पर किया गया निवेश तब तक अनुत्पादक है जब तक कि उससे वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में वृद्धि न हो जबकि मानव विकास स्वास्थ्य एवं शिक्षा को मानव भलाई का अंग मानता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. योजना आयोग ने किस सन् में मध्यम आकार के संसाधन क्षेत्रों को वर्गीकृत किया?

   (क) सन् 1950 (ख) सन् 1952

   (ग) सन् 1954 (घ) सन् 1956

4. उच्च मानव विकास समूह में कितने देश सम्मिलित हैं?

   (क) 5 (ख) 53

   (ग) 55 (घ) 57

5. किसी क्षेत्र का विकास निम्न में से किस पर निर्भर करता है?

   (क) मानव संसाधन (ख) जनसंख्या

   (ग) मृदा (घ) वर्षा

3.4 आर्थिक अंतर्संबद्धता

क्षेत्रों का निर्धारण विभिन्न कारकों के अंतर्संबंधों के आधार पर भिन्न–भिन्न प्रकार से होता है। इसीलिए क्षेत्र की अवधारणा एक जटिल अवधारणा है। क्षेत्रों को मुख्यतः दो श्रेणियों में रखा जाता है। किसी कारक की समानता के आधार पर पहचाने जाने वाले क्षेत्र संमार्गी क्षेत्र (Homogenous Region) कहलाते हैं। वहीं कार्यात्मक रूप से अंतर्संबंधित क्षेत्र कार्यात्मक क्षेत्रों (Functional Regions) की श्रेणी में रखे जा सकते हैं।

टिप्पणी

समय के साथ प्राकृतिक क्षेत्रों के प्राकृतिक आधार धूमिल हो रहे हैं। उसका कारण है पृथ्वी पर मानव ने अपनी भूमिका से कई प्राकृतिक कारकों के स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। इस संदर्भ में क्षेत्रीयकरण के आर्थिक आधारों ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। किसी विशिष्ट क्षेत्र के संदर्भ में उत्पादन के साधनों का वितरण, आर्थिक क्रियाओं का संकेंद्रण, उत्पादन व उपभोग का स्तर आदि क्षेत्रीयकरण के मुख्य निर्धारकों के रूप में प्रयुक्त हो रहे हैं। इसी संदर्भ में संसाधनों के कुशल प्रयोग व नियोजित आर्थिक विकास के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए नियोजन क्षेत्रों की अवधारणा का विकास हुआ है।

यहां पर आर्थिक क्षेत्रों के निर्धारण की कुछ मुख्य अवधारणाओं को देखा जा सकता है–

श्रम का क्षेत्रीय विभाजन

किसी भी देश के किसी भी क्षेत्र को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास में अपनी भूमिका निभाने के लिए श्रम संसाधन की आवश्यकता होती है। विभिन्न प्रकार के उत्पादन के लिए श्रम एक महत्वपूर्ण उत्पादक शक्ति है। इससे यह स्पष्ट है कि विभिन्न क्षेत्रों के संसाधनों के उचित उपयोग के लिए श्रम का संतुलित वितरण होना आवश्यक है।

प्रगतिशील अर्थव्यवस्थाओं में श्रम की क्षैतिज व लंबवत गतिशीलता बिना किसी रुकावट के निरंतर जारी रहती है और यह उन अर्थव्यवस्थाओं को और गति प्रदान करती है। यदि किसी स्थान पर श्रम का संकेंद्रण हो जाता है तो वह स्थान विभिन्न प्रकार की औद्योगिक गतिविधियों को आकर्षित करने लगता है।

हमारे देश में श्रम विभिन्न विकास संबंधी परियोजनाओं में संलग्न रहता है किन्तु जैसे ही वे परियोजनाएं समाप्त होती हैं बड़ी संख्या में श्रम का आधिक्य हो जाता है और लोग बेरोजगार हो जाते हैं। विकास परियोजनाओं के नगरीय क्षेत्रों में संकेंद्रण के कारण श्रम का बड़ी मात्रा में ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों में पलायन भी देखा जाता है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर गंभीर दुष्प्रभाव डालता है। अतः श्रम से संबंधित नियोजन भारत जैसे देशों के लिए अत्यंत आवश्यक है।

संसाधन आधारित उत्पादन चक्र

संसाधन संपन्न स्थानों पर आधुनिक औद्योगिकीकरण के कारण औद्योगिक केंद्रों का संकेंद्रण हुआ है। इन स्थानों पर संसाधनों के विदोहन से लेकर अंतिम उत्पाद के तैयार होने व बाजार तक पहुंचने तक मुख्य व लघु उद्योगों की निरंतर श्रृंखला दिखाई पड़ती है। प्रारंभिक संसाधनों को प्रसंस्करण द्वारा लगातार प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार विभिन्न पदार्थों के प्रयोग का उत्पाद चक्र आरंभ हो जाता है। इस प्रकार संसाधनों की विविधता के आधार पर सात उत्पाद चक्रों को देखा जा सकता है। इनमें से प्रत्येक के लिए श्रम का विशेषीकरण व प्रादेशिक विभाजन होता है।

1. पेट्रोलियम और गैस रसायन चक्र
2. लौह व अलौह धातुओं के लिए धात्विक चक्र
3. कृषि प्रसंस्करण चक्र

4. उपभोक्ता संबंधी उद्योगों का चक्र

5. जल विद्युत का उत्पादन चक्र

इस प्रकार के उत्पाद चक्र प्राकृतिक व आर्थिक संसाधनों के पूर्ण प्रयोग में बहुत सहायक होते हैं।

टिप्पणी

क्षेत्रीय उत्पादन संश्लिष्ट

किसी क्षेत्र में समय के साथ श्रम के प्रादेशिक विभाजन विद्युत के उत्पादन के विस्तार व अन्य संसाधनों पर आधारित उत्पादन ने क्षेत्रीय उत्पादन संश्लिष्टों के निर्माण में सहायता की है। ये संश्लिष्ट क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था का प्रकार निर्धारित करते हैं। कोलोसोव्सकी द्वारा प्रतिपादित क्षेत्रीय उत्पाद संश्लिष्ट आर्थिक क्षेत्रीयकरण की सर्वोत्तम तकनीक है। कोलोसोव्सकी के अनुसार, 'उत्पादन संश्लिष्ट' किसी एक औद्योगिक या उत्पादन क्षेत्र की प्राकृतिक और आर्थिक परिस्थितियों एवं आर्थिक–भौगोलिक अवस्थिति के अनुसार सफल समायोजन से विकसित हुआ है। अतः भौगोलिक क्षेत्रीयकरण का मुख्य आधार उत्पादन और क्षेत्र का ऐसा मिला–जुला संयोग है जो प्राकृतिक संसाधनों के साथ ऊर्जा और मशीन के द्वारा समाज के एक विशिष्ट श्रम विभाजन के कार्यात्मक संयोग से बनता है।

यद्यपि यह सिद्धांत अभी भी प्रयोगात्मक अवस्था में है किंतु इससे विभिन्न क्षेत्रों के विकास संबंधित नियोजन की बहुमूल्य जानकारी मिलती है व आर्थिक अंतर्संबद्धता का पता चलता है।

अपनी प्रगति जांचिए

6. आर्थिक अंतर्संबद्धता के अंतर्गत क्षेत्रों को कितनी श्रेणियों में रखा गया है?

(क) दो (ख) चार

(ग) छह (घ) आठ

7. श्रम से संबंधित नियोजन किन देशों के लिए अत्यंत आवश्यक है?

(क) कनाडा (ख) जापान

(ग) भारत (घ) ब्रिटेन

3.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण अंतराफलक

किसी भी देश में प्राकृतिक सम्पदा का समुचित विकास एवं उपयोग करने के लिए उस देश में विशिष्ट सीमा तक जनसंख्या का होना अति आवश्यक है। लेकिन इसके उपरान्त व्यक्तियों की संख्या की अपेक्षा उनकी गुणवत्ता देश को समृद्ध बनाने में अधिक योगदान करती है। किसी भी क्षेत्र का विकास वहां के मानव संसाधन पर निर्भर करता है। मनुष्य द्वारा ही प्राकृतिक संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग किया जा सकता है। मनुष्य ही प्राकृतिक वातावरण को संवारता व नष्ट करता है और स्वयं उससे प्रभावित भी होता है। इसलिए मनुष्य और पर्यावरण का घनिष्ठ संबंध है।

टिप्पणी

इस संबंध को भूगोल में निश्चयवाद, पर्यावरणवाद व संभववाद की अवधारणाओं से समझाया गया है। विकसित देशों में विशेषकर यूरोपीय देशों में जहां भूमि पर जनसंख्या का दबाव कम है वहां प्राकृतिक संसाधनों का दोहन पूर्णतः नहीं हो पाया है। जनसंख्या में वृद्धि वास्तव में मानव शक्ति में वृद्धि करती है।

वहीं जिन देशों में जनसंख्या वृद्धि अधिक है वहां जंगल, पेड़–पौधे, चारे और मकान बनाने के लिए काटे जा रहे हैं। अधिक जनसंख्या के कारण खेती की भूमि पर भी दबाव बढ़ता है और उसका उपजाऊपन कम हो जाता है। खेती योग्य भूमि बंजर हो जाती है। आवश्यकताओं के बढ़ने से भी मनुष्य पर्यावरण का अन्धाधुन्ध विदोहन करता है जिससे प्रदूषण पर नियंत्रण करना भी संभव नहीं हो पाता। अतः यह कह सकते हैं कि पर्यावरण, जनसंख्या एवं आर्थिक विकास एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं और एक–दूसरे पर निर्भर हैं।

पृथ्वी तथा इसके निवासियों का भविष्य, निवासियों के विकास व पर्यावरण के संरक्षण पर निर्भर करता है। पृथ्वी के संसाधनों के उचित प्रयोग द्वारा ही संतुलित व सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है किंतु इन लक्ष्यों को बढ़ती जनसंख्या के परिप्रेक्ष्य में देखने पर प्राप्त करना लगभग असंभव लगता है। जनवरी 2022 में विश्व की जनसंख्या 7.9 बिलियन है। वर्ष 2023 तक इसके 8 बिलियन होने की संभावना है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण सभी संसाधनों जैसे– जल, मृदा, वन, खेतों व भूमि की मांग बढ़ जाती है और यह सीधे किसी भी स्थान के उत्पादन व उपभोग के प्रतिरूप को प्रभावित करती है। अप्रत्यक्षतः यह मानव विकास के विभिन्न मानकों को प्रभावित करती है।

जनसंख्या व संसाधन पर विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर अपने विचार व सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं। इस संबंध में सर्वप्रथम ब्रिटिश अर्थशास्त्री एवं जननांकिकी विशेषज्ञ प्रो. थॉमस रॉबर्ट माल्थस के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। प्रो. थॉमस रॉबर्ट माल्थस ने 1798 ई. में अपनी पुस्तक 'An Essay on the Principle of Population' में जनसंख्या वृद्धि के तत्कालीन यूरोपीय संदर्भ को ध्यान में रखते हुए जनसंख्या वृद्धि संबंधी जैविक अवधारणा का प्रतिपादन किया।

यह अवधारणा कुछ निम्न आधारभूत मान्यताओं पर आधारित थी–

1. जनसंख्या में वृद्धि ज्यामितीय गति से होती है, अर्थात 1, 2, 4, 8, 16.... ।
2. खाद्य पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि अंकगणितीय रूप से होती है, अर्थात 1, 2, 3, 4, 5.... ।

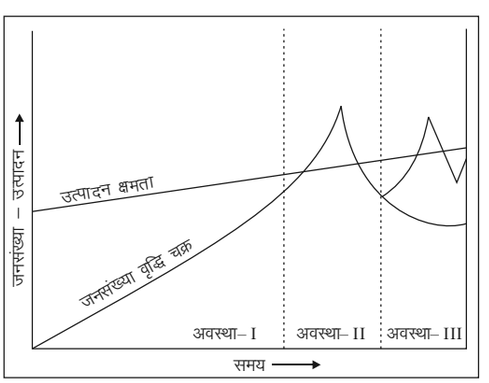

टिप्पणी

जनसंख्या के दोगुने होने की अवधि को माल्थस ने 25 वर्ष बताया था। उनके द्वारा बताई गई वृद्धि दर से दो सौ वर्षों में जनसंख्या एवं निर्वाह के साधनों का अनुपात 256 : 9 का हो जाएगा। इस प्रकार जनसंख्या व खाद्यान्न की वृद्धि की अलग–अलग प्रवृत्तियों के कारण खाद्य आपूर्ति की समस्या उत्पन्न होती है। अतः यदि स्वयं के नैतिक नियंत्रणों के द्वारा जनसंख्या की वृद्धि दर पर नियंत्रण न पाया जाए तो प्राकृतिक कारणों अर्थात दुर्भिक्ष, संक्रामक बीमारियों, युद्ध आदि के द्वारा व्यापक अकाल मृत्यु होती है। इस प्रकार जनसंख्या, खाद्य पदार्थों के अनुपात में संतुलित होने लगती है।

बढ़ती तकनीकी प्रगति के कारण मनुष्य बढ़ती जनसंख्या के उपरांत भी विकास की ओर अग्रसर रहा। इस कारण इस सिद्धांत को कम महत्व दिया गया किंतु वर्तमान में बढ़ती कोविड महामारी ने पुनः इस सिद्धांत की ओर सभी का ध्यान आकर्षित किया है। कोविड महामारी से विश्व में अब तक लगभग 5 मिलियन लोगों की मृत्यु हो चुकी है व माल्थस के दृष्टिकोण से इस महामारी को प्रकृति के नकारात्मक जनसंख्या नियंत्रण के रूप में समझा जा रहा है।

नव माल्थसवादियों के अनुसार भी यह माना गया है कि माल्थस का जनसंख्या वृद्धि नियम तकनीकी क्रांति से कुछ समय के लिए भले ही टल जाए परंतु अंततः काफी हद तक लागू होता है। उदाहरण के लिए भारत में हरित क्रांति, श्वेत क्रांति आदि के कारण खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि की दर जनसंख्या वृद्धि की तुलना में तेज रही है, परंतु खाद्यान्न की उत्पादन वृद्धि की अपनी सीमाएं हैं।

अतः राष्ट्रीय कल्याण की दृष्टि से नैतिक नियंत्रणों द्वारा अथवा कृत्रिम उपायों से जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण आवश्यक है। नव माल्थसवादी सिद्धांत के अंतर्गत ही 1972 ई. में क्लब ऑफ रोम (Club of Rome) द्वारा प्रतिपादित 'अभिवृद्धि की सीमाएं' (The Limits to Growth) सिद्धांत अत्यधिक महत्व रखता है। यह मीडोज रेंडर्स व बेहरेंस आदि विद्वानों द्वारा विकसित किया गया था। इस सिद्धांत के अनुसार पृथ्वी अंतरिक्ष में घूमते हुए एक यान की भांति है, जिसके संसाधन सीमित हैं। अतः जनसंख्या में तीव्र वृद्धि वैश्विक ध्वंस (Global Collapse) की स्थिति पैदा करेगी।

क्लब ऑफ रोम ने जनसंख्या वृद्धि, कृषि उत्पादन (प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन), प्रति व्यक्ति औद्योगिक उत्पादन, प्राकृतिक संसाधन व पर्यावरण प्रदूषण के संदर्भ में अधिकतम सीमा पर चर्चा की। उनके अनुसार 1970 ई. के उपयोग स्तर पर नवीनीकरण योग्य संसाधन 250 वर्षों में समाप्त हो जाएंगे तथा नवीनीकरण अयोग्य संसाधनों की भी अपनी सीमाएं हैं। संसाधनों की तुलना में जनसंख्या वृद्धि अधिक होने की अवस्था 2100 ई. से पूर्व ही आ जाएगी, क्योंकि उस समय विश्व की जनसंख्या 10 अरब से अधिक होगी। अतः विश्व को चाहिए कि जनसंख्या कम करने की दिशा में ठोस प्रयास करें।

मार्क्स का जनसंख्या सिद्धांत

कार्ल मार्क्स ने जनसंख्या वृद्धि के संदर्भ में अपने विचार 1867 में प्रस्तुत किए। उनका यह जननांकिकीय चिंतन जैविक अवधारणा पर नहीं वरन साम्यवादी दर्शन से प्रभावित था, जो पूर्णतः सामाजिक व आर्थिक अवधारणा पर आधारित है। उनके अनुसार वैश्विक समाज अमीर व गरीब दो वर्गों में विभाजित होता है। गरीब श्रमिक वर्ग अपनी आय को

टिप्पणी

बढ़ाने के लिए श्रम शक्ति के संग्रह व श्रमिकों की फौज तैयार करने पर बल देता है, जिससे उसमें जनसंख्या वृद्धि की गति अधिक होती है जबकि अमीर वर्ग धन संग्रह पर बल देते हुए श्रमिकों की अतिरिक्त शक्ति (Surplus Labour Force) को निरंतर सतत बनाए रखता है। इससे जन्मदर, मृत्युदर व परिवार के आकार का मजदूरी स्तर से विपरीत संबंध होता है। इस प्रकार श्रमिकों के उस वर्ग में मजदूरी दर निम्न व मृत्यु दर अधिक होती है जिन्हें बेरोजगार होने का भय अधिक होता है।

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धांत : इस सिद्धांत का प्रतिपादन जनसंख्या व संसाधनों के संबंधों के तुलनात्मक विश्लेषण से हुआ है। ब्रिटिश अर्थशास्त्री एडविन केनन को इस सिद्धांत का जनक माना जाता है। उनके अनुसार किसी देश की अनुकूलतम जनसंख्या (Optimum Population) से अभिप्राय जनसंख्या के उस आकार से होता है जो उपलब्ध संसाधनों, पूंजी व वर्तमान स्थितियों के अनुसार अधिकतम प्रति व्यक्ति आय प्रदान करता है।

यदि वास्तविक जनसंख्या अनुकूलतम से अधिक होती है तो वह देश अति जनसंख्या का देश बन जाता है। इसके विपरीत यदि वास्तविक जनसंख्या अनुकूलतम जनसंख्या से कम हो तो वह देश न्यून जनसंख्या वाला देश होता है।

जनसंख्या, संसाधन व विकास के संबंध को डब्ल्यू. एस. थाम्पसन (1929 ई.) और एफ. डब्ल्यू. नोटेस्टीन (1945 ई.) द्वारा उनके प्रसिद्ध सिद्धांत 'जननांकिकीय संक्रमण' के सिद्धांत में भी समझाया गया है। इस सिद्धांत के अनुसार जनसंख्या में वृद्धि क्रमिक चरणों में होती है तथा प्रत्येक देश को इन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। इन विभिन्न अवस्थाओं में प्रत्येक देश में एक परंपरागत पशुपालक व कृषक समाज विकास की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए अंततः एक औद्योगिक व नगरीय समाज में परिवर्तित हो जाता है तथा उसके अनुरूप ही विभिन्न अवस्थाओं में जननांकिकीय संरचना में भी परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं।

सिद्धांत की मूल अवधारणा यह है कि 'जनसंख्या वृद्धि एक जैविक प्रक्रिया है, किंतु इसका निर्धारण किसी भी समूह की सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों से होता है।' इस सिद्धांत के अनुसार कोई भी देश जननांकिकीय संक्रमण की चार अवस्थाओं से गुजरता है–

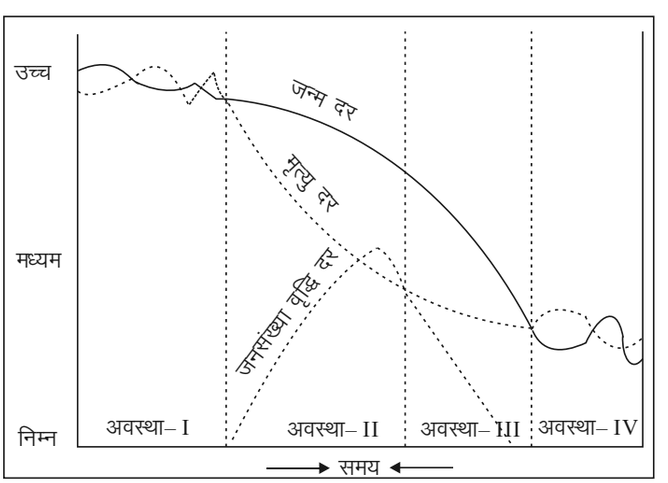

टिप्पणी

पहली अवस्था : यह उच्च जन्मदर व उच्च मृत्यु दर की धीमी जनसंख्या वृद्धि दर की अवस्था है। इसे जनसंख्या वृद्धि की अस्थिर अवस्था कहा जा सकता है क्योंकि इस अवस्था में जन्मदर व मृत्युदर दोनों ही प्राकृतिक होती हैं। अतः कभी भी यह धनात्मक या ऋणात्मक जनसंख्या वृद्धि होती है। इस अवस्था में तकनीकी प्रगति अधिक नहीं होती। समाज प्राथमिक आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होता है व चिकित्सा सुविधाओं का उतना विकास नहीं होता है अतः मृत्यु व जन्म दर प्राकृतिक होती हैं। अधिकांशतः अविकसित देश इस श्रेणी में आते हैं।

दूसरी अवस्था : इसे जनसंख्या विस्फोट या संक्रमण की अवस्था भी कहते हैं। उच्च जन्म दर एवं घटती मृत्युदर इस अवस्था की प्रमुख विशेषता होती है। विश्व के अधिकतर विकासशील देश इसी अवस्था में हैं, जहां चिकित्सा सुविधा के विस्तार से मृत्युदर में तो कमी आयी है परंतु सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों में विशेष अंतर नहीं होने के कारण जन्मदर में अपेक्षित कमी नहीं आ पाई है। इस अवस्था वाले देशों में बेरोजगारी, अशिक्षा, बुनियादी सेवाओं की कमी, खाद्यान्न की कमी आदि की समस्या प्रमुख होती है। परंतु श्रमिकों की आपूर्ति बढ़ने से सघन जीवन निर्वाह, कृषि व अन्य विकास कार्य भी प्रारंभ होते हैं।

तीसरी अवस्था : यह जनसंख्या वृद्धि में ह्रास की प्रवृत्ति की अवस्था है। साक्षरता में प्रसार, छोटे परिवार के प्रति जागरूकता एवं बढ़ते हुए सामाजिक–आर्थिक विकास के कारण जन्मदर में कमी आती है तथा मृत्युदर भी घटती जाती है। इस प्रकार इस अवस्था में धीमी जनसंख्या वृद्धि होती है।

चौथी अवस्था : यह जनसंख्या वृद्धि की स्थिर अवस्था है। इस अवस्था में जन्मदर एवं मृत्युदर दोनों ही न्यून हो जाती हैं। यह अवस्था किसी भी देश के विकसित होने को दर्शाती है।

पांचवीं अवस्था : इसे ऋणात्मक वृद्धि की अवस्था भी कहा जाता है क्योंकि यहां यद्यपि मृत्युदर न्यून होती है, परंतु पारिवारिक संस्थाओं एवं विवाह जैसे मूल्यों के पतन के कारण जन्मदर, मृत्युदर से भी कम रहती है। यह अत्यधिक विकसित एवं तकनीकी समाज की द्योतक है।

यूरोपीय देशों में ये अवस्थाएं इस प्रकार से देखी गई हैं–

1. पहली अवस्था : औद्योगिक क्रांति से पूर्व
2. दूसरी अवस्था : औद्योगिक क्रांति से प्रथम विश्वयुद्ध तक
3. तीसरी अवस्था : प्रथम विश्वयुद्ध से 1950 ई. तक
4. चौथी अवस्था : 1950 ई. के बाद
5. पांचवीं अवस्था : 1970 ई. के बाद

अन्य देशों में विभिन्न समयों पर इन अवस्थाओं के अनुसार जनसंख्या वृद्धि का अनुभव किया गया है। विश्व के अधिकांश देशों में इस सिद्धांत को आधार बनाकर जननांकिकीय आर्थिक एवं सामाजिक कार्यक्रम बनाए गए हैं।

यदि हम विकसित तथा विकासशील देशों के संबंध में जनसंख्या वृद्धि के प्रतिरूप को देखें तो 1950 तक विकसित देशों में वृद्धि दर विकासशील देशों की अपेक्षा उच्च

टिप्पणी

थी। इसका कारण मृत्यु दर में कमी तथा जन्म व मृत्यु दर के बीच बढ़ता फासला था। मृत्यु दर में कमी के कारण थे, जैसे– साक्षरता में वृद्धि, चिकित्सा क्षेत्र में तरक्की तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास व विस्तार आदि। परंतु विकासशील देशों में वृद्धि दर कम थी क्योंकि जन्म दर तथा मृत्यु दर दोनों बहुत उच्च थी जिससे वृद्धि दर को कम करने में मदद मिली थी। 1950 के बाद, विकसित विश्व में वृद्धि दर विकासशील देशों की तुलना में बहुत कम थी। इसका कारण था विकसित देशों में जन्म दर तथा मृत्यु दर में आयी अभूतपूर्व कमी जबकि विकासशील देशों में खासकर बड़ी जनसंख्या वाले देशों, जैसे– चीन तथा भारत में मृत्यु दर में अत्यधिक कमी आई और जन्म दर उच्च रही। कुल मिलाकर संपूर्ण विश्व में पिछले 30 से 40 वर्षों के दौरान जनसंख्या वृद्धि दर का ग्राफ नीचे की ओर गया है।

***तालिका** : विश्व–विकसित तथा विकासशील देशों में जनसंख्या की वृद्धि*

वर्ष	विकसित देशों में वृद्धि दर	विकासशील देशों में वृद्धि दर
1750–1850	0.6	0.17
1850–1950	0.9	0.6
1950–1970	1.1	2.2
1990–1995	0.4	1.7

स्रोत : वंदना, अर.सी. (2008), जियोग्राफी ऑफ पॉपुलेशन, लुधियाना तथा नई दिल्ली, कल्याणी पब्लिशर्स, पृष्ठ 194–195

जनसंख्या वृद्धि दर को स्थिर करने के लिए स्वास्थ्य सुविधाएं अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। स्वास्थ्य सुविधाएं स्वस्थ जनसंख्या को सुनिश्चित करती हैं। स्वस्थ जनसंख्या किसी भी देश के विकास के निर्धारकों में से एक मुख्य कारक है।

पर्यावरण अंतराफलक

प्रादेशिक नियोजन की अधिकांश अवधारणाएं मानव व उसके वातावरण से संबंधों के विश्लेषण से प्रभावित हैं। इस विश्लेषण को विद्वानों ने विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में प्रस्तुत किया है। प्राचीन समय में स्ट्रैबो, प्लेटो और अरस्तू द्वारा गर्म व ठंडे समाज के विकास को समझाने के लिए जलवायु वर्गीकरण प्रणाली का प्रयोग किया गया। इस विचारधारा को पर्यावरण नियतिवाद के रूप में जाना जाता है। इसका प्रयोग न केवल एक समाज की संस्कृति बल्कि एक समाज के लोगों की भौतिक विशेषताओं को भी समझने के लिए किया गया है। पर्यावरण नियतिवाद के अनुसार यह माना जाता है कि पर्यावरण, विशेष रूप से इसके भौतिक कारक जैसे कि भू–आकृतियां और जलवायु मानव संस्कृति और सामाजिक विकास के प्रतिरूप को निर्धारित करते हैं।

इब्न खल्दून एक अरब समाजशास्त्री और विद्वान आधिकारिक तौर पर पर्यावरण निर्धारकों में से एक अलग रूप में जाने जाते थे। इब्न खल्दून ने प्रदेशों में रहने वाली आबादी के आचरण और प्रवृत्ति की भिन्नता को जलवायु से जोड़ा।

नियतिवाद या निश्चयवाद की अवधारणा अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में पुनर्जीवित हुई। इस काल में जर्मन विद्वान इस विचारधारा के सबसे बड़े समर्थक थे। इनमें मुख्य कार्ल रिटर थे। इन्होंने मनुष्य की शारीरिक बनावट पर भौतिक वातावरण

के प्रभाव की पुरजोर वकालत की। हम्बोल्ट ने भौतिक वातावरण को मानवीय क्रियाकलापों को निर्धारित करने वाला कारक माना।

टिप्पणी

विकासवादी जीव विज्ञानी चार्ल्स डार्विन ने अपने अग्रणी सिद्धांत में जीवों के विकास में चयनात्मक प्रक्रिया तथा प्राकृतिक बल का महत्व समझाया। इस सिद्धांत के आधार पर फ्रेडरिक रेटजेल ने अपनी पुस्तक 'एंथ्रोपोज्योग्राफी' में संसार के ऐतिहासिक विकास क्रम को पृथ्वी के भौतिक वातावरण से सहसंबद्ध किया या जोड़ा। रेटजेल की विद्यार्थी रही अमेरिकी विदुषी एलेन चर्चिल सेंपल ने संयुक्त राज्य अमेरिका में इस अवधारणा को मजबूती से आगे बढ़ाया। सेंपल की पहली प्रमुख पुस्तक 'अमेरिकन हिस्ट्री एंड इट्स जियोग्राफिक कंडीशन' (1903) ने एक क्षेत्र के इतिहास को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय निश्चयवादी विचारों की नींव रखी थी। एल्सवर्थ हटिंगटन और एस.के. मार्खम ने भी नियतिवाद का समर्थन किया है। हटिंगटन ने सभ्यताओं पर जलवायु के प्रभाव को दर्शाया है।

समय के साथ मानव ने कई प्राकृतिक बाधाओं को पार किया है और बाधाओं पर विजय प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है।

इस संदर्भ में 'संभववाद की अवधारणा' भौतिक वातावरण द्वारा मानव कार्यों के लिए प्रदत्त असीम अवसरों और संभावनाओं का अध्ययन है। यह अवधारणा मूल रूप से फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता विडाल डी ला ब्लाश से जुड़ी हुई है। फ्रेडरिक रेटजेल के समकालीन भूगोलवेत्ता ला ब्लाश, रेटजेल की पुस्तक 'एंथ्रोपोज्योग्राफी' के दूसरे खंड से प्रभावित थे, जिसमें पृथ्वी पर मानव के स्थानीय फैलाव की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि जैसे पर्यावरण मनुष्यों को प्रभावित करता है ठीक उसी तरह मनुष्य भी जहां रहता है उस पर्यावरण को प्रभावित करता है। इस तरह मानव के पास प्राकृतिक वातावरण द्वारा प्रदत्त अवसरों को चुनने की क्षमता है ताकि वह अपनी आवश्यकताओं और उद्देश्यों के लिए सर्वोत्तम विकल्प का चयन कर सके।

ब्लाश ने आगे कहा कि मानव समुदाय और प्राकृतिक वातावरण के बीच अभिन्न संबंध है और एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती। ब्लाश के अनुसार, "भूगोल क्षेत्रों से जुड़ी चीजों, उनका अंतर्संबंध स्थानिक विविधता और विशेषता का अध्ययन है" (ला ब्लाश, 1913)।

इन विशिष्ट क्षेत्रों को ब्लाश ने पेएज (Pays) कहा। यह भूगोल में मानव गतिविधियों और प्रकृति के अन्योन्याश्रय संबंध के विचारों की शुरुआत थी। इतिहासकार लुसिएन फेब्रे ने ब्लाश के संभववाद की अवधारणा का समर्थन करते हुए कहा कि "हर जगह संभावनाएं हैं, आवश्यकताएं नहीं, इन संभावनाओं के स्वामी के रूप में मानव उनके उपयोग का निर्णायक है।" (फेब्रे 1932)

इन विचारों की आलोचना नव–नियतिवाद या नव निश्चयवाद के दर्शन से हुई। नव नियतिवाद या नव निश्चयवाद यह बताता है कि भौतिक वातावरण मानव की गतिविधियों को निर्धारित करता है। मानव यह तय कर सकता है कि उसे किन गतिविधियों में भाग लेना है। मानव अपनी बुद्धिमानी से अपने प्राकृतिक परिवेश में उपलब्ध विकल्पों में से उपयुक्त विकल्प का चयन कर सकता है। इस अवधारणा को रुको और जाओ नियतिवाद या नव निश्चयवाद के रूप में जाना जाता है। ऑस्ट्रेलिया के ग्रिफिथ टेलर इस अवधारणा के मुख्य प्रतिपादकों में से एक हैं। उन्होंने कहा कि मानव बुद्धिमानी से अपने आसपास के भौतिक वातावरण से सही विकल्प चुनता है। ये

किसी भी विशेष वातावरण में मानव द्वारा चुने गए सबसे अनुकूल विकल्प हैं और इनमें नियोजन प्रक्रिया के रूप में उपयोग किये जाने की क्षमता है, जिसे किसी भी राष्ट्र द्वारा समृद्धि के लिए अपनाया जा सकता है।

टिप्पणी

टेलर के रुको और जाओ निश्चयवाद के समानांतर ही संभाव्यवाद (Probabilism) की अवधारणा विकसित हुई। स्पेट के अनुसार संभाव्यवाद पर्यावरणीय नियतिवाद तथा संभववाद के बीच का मार्ग है। उनके शब्दों में यह सब कुछ विकल्प या विकल्पहीनता न होकर संभावनाओं का एक संतुलन है। संभाव्यवाद मानव गतिविधियों का एक संतुलन है। संभाव्यवाद मानव गतिविधियों को प्राकृतिक वातावरण तथा समाज द्वारा उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकी के बीच की जटिल अंतःक्रिया की प्रतिक्रिया के रूप में देखता है।

अतः मानव पर्यावरण संबंध जटिल बहुस्तरित तथा संदर्भ सापेक्ष है। संपूर्णता के साथ कोई भी एक विचार पूर्ण नहीं है।

वर्तमान परिदृश्य में यह आवश्यक है कि मनुष्य को आर्थिक उन्नति के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण पर भी ध्यान देना चाहिए एवं आर्थिक उन्नति का उद्देश्य बिना पर्यावरण विनाश के विकास की धारणा होनी चाहिए जिससे विकास की गति भी न रुके और प्राकृतिक सन्तुलन को भी बनाये रखा जा सके और यह तभी संभव हो सकेगा जब मनुष्य खुद इसके प्रति जागरूक हो एवं पर्यावरण की महत्ता को समझे।

अपनी प्रगति जांचिए

8. विश्व की जनसंख्या जनवरी 2022 तक कितने बिलियन थी?

(क) 5.9 बिलियन (ख) 7.9 बिलियन

(ग) 9.9 बिलियन (घ) 11.9 बिलियन

9. जनसंख्या वृद्धि के संदर्भ में अपने विचार सन् 1867 ई. में किसने प्रस्तुत किए?

(क) माल्थस (ख) कार्ल मार्क्स

(ग) रॉबिंसन (घ) डेविड रिकार्डो

3.6 नीतियां एवं कार्यक्रम

मानव विकास का दृष्टिकोण 8वीं पंचवर्षीय योजना से ही भारतीय नियोजन की आधारशिला रहा है। इस अवधारणा को इस तरीके से अपनाया जाना इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि राज्य और जिला स्तर पर मानव विकास को मापने और एच.डी.आर. तैयार करने के मामले में भारत ने वैश्विक मानदण्ड स्थापित कर दिया है।

भारत में आरंभ की गयी 'मानव विकास : असमानता समाप्ति की ओर' नामक परियोजना नीति आयोग, राज्य सरकारों और विशेषज्ञों द्वारा मानव विकास पर निरन्तर सहयोग के पुरजोर समर्थन का जवाब है ताकि विश्लेषण के स्थान पर कार्रवाई पर जोर दिया जा सके। परियोजना का जोर समावेशी विकास को बढ़ावा देने और निरन्तर असमानता तथा विसंगति के मुद्दों पर कार्रवाई उन्मुख गुणवत्ता अध्ययन का समर्थन करना तथा विभिन्न हितार्थियों की क्षमता के विकास पर जोर देने से है।

टिप्पणी

'मानव विकासः असमानता समाप्ति की ओर' नामक परियोजना विशेष रूप से राज्य स्तर पर निरंतर वजन के मुद्दों से निबटने के लिए अभिनव नीतिगत विकल्प प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करती है। इस संदर्भ में असमानता और खासकर लैंगिक तथा सामाजिक असमानता के मुद्दों पर विशेष जोर दिया जा रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर पहल से राज्य स्तर पर कार्रवाई में मानव विकास के लक्ष्य को व्यावहारिक रूप देने का यह एक प्रयास है। राज्य स्तरीय पहलों में सम्मिलित हैं राज्य स्तरीय मानव विकास रिपोर्ट, जिला मानव विकास रिपोर्ट, क्षेत्रीय मानव विकास रिपोर्ट तैयार करना, अनुसंधान आधारित नीति को बढ़ाना, क्षमता विकास, सांख्यिकी प्रणालियों का सशक्तिकरण और सामुदायिक अनुवीक्षण साधनों का उपयोग। राष्ट्रीय स्तरीय पहलों में शामिल हैः मानव विकास नीति को बढ़ावा, क्षेत्रीय विषयगत मानव विकास रिपोर्ट को तैयार करना, क्षमता विकास, सांख्यिकीय प्रणाली का सुदृढ़ीकरण, मानव विकास में सुधार के लिए बजट का विश्लेषण और जिला विकास रिपोर्ट की प्रस्तुति। एच.डी.वी.आई. परियोजना का उद्देश्य कई प्रकार के हितार्थियों के बीच भागीदारी को बढ़ावा देना है जिसमें सांसद निजी क्षेत्र, नागरिक समाज संगठन, विश्वविद्यालय, मीडिया आदि शामिल हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

10. मानव विकास का दृष्टिकोण किस पंचवर्षीय योजना से भारतीय नियोजन की आधारशिला रही है?
    (क) तीसरी पंचवर्षीय योजना (ख) पांचवीं पंचवर्षीय योजना
    (ग) आठवीं पंचवर्षीय योजना (घ) नौवीं पंचवर्षीय योजना
11. किस स्तर पर मानव विकास को मापने और एच.डी.आर. तैयार करने में भारत ने वैश्विक मानदंड स्थापित किया?
    (क) राज्य स्तर पर (ख) जिला स्तर पर
    (ग) विश्व स्तर पर (घ) राज्य और जिला स्तर पर

3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (ग)
4. (ख)
5. (क)
6. (क)
7. (ग)
8. (ख)
9. (ख)
10. (ग)
11. (घ)

3.8 सारांश

टिप्पणी

मध्यम आकार के क्षेत्रों की अवधारणा व उनके क्षेत्रीयकरण के आधारों की चर्चा विभिन्न योजनाओं के माध्यम से की गई है। द्वितीय स्तर अथवा मध्यम आकार के क्षेत्रों का निर्धारण निम्न स्तर पर स्थित लघु इकाइयों को मिलाकर किया जाता है।

भौतिक संसाधनों की उपलब्धता मध्यम आकार के क्षेत्रों के निर्धारण का मुख्य आधार है। अतः भारत में इस आधार पर बनायी गयी योजना आयोग की 1954 की योजना को वर्णित किया गया है। मानव व आर्थिक विकास के संबंध को समझने के लिए मानव संसाधन की अवधारणा को समझना आवश्यक है। मानव विकास रिपोर्ट मानव संसाधन व मानव विकास मापन को समझने के लिए महत्वूपर्ण है। इसके माध्यम से यह समझा जा सकता है कि मानव संसाधन केवल मानव विकास के सूचकांक को ही निर्धारित नहीं करते वरन ये किसी भी देश के आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

भौतिक संसाधन प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले उत्पाद हैं जो मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। मानव अस्तित्व के लिए संसाधन आवश्यक हैं। मानव की आवश्यकता का निर्माण पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का केंद्र है। आवश्यकता संसाधन के रूप में व्यक्त होती है। अधिक से अधिक संसाधनों का निर्माण पूंजी का विस्तार करता है।

मानव विकास सूचकांक (HDI) स्वास्थ्य, शिक्षा और संसाधनों तक पहुंच जैसे प्रमुख क्षेत्रों में निष्पादन के आधार पर देशों का क्रम तैयार करता है। यह क्रम 0 से 9 के बीच के स्कोर पर आधारित होता है जो एक देश, मानव विकास के महत्वपूर्ण सूचकों में अपने रिकार्ड से प्राप्त करता है।

मानव निर्धनता सूचकांक मानव विकास सूचकांक से संबंधित है। यह सूचकांक मानव विकास में कमी मापता है। यह एक बिना आय वाला माप है। किसी क्षेत्र के मानव विकास में कमी दर्शाने के लिए 40 देशों की तुलना में सामाजिक विविधता अधिक पाई जाती है। इस वर्ग के अनेक देशों ने अपने अभिनव इतिहास में राजनीतिक अस्थिरता और सामाजिक विद्रोह का सामना किया है।

मानव पूंजी निर्माण शिक्षा, स्वास्थ्य, कार्यस्थल, प्रशिक्षण, प्रवसन और सूचना निवेश का परिणाम है। इसमें शिक्षा तथा स्वास्थ्य, मानव पूंजी के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत हैं। भारत में शिक्षा क्षेत्र के अंतर्गत केन्द्र व राज्य स्तर पर शिक्षा मंत्रालय तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग शिक्षा संबंधी विभिन्न नीतियों का निर्धारण करते हैं।

क्षेत्रों का निर्धारण विभिन्न कारकों के अंतर्संबंधों के आधार पर भिन्न–भिन्न प्रकार से होता है। इसीलिए क्षेत्र की अवधारणा एक जटिल अवधारणा है। क्षेत्रों को मुख्यतः दो श्रेणियों में रखा जाता है। किसी कारक की समानता के आधार पर पहचाने जाने वाले क्षेत्र संमार्गी क्षेत्र (Homogenous Region) कहलाते हैं। वहीं कार्यात्मक रूप से अंतर्संबंधित क्षेत्र कार्यात्मक क्षेत्रों (Functional Regions) की श्रेणी में रखे जा सकते हैं।

किसी भी देश में प्राकृतिक सम्पदा का समुचित विकास एवं उपयोग करने के लिए उस देश में विशिष्ट सीमा तक जनसंख्या का होना अति आवश्यक है। लेकिन इसके उपरान्त व्यक्तियों की संख्या की अपेक्षा उनकी गुणवत्ता देश को समृद्ध बनाने

में अधिक योगदान करती है। किसी भी क्षेत्र का विकास वहां के मानव संसाधन पर निर्भर करता है। मनुष्य द्वारा ही प्राकृतिक संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग किया जा सकता है। मनुष्य ही प्राकृतिक वातावरण को संवारता व नष्ट करता है और स्वयं उससे प्रभावित भी होता है। इसलिए मनुष्य और पर्यावरण का घनिष्ठ संबंध है।

टिप्पणी

मानव विकास का दृष्टिकोण 8वीं पंचवर्षीय योजना से ही भारतीय नियोजन की आधारशिला रहा है। इस अवधारणा को इस तरीके से अपनाया जाना इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि राज्य और जिला स्तर पर मानव विकास को मापने और एच.डी.आर. तैयार करने के मामले में भारत ने वैश्विक मानदण्ड स्थापित कर दिया है।

भारत में आरंभ की गयी 'मानव विकास : असमानता समाप्ति की ओर' नामक परियोजना नीति आयोग, राज्य सरकारों और विशेषज्ञों द्वारा मानव विकास पर निरन्तर सहयोग के पुरजोर समर्थन का जवाब है ताकि विश्लेषण के स्थान पर कार्रवाई पर जोर दिया जा सके।

'मानव विकासः असमानता समाप्ति की ओर' नामक परियोजना विशेष रूप से राज्य स्तर पर निरंतर वजन के मुद्दों से निपटने के लिए अभिनव नीतिगत विकल्प प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करती है। इस संदर्भ में असमानता और खासकर लैंगिक तथा सामाजिक असमानता के मुद्दों पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

3.9 मुख्य शब्दावली

- **संसाधन** : संसाधन एक ऐसा स्रोत है जिसका उपयोग मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए करता है। हमारे पर्यावरण में उपलब्ध हर वह वस्तु संसाधन है जिसका प्रयोग मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है।
- **प्राकृतिक संसाधन** : मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ जैव–भौतिकी पर्यावरण के तत्वों को प्राकृतिक संसाधन कहते हैं।
- **संमार्गी क्षेत्र** : किसी कारक की समानता के आधार पर पहचाने जाने वाले क्षेत्र।
- **मानव विकास** : मानव विकास, स्वास्थ्य, भौतिक पर्यावरण से लेकर आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्वतंत्रता तक सभी प्रकार के मानव विकल्पों को सम्मिलित करते हुए लोगों के विकल्पों में विस्तार और उसकी शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं तथा सशक्तिकरण के अवसरों में वृद्धि की प्रक्रिया है।
- **भौतिक संसाधन** : भौतिक संसाधन एक प्रकार का संसाधन है जिसका उपयोग उत्पादन या निर्माण प्रक्रिया में किया जाता है।

3.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. मध्यम आकार के क्षेत्रों से क्या तात्पर्य है?
2. वृहत्, मध्यम एवं लघु क्षेत्रों में क्या अंतर है?

टिप्पणी

3. आर्थिक विकास की गति को तेज करने में मानव पूंजी निर्माण किस प्रकार से सहायक हो सकता है?
4. लिंग–संबंधित विकास सूचकांक से आप क्या समझते हैं?
5. किन कारणों से क्षेत्रीयकरण के आर्थिक आधारों ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है?
6. क्षेत्रीय उत्पादन संश्लिष्ट से क्या तात्पर्य है।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. मध्यम आकार के क्षेत्र की अवधारणा को समझाते हुए इसके क्षेत्रीयकरण के आधारों का वर्णन कीजिए?
2. भारत के प्रमुख भौतिक क्षेत्रों का विस्तृत वर्णन कीजिए?
3. भौतिक संसाधन मध्यम आकार के क्षेत्रों के निर्धारण के एक महत्वपूर्ण आधार हैं समझाइए।
4. मानव विकास को परिभाषित करते हुए इसके विभिन्न प्रकार बताइए?
5. भारत के विभिन्न राज्यों के मानव विकास का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए?
6. 'भारत में जनसंख्या का वितरण असमान है', इस कथन को उदाहरणों द्वारा समझाइए।
7. जनसंख्या वृद्धि से आप क्या समझते हैं? भारत में जनसंख्या वृद्धि के विभिन्न चरणों की विवेचना कीजिए?
8. जनसंख्या विकास व पर्यावरण के संबंध को समझाइए।

3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिंह आर. एल. 1977 (एडी.) ''इंडिया : ए रीजिनल जियोग्राफी ऑफ इंडिया'', नेशनल जियोग्राफी सोसाइटी, वाराणसी
2. ड्रेज जीन और सेन अमर्त्य, 1995, ''इंडिया इकॉनोमिक डेवलपमेंट एण्ड सोशल ऑपरच्युनिटी'', ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, दिल्ली
3. महबूब उल हक, 1997, 'ह्यूमन डेवलपमेंट इन साऊथ एशिया' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
4. चिशोम, एम, 1982 'मॉडर्न वर्ल्ड डेवलपमेंट : ए जियोग्राफीकल पर्सपेक्टिव, टोखा, एन. जे. बार्न्स एण्ड नोबेल
5. ट्रिवार्था जी, 1969, 'ए जियोग्राफी ऑफ पॉपुलेशन – वर्ल्ड पैटर्न'', विले एण्ड संस, न्यूयॉर्क
6. व्हीतर जेम्स ओ. एण्ड मुलेर पीटर ओ., 1981, इकॉनोमिक डेवलपमेंट, विले, न्यूयॉर्क
7. दत्त गौरव एण्ड महाजन अश्वनी, 2011, 'इंडियन इकॉनोमी', एस. चांद एण्ड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई 4 सूक्ष्म क्षेत्र

टिप्पणी

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सूक्ष्म क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार
4.3 भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन
4.4 औपचारिक और कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य संबंध
4.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध
4.6 नीतियां एवं कार्यक्रम
4.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.8 सारांश
4.9 मुख्य शब्दावली
4.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.11 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

आर्थिक क्षेत्र आर्थिक नियोजन को एक आधार प्रदान करते हैं। क्षेत्रों के पदानुक्रम का सिद्धांत प्राकृतिक क्षेत्रों की रूपरेखा के अंतर्गत ही मुख्यतः उत्पादन के विशेषीकरण व आर्थिक क्षेत्रीयकरण पर निर्भर है। इसलिए आर्थिक क्षेत्रीयकरण के लिए सर्वप्रथम किसी भी देश के प्राकृतिक क्षेत्रों का सीमांकन आवश्यक है।

सूक्ष्म क्षेत्र नियोजन के विभिन्न स्तरों में सबसे छोटे आकार की इकाई है। ये क्षेत्र ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनकी कुछ विशिष्ट क्षमताएं होती हैं जो अन्य क्षेत्रों में नहीं पाई जाती, जैसे– किसी क्षेत्र में कृषि के विकास की अत्यधिक क्षमता होती है, जैसे– पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, किसी में खनन की जैसे– झारखंड, किसी में पर्यटन की जैसे– जम्मू–कश्मीर, किसी में जल विद्यतु उत्पादन की जैसे– हिमाचल प्रदेश। ये सभी क्षेत्र सूक्ष्म स्तर के नियोजन क्षेत्र माने जाते हैं। इनके लिए यह भी आवश्यक है कि ये स्वयं में इतने विशिष्ट हों कि अपने समीप के क्षेत्रों से भिन्न हों। ऐसे क्षेत्रों के क्षेत्रफल/आकार का मानकीकरण भी संभव नहीं होता। ये एक स्थान से दूसरे स्थान पर तथा एक ही स्थान पर विभिन्न समय पर भिन्न–भिन्न आकार के हो सकते हैं।

इस इकाई में सूक्ष्म क्षेत्र, भौतिक, मानवीय व आर्थिक संसाधनों, औपचारिक व कार्यात्मक क्षेत्र, जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध को विस्तार से समझाया गया है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- सूक्ष्म क्षेत्र की अवधारणा को समझ पाएंगे;

टिप्पणी

- भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधनों का विश्लेषण कर पाएंगे;
- औपचारिक व कार्यात्मक क्षेत्र के मध्य अंतर्संबंध की विवेचना कर पाएंगे;
- जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य संबंध को जान पाएंगे;
- सूक्ष्म क्षेत्र की नीतियों एवं कार्यक्रमों का आकलन कर पाएंगे।

4.2 सूक्ष्म क्षेत्र : क्षेत्रीयकरण के आधार

सूक्ष्म क्षेत्र आकार में सबसे छोटे होते हैं और यह नियोजन का सबसे निम्न स्तर है। इस तरह की इकाई में या तो जिले से नीचे की इकाई जैसे कुछ तहसीलें या एक विकास ब्लॉक (Development Block) का संपूर्ण भाग या ग्रामीण पृष्ठभूमि का एक बड़ा भाग सम्मिलित हो सकता है। ये सभी मुख्य क्षेत्र का एक पदानुक्रम बनाते हैं और सूक्ष्म क्षेत्रों के स्तर में सम्मिलित होते हैं।

इस प्रकार का क्षेत्र एक बड़ा शहर या एक महानगरीय क्षेत्र या एक पिछड़ा हुआ ग्रामीण या जनजातीय क्षेत्र हो सकता है जिसकी विशिष्ट समस्याएं हैं। संक्षेप में ऐसा कोई भी क्षेत्र जो किसी केंद्र बिंदु के चारों ओर हो और इसकी परिधि के साथ फैला हो या किसी दूरवर्ती भाग में हो, सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन का क्षेत्र हो सकता है। इसके निर्धारण की एकमात्र अनिवार्यता यह है कि इसमें एक सामान्य सामुदायिक अभिरुचि या एक सामान्य समस्या हो जिसके लिए जमीनी स्तर के नियोजन (Grass Root Planning) की आवश्यकता होती है।

क्षेत्रीयकरण के आधार

भूगोल को स्थानों के विज्ञान के रूप में जाना जाता है। यह विभिन्न स्थानों पर मिलने वाली विविधताओं का अध्ययन करता है। जिस स्थान पर किसी विविधता का अध्ययन किया जाता है उसे क्षेत्र (Area) कहा जा सकता है। जबकि क्षेत्र (Region) को किसी भू–राजनीतिक भाग की एक विशिष्ट इकाई के रूप में समझा जा सकता है। किसी विशेष क्षेत्र को किसी विशिष्ट तथ्य की उपलब्धता या अनुपलब्धता के आधार पर सीमांकित किया जाता है। अतः क्षेत्र को किसी विशिष्ट तथ्य की उपलब्धता के आधार पर समझा जा सकता है जबकि प्रखंड (Zone) किसी विशिष्ट तथ्य की उपलब्धता व उसकी सघनता से पहचाना जाता है। जैसे जलवायु प्रखंड (Climate Zone), वनस्पति प्रखंड (Vegitation Zone) आदि। यद्यपि क्षेत्र (Region) भौगोलिक अध्ययन की एक जटिल संकल्पना है।

क्षेत्र किसी भू–राजनीतिक इकाई का ऐसा भाग है जिसे अनुभव, समझ व विशिष्टताओं के आधार पर पृथक किया जाता है। ये विशिष्टताएं भिन्न हो सकती हैं और क्षेत्र भी। उदाहरण के लिए– प्राकृतिक क्षेत्र (जैसे जलवायु, वनस्पति, भू–आकृति), सांस्कृतिक क्षेत्र (भाषा, धर्म), आर्थिक क्षेत्र (वृद्धि, औद्योगिक) हो सकते हैं।

इस प्रकार क्षेत्रों को सीमांकित करने के लिए एक या एक से अधिक तथ्यों जैसे भौतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक संभागता का होना एक मुख्य निर्धारक है। यदि कोई भी तथ्य या विशेषता किसी निरंतर पड़ने वाले भू–भाग में पाई जाती है तो

उसे एक क्षेत्र के रूप में सीमांकित किया जा सकता है। अतः भू–भाग की निरंतरता भी एक महत्वपूर्ण निर्धारक है।

टिप्पणी

जिले व तहसील में सूक्ष्म स्तरीय नियोजन के लिए इन्हें विभिन्न विकास खंडों (Development Blocks) में बांटा गया है। भारत को लगभग 5000 से भी अधिक खंडों में बांटा गया है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों तक सूक्ष्म स्तरीय नियोजन को संभव किया जा सके। प्रत्येक ऐसा खंड लगभग 100 से अधिक गांवों में फैला है जो 60 से 70 हजार तक की जनसंख्या को सम्मिलित करता है। यद्यपि सबसे निम्न स्तर का नियोजन भौतिक व अभौतिक सेवाओं के परिवहन, औद्योगिक संकुल और देश की अर्थव्यवस्था के विकास में जनसंख्या कारकों के निर्धारण के लिए आवश्यक होता है। सूक्ष्म क्षेत्र संख्या में अधिक और विभिन्न प्रकार के हैं उन्हें सरलता से निर्धारित नहीं किया जा सकता है। अतः यहां भारत के प्रशासनिक विभागों राज्य से लेकर निम्न स्तर पर जाते हुए विकास खंडों के द्वारा इनका केवल एक उदाहरण दिया गया है। स्थानिक नियोजन की दृष्टि से आवश्यकतानुसार भारत को वृहत्, मध्यम और सूक्ष्म क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

सूक्ष्म क्षेत्र नियोजन प्रादेशिक तंत्र में सबसे छोटे क्षेत्र होते हैं। ये क्षेत्र ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनमें सौभाग्यवश कुछ ऐसी विशिष्ट क्षमताएं होती हैं जो किसी अन्य क्षेत्र में नहीं पाई जाती। जैसे कि किसी क्षेत्र में कृषि विकास की असीम क्षमता होती है (जैसे, पंजाब में) या किसी क्षेत्र में खनन की विशिष्ट क्षमता उपलब्ध होती है (जैसे, झारखंड में) या कहीं पर्यटन के विकास की विशिष्ट क्षमता होती है (जैसे, जम्मू–कश्मीर में) या किसी क्षेत्र में जल विद्युत उत्पादन की असीम क्षमता होती है (जैसे, हिमाचल क्षेत्र में) या किसी क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा स्रोत असीम होता है जैसे कि केरल में ये सभी क्षेत्र सूक्ष्म स्तर नियोजन क्षेत्र माने जा सकते हैं। इन सूक्ष्म स्तर के नियोजन क्षेत्रों के लिए भी यह आवश्यक है कि वे स्वयं में इतने विशेष हों कि वे अपने आसपास के क्षेत्र से भी भिन्न हों। ये सूक्ष्म स्तर के नियोजन क्षेत्रों के तंत्र के पदानुक्रम में सबसे निम्न स्तर पर स्थित होते हैं। इस प्रकार के क्षेत्रों के क्षेत्रफल/आकार का आकार मानकीकरण संभव नहीं होता। ये एक स्थान से किसी अन्य स्थान पर तथा एक ही स्थान पर भिन्न–भिन्न समय पर विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं। हां, यदि हम अपने विभिन्न प्रकार के विश्लेषणों से सूक्ष्म स्तर के प्राकृतिक प्रदेशों का अनावरण करने में सफलता प्राप्त कर सकें तो हमें सूक्ष्म स्तर के नियोजन क्षेत्रों का अनावरण करने में भी मदद मिलेगी।

अपनी प्रगति जांचिए

1. किस सूक्ष्म क्षेत्र में कृषि विकास की क्षमता असीम होती है?

   (क) बिहार (ख) उत्तर प्रदेश

   (ग) पंजाब (घ) हरियाणा

2. जल विद्युत उत्पादन की असीम क्षमता किस सूक्ष्म क्षेत्र में होती है?

   (क) जम्मू–कश्मीर (ख) हिमाचल प्रदेश

   (ग) मध्य प्रदेश (घ) आंध्र प्रदेश

4.3 भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन

टिप्पणी

ऐसी कोई भी वस्तु जिसका उपयोग मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करता है, संसाधन कहलाती है। हो सकता है कोई भी वस्तु प्रकृति में हमेशा से विद्यमान रही हो किंतु वह तब तक संसाधन नहीं कहलाती है जब तक कि मनुष्य को उसमें कोई उपयोगिता न दिखाई दे। हमारे पर्यावरण में उपलब्ध हर वह वस्तु संसाधन कहलाती है जिसका प्रयोग हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर सकते हैं। जिसे बनाने के लिए हमारे पास प्रौद्योगिकी है और जिसका प्रयोग सांस्कृतिक रूप से मान्य है। प्रकृति का कोई भी तत्व संसाधन तब बनता है जब वह मानवीय सेवा करता है। इस संदर्भ में 1933 में जिम्मरमैन ने यह तर्क दिया था कि अपने आप में न तो पर्यावरण संसाधन है और न ही उसके अंग संसाधन हैं, जब तक कि वह मानवीय आवश्यकताओं को संतुष्ट करने में सक्षम न हो।

संसाधन शब्द का अभिप्राय साधारणतः मानव उपयोग की वस्तुओं से है। ये प्राकृतिक और सांस्कृतिक दोनों हैं। मनुष्य प्रकृति को अपने अनुरूप प्रयोग करने के लिए तकनीकों का विकास करता है। प्राकृतिक तंत्र में किसी तकनीक का जनप्रिय प्रयोग उसे एक सभ्यता में परिवर्तित करता है यथा जीने का तरीका या जीवन निर्वाह। इस प्रकार वह सांस्कृतिक साधन का स्तर प्राप्त करता है। संसाधन राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के आधार का निर्माण करते हैं। भूमि, जल, वन, वायु, खनिज व वनस्पति के बिना कृषि, उद्योगों या अन्य किसी भी आर्थिक क्रिया का विकास नहीं किया जा सकता। इन्हें भौतिक या प्राकृतिक संसाधन भी कहा जा सकता है। ये प्राकृतिक पर्यावरण का भी निर्माण करते हैं जो कि मानवीय जीवन एवं विकास हेतु आवश्यक है। इन प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग से मनुष्य अपने घरों, भवनों, परिवहन एवं संचार के साधनों व उद्योगों का निर्माण करता है। ये मानव निर्मित संसाधन प्राकृतिक संसाधनों के साथ अत्यंत उपयोगी भी हैं और मानव विकास के लिए आवश्यक भी हैं।

संसाधन की परिभाषा व प्रकार

संसाधन शब्द का अभिप्राय किसी भी ऐसी वस्तु से है जो मानव के लिए उपयोगी हो। ये प्राकृतिक व सांस्कृतिक दोनों हो सकते हैं। पर्यावरण में उपलब्ध हुए सभी पदार्थ जिनका प्रयोग मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में करता है तथा उन्हें बनाने के लिए तकनीकें उपलब्ध हैं। साथ ही आर्थिक रूप से संभाव्य हैं और सांस्कृतिक रूप से मान्य हैं, संसाधन हैं।

परिभाषा

स्मिथ एवं फिलिप्स के अनुसार – "भौतिक रूप से संसाधन वातावरण की वे प्रक्रियाएं हैं जो मानव के उपयोग में आती हैं।"

जेम्स फिसर के शब्दों में – "संसाधन वह कोई भी वस्तु है जो मानवीय आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति करती है।"

जिम्मरमैन के अनुसार – "संसाधन पर्यावरण की वे विशेषताएं हैं जो मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम मानी जाती हैं जैसे कि उन्हें मानव की आवश्यकताओं और क्षमताओं द्वारा उपयोगिता प्रदान की जाती है।"

संसाधनों के प्रकार

संसाधनों को कई आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है–

(क) उत्पत्ति के आधार पर

टिप्पणी

उत्पत्ति के आधार पर संसाधन दो प्रकार के होते हैं– जैव संसाधन व अजैव संसाधन।

जैव संसाधन : हमारे पर्यावरण में उपस्थित सभी वस्तुएं, जिनमें जीवन है, को जैव संसाधन कहा जाता है। जैव संसाधन हमें जीवमंडल से मिलते हैं।

अजैव संसाधन : हमारे वातावरण में उपस्थित वे सभी संसाधन जिनमें जीवन व्यापता नहीं है अर्थात निर्जीव हैं, अजैव संसाधन कहलाते हैं।

उदाहरण– चट्टान, पर्वत, नदी, तालाब, समुद्र, धातुएं, हवा, सभी गैसें, सूर्य का प्रकाश आदि।

(ख) सभ्यता के आधार पर

सभ्यता के आधार पर भी संसाधन दो प्रकार के होते हैं– नवीकरण संसाधन और अनवीकरण संसाधन।

नवीकरण योग्य संसाधन : ये वे संसाधन हैं जो फिर से नवीकृत किए जा सकते हैं, नवीकरण योग्य संसाधन कहे जाते हैं। जैसे– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल, वन, तथा वन्य जीव। इन संसाधनों को इनके सतत प्रभाव के कारण नवीकरण योग्य संसाधन के अंतर्गत रखा गया है।

अनवीकरणीय संसाधन : वातावरण में उपस्थित सभी वस्तुएं जिन्हें उपयोग के बाद नवीकृत नहीं किया जा सकता उनके विकास में सदियां लगती हैं, को अनवीकरणीय संसाधन कहा जाता है।

(ग) स्वामित्व के आधार पर संसाधन

स्वामित्व के आधार पर संसाधन चार प्रकार के होते हैं– व्यक्तिगत संसाधन, सामुदायिक संसाधन, राष्ट्रीय संसाधन और अंतर्राष्ट्रीय संसाधन।

व्यक्तिगत संसाधन : ऐसे संसाधन जो व्यक्तियों के निजी स्वामित्व में हों व्यक्तिगत संसाधन कहलाते हैं। जैसे– घर, व्यक्तिगत तालाब, निजी चरागाह व निजी कुएं आदि।

सामुदायिक संसाधन : ऐसे संसाधन जो गांव या शहर के समुदाय अर्थात सभी व्यक्तियों के लिए उपलब्ध हैं, सामुदायिक स्वामित्व वाले संसाधन कहलाते हैं। जैसे– सार्वजनिक पार्क, सार्वजनिक खेल का मैदान, सार्वजनिक चरागाह, श्मशान, सार्वजनिक तालाब, नदी आदि सामुदायिक स्वामित्व वाले संसाधन के कुछ उदाहरण हैं।

राष्ट्रीय संसाधन : वे सभी संसाधन जो राष्ट्र की संपदा हैं, राष्ट्रीय संसाधन कहलाते हैं। जैसे– सड़कें, नदियां, खनन क्षेत्र, तेल उत्पादन क्षेत्र, राष्ट्र की सीमा से 12 नॉटिकल मील तक समुद्री तथा महासागरीय क्षेत्र तथा उनके अंतर्गत आने वाले संसाधन।

अंतर्राष्ट्रीय संसाधन : तट रेखा से 200 समुद्री मील के बाद खुले महासागर तथा उसके अंतर्गत आने वाले संसाधन, अंतरिक्ष व अंटार्कटिका क्षेत्र के संसाधन अंतर्राष्ट्रीय संसाधनों की श्रेणी में आते हैं।

टिप्पणी

(घ) विकास के आधार पर

विकास के आधार पर संसाधन चार प्रकार के होते हैं– संभावित संसाधन, विकसित संसाधन, भंडार संसाधन और संचित कोष संसाधन।

संभावित संसाधन : ऐसे संसाधन जो विद्यमान तो हैं पर उनके उपयोग की तकनीक का सही विकास नहीं होने के कारण उनका उपयोग नहीं किया जा सकता, संभावित संसाधन कहलाते हैं।

विकसित संसाधन : ऐसे संसाधन जिनके उपयोग के लिए प्रभावी तकनीक उपलब्ध है।

भंडार संसाधन : वैसे संसाधन जो प्रचुरता में उपलब्ध हैं परंतु सही तकनीक के विकसित नहीं होने के कारण उनका प्रयोग नहीं हो पा रहा।

संचित कोष संसाधन : ऐसे संसाधन जिनके उपयोग के लिए तकनीक उपलब्ध है किंतु उनका प्रयोग अभी न करके भविष्य में उपयोग के लिए सुरक्षित रखा गया है।

मानवीय संसाधन

मानव संसाधन की अवधारणा के अनुसार जनसंख्या अर्थव्यवस्था पर दायित्व नहीं वरन परिसंपत्ति है। शिक्षा, प्रशिक्षण और चिकित्सा सेवाओं में निवेश के परिणामस्वरूप जनसंख्या मानव संसाधन के रूप में बदल जाती है।

मानव संसाधन उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त होने वाली पूंजी है। यह मानव पूंजी कौशल और उसमें निहित उत्पादन के ज्ञान का भंडार है। इस अवधारणा का मूल अर्थ राजनीतिक अर्थव्यवस्था और अर्थशास्त्र से लिया गया जहां पर पारंपरिक रूप से इसे उत्पादन के प्रमुख कारकों में से एक श्रमिक के रूप में माना जाता है। किंतु अब यह दृष्टिकोण राष्ट्रीय स्तर पर नए और योजनाबद्ध तरीकों में अनुसंधान के चलते परिवर्तित हो रहा है। अब इसे माननीय कौशल व प्रबंधन से जोड़ कर देखा जा रहा है।

आर्थिक संसाधन

आर्थिक संसाधन उन सभी वस्तुओं को कहा जा सकता है जो किसी आर्थिक, वाणिज्यिक या औद्योगिक संचालन के विकास के लिए आवश्यक हैं। उदाहरण के रूप में कृषि के विकास के लिए भूमि का एक टुकड़ा एक आर्थिक संसाधन है। उसी प्रकार कृषि में प्रयुक्त होने वाले उपकरण, खाद्य, बीज व मानवीय श्रम भी आर्थिक संसाधन हैं। आर्थिक संसाधनों की अवधारणा को सामान्यतया उत्पादन कारक के पर्याय के रूप में समझा जा सकता है। उत्पादक कारक वे संसाधन हैं जो उत्पादन प्रक्रिया से संयुक्त होते हैं तथा जो वस्तुओं या सेवाओं के विस्तार में मूल्य जोड़ते हैं स्कॉटिश अर्थशास्त्री एडम स्मिथ (1723–1790) ने उत्पादन के तीन कारकों को मान्यता दी जो आर्थिक गतिविधियों में भाग लेते हैं और जिन्हें बाजार में पुरस्कृत किया जाता है। वे तीन कारक हैं– भूमि (किराए के माध्यम से पुरस्कृत), श्रम (वेतन के माध्यम से), पूंजी (ब्याज से लाभ के रूप में)। वर्तमान आर्थिक क्षेत्र में प्रौद्योगिकी और विज्ञान को भी आर्थिक संसाधन माना जाता है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

3. निम्न में से कौन–से संसाधन राष्ट्रीय संसाधन के अंतर्गत आते हैं?

(क) सड़कें व नदियां (ख) खनन क्षेत्र

(ग) तेल उत्पादन क्षेत्र (घ) उपर्युक्त सभी

4. एडम स्मिथ ने किस सन् में उत्पादन के तीन कारकों को मान्यता दी थी?

(क) 1623–1690 (ख) 1723–1790

(ग) 1823–1890 (घ) 1923–1990

4.4 औपचारिक और कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य संबंध

क्षेत्रों का सीमांकन मुख्यतः चार आधारों पर किया जाता है– औपचारिक या संभागता, कार्यात्मकता, दृष्टिकोण व प्रशासनिक अनुकूलता। इनके आधार पर क्षेत्र संभाग क्षेत्र (Formal or Homogenous Region), कार्यात्मक क्षेत्र (Functional Region), दृष्टिकोण आधारित क्षेत्र (Perceptual Region) व प्रशासनिक क्षेत्र (Administrative Region) का निर्धारण किया जाता है।

औपचारिक क्षेत्र

संभाग या औपचारिक क्षेत्र ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनमें एक या अनेक तथ्यों जैसे शैल स्वरूप, वर्षा, मिट्टी, वनस्पति, जनसंख्या आदि की समानता होती है। ये क्षेत्र संलग्न क्षेत्रों की विशिष्टताओं से अलग होते हैं और संबंधित क्षेत्र को अनूठापन प्रदान करते हैं, जो इन क्षेत्रों की पहचान बनता है। यही अनूठापन क्षेत्र का सीमांकन आवश्यक बना देता है। एक तात्विक संभाग क्षेत्र जैसे चूना–पत्थर क्षेत्र, जलोढ़ मैदान, चाय की खेती का क्षेत्र इसके उत्तम उदाहरण हैं। किंतु जब एक से अधिक तत्वों को लेकर तात्विक क्षेत्रों की पहचान करते हैं तो सभी संबंधित तत्वों के वितरण में एक तरह की समरूपता नहीं मिलती है। उदाहरण के लिए नर्मदा घाटी एक नदी बेसिन क्षेत्र है किंतु नर्मदा के उद्गम से लेकर खंभात की खाड़ी तक विस्तृत एस्चुरी के बीच उच्चावच, वर्षा, वनस्पति, कृषि उद्योग आदि की अनेक विविधताएं मिलती हैं। उल्लेखनीय है कि क्षेत्र की समरूपता का अर्थ नीरसता से भी नहीं होता है और न ही पूर्ण समरूपता से। एक संभागी क्षेत्र की विशिष्टता में विविधता अंतर्निहित होती है। यह विविधता सीमारेखन का आधार बन सकती है तथा कार्यात्मक क्षेत्र को संकटपना की ओर ले जाती है। रोजर मिंशुल महोदय के अनुसार, "सामान्यीकरण की प्रक्रिया में समांगी क्षेत्रों के कार्यात्मक तथ्यों को एक साथ कर देना चाहिए।"

कार्यात्मक क्षेत्र

कार्यात्मक क्षेत्र (Functional Region) को विभिन्न संगठनों, लोगों, वस्तुओं व सेवाओं के प्रवाह व किसी केंद्र की उपस्थिति के आधार पर पहचाना जाता है। अतः कार्यात्मक क्षेत्र अंतर्निर्भरता को दिखाता है तथा इसमें विभिन्न प्रशासनिक इकाइयां जैसे शहर, कस्बे, गांव जो एक–दूसरे पर निर्भर हों, भी सम्मिलित हो सकते हैं या किसी नगर का पृष्ठ क्षेत्र (Hinterland) या किसी नगर व उसका उपनगरीय प्रदेश भी सम्मिलित होता है।

टिप्पणी

कार्यात्मक क्षेत्र किसी क्षेत्र विशेष की कार्यात्मक अंतर्निर्भरता पर आधारित होते हैं। क्रियाकलापों की विविधता के कारण कार्यात्मक क्षेत्र में विषमता अंतर्निहित होती है। उदाहरण के लिए कोई औद्योगिक क्षेत्र कार्यात्मक क्षेत्र का उदाहरण हो सकता है। जैसे– कानपुर क्षेत्र चमड़ा उद्योग के लिए व इंजीनियरिंग उद्योग के लिए जाना जाता है। उद्योगों के लिए जल प्राप्ति, जल निकासी, रिहायशी मकान, औद्योगिक इमारतें, यंत्र, सूत रंग मशीनें आदि के लिए इस संपूर्ण क्षेत्र में केंद्र व परिधि एक दूसरे पर निर्भर हैं।

औपचारिक व कार्यात्मक क्षेत्रों के मध्य अंतर्संबंध

नगर, क्षेत्र के कार्यात्मक क्षेत्र के उदाहरण होते हैं। नगरीय क्रियाकलापों का वैविध्य नगरीय जनसंख्या की मांग एवं नगर की आधारभूत विशिष्टता पर निर्भर करता है। नगरीय जनसंख्या की आवश्यकताओं के लिए डेयरी व्यवसाय, साग–सब्जी की कृषि, अनाज की कृषि, चरागाह आदि आवश्यक होते हैं। अतः नगरीय केंद्र अपनी इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिधि पर निर्भर करते हैं। इसी प्रकार नगर की परिधि भी प्रशासनिक, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि आवश्यकताओं के लिए नगर पर निर्भर करती है। इसलिए ये दोनों मिलकर एक कार्यात्मक क्षेत्र का निर्माण करते हैं वान थ्यूनेन ने एकाकी राज्य की ऐसी ही संकल्पना दी है। दूसरी ओर इजराइल की सहकारी समुदाय की संकल्पना है, जिसे 'मोशन ओवडिम' (Moshan Oudim) कहते हैं। यह भी कार्यात्मक क्षेत्र का उदाहरण है। मोशन ओवडिम मरुभूमि में लगभग एक हजार की जनसंख्या वाले नगर होते हैं तथा मरुस्थलीय दशाओं से समायोजन में सक्षम होते हैं। आंतरिक क्षेत्रों में सामुदायिक भवन होते हैं जो सहकारी अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक कार्यों को संचालित करते हैं। यह एक विषम नगर क्षेत्र का उदाहरण है। इसी तरह किसी नदी बेसिन के नगर आधारित क्षेत्र भी होते हैं। नदी घाटी का नगर, नदी बेसिन के वन, खनिज, कृषि क्षेत्र, पशुचारण क्षेत्र, कृषि विपणन उत्पाद एवं नगरीय क्रियाकलापों को समन्वित कर क्षेत्र का गठन किया जाता है।

इस प्रकार से संभाग क्षेत्र किसी न किसी तत्व जैसे भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि की समानता के आधार पर सीमांकित होते हैं। यह सीमांकन एक या एक से अधिक तत्वों की समानता के आधार पर हो सकता है। इस प्रकार कार्यात्मक क्षेत्र एक या एक से अधिक केंद्रों पर पारिधिक क्षेत्रों की कार्यात्मक निर्भरता के आधार पर सीमांकित होते हैं। यद्यपि जैसा कि मेयर ने यह नोट किया कि प्रशासनिक, संभाग व कार्यात्मक क्षेत्रों के प्रकार एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न नहीं हैं। इस प्रकार एक प्रशासनिक क्षेत्र आवश्यक रूप से संभाग कहा जा सकता है क्योंकि यह किसी एक प्रशासनिक इकाई के नियंत्रण में है। इसी प्रकार से एक कार्यात्मक क्षेत्र किसी एक तत्व की दृष्टि से पूर्णतया संभाग होते हुए भी किसी अन्य तत्व के लिए कार्यात्मक निर्भरता रख सकता है। प्रशासनिक क्षेत्रों के निर्धारण में प्रशासनिक सुविधा को सर्वोपरि रखा जाता है। किंतु संभागता व कार्यात्मकता भी महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए प्रशासनिक क्षेत्रों के निर्धारण में इन तीनों ही कारकों को महत्व दिया जाता है।

अतः वृहत् व मध्यम क्षेत्रों की भांति संभागता व कार्यात्मकता सूक्ष्म क्षेत्रों के सीमांकन के भी मुख्य आधार हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. क्षेत्रों का सीमांकन कितने आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है?

(क) दो (ख) चार

(ग) दस (घ) आठ

6. कौन–सा क्षेत्र चमड़ा व इंजीनियरिंग उद्योग के लिए जाना जाता है?

(क) कानपुर (ख) नागपुर

(ग) रायपुर (घ) रामपुर

4.5 जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के मध्य अंतर्संबंध

क्षेत्रीय विकास के संबंध में विकास की अवधारणा को सकारात्मक मूल्य वृद्धि की अवधारणा के रूप में समझा जा सकता है जिसका मुख्य उद्देश्य लोगों के जीवन स्तर में सुधार और मनुष्यों के मानव कल्याण की दशाओं में सुधार से है। आर्थिक विकास मुख्यतः राष्ट्रीय आय व लागतों और उत्पादों की वृद्धि से प्रतिबिंबित होता है इसलिए प्रति व्यक्ति आय आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। विकास न तो वर्ग तटस्थ है न ही सभी क्षेत्रों में समान रूप से उपलब्ध है। विकास की प्रक्रिया समाज के कुछ वर्गों को अन्य वर्गों से अधिक लाभान्वित करती है। यह कुछ क्षेत्रों को अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा विकास का कुछ स्तर प्राप्त करने में सहायक होती है। यह सामाजिक व प्रादेशिक असमानता को बढ़ाती है। इस तरह की दशाओं का संचालन विकास के संकेतों के व्यवहार पर निर्भर करता है।

विकास के मापदंड

प्राकृतिक पर्यावरण, तकनीक और संस्थाएं ये आर्थिक विकास के तीन मुख्य मापदंड हैं। प्राकृतिक पर्यावरण आर्थिक विकास की दिशा को निर्धारित करता है और इसके साथ ही यह तकनीक के स्तर के आधार पर विकास के विस्तार की सीमा को भी निर्धारित करता है। उदाहरण के लिए, नदी घाटियों में मुख्य क्रिया कृषि है, वन क्षेत्रों में लकड़ी की कटाई और तटीय क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन मुख्य आर्थिक क्रियाओं के रूप में विकसित हुए हैं।

इन सभी आर्थिक क्रियाओं से होने वाले उत्पादन का स्तर उस क्षेत्र में उपलब्ध तकनीकी विकास पर निर्भर करता है। तकनीक की अपनी विशेषताएं हैं। प्राथमिक तकनीक आकार की दृष्टि से तटस्थ है और किसी भी आय वर्ग के व्यक्तियों के लिए उपलब्ध है। मध्यम स्तरीय तकनीक आकार आधारित है तथा उन मनुष्यों को उपलबध है जिनके पास निवेश के योग्य पूंजी है। बड़े पैमाने की तकनीक इतनी अधिक लागत की है कि इसे सामाजिक नियंत्रण में रखना पड़ता है और ऐसी तकनीक जो सामाजिक नियंत्रण में हो वह कितनी भी मूल्यवान हो सभी को उपलब्ध होती है, अतः यह मध्यम आकार की तकनीक है जो सामाजिक वर्गों व क्षेत्रों के मध्य असमानता उत्पन्न करती

टिप्पणी

है। इसी प्रकार विकास की गति को तीव्र करने के लिए मनुष्य ने विभिन्न संस्थान बनाए हैं किंतु समय के साथ जब वह इसमें असफल हो जाता है तो उनके स्वरूप में परिवर्तन कर दिया जाता है या बदल दिया जाता है। इस प्रकार आर्थिक विकास, प्राकृतिक पर्यावरण, तकनीक तथा प्रौद्योगिकी व किसी प्रदेश में निर्मित संस्थानों के सामंजस्यपूर्ण कार्यों पर निर्भर करता है।

जनसंख्या व पर्यावरण

हमारे देश में सभी को संतुलित व पौष्टिक आहार प्रदान करने के लिए योजनाएं बनाई गई हैं। यह हमारे मेहनती कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों व प्रशासकों के लिए मुख्य चुनौती का विषय है। हमारे पास शायद ही कोई ऐसा अतिरिक्त क्षेत्र बचा हो जिसे कृषि के अंतर्गत प्रयोग किया जा सकता हो। इस समय प्रति इकाई खेतों से निरंतर अधिक उत्पादन ही समय की मांग है। हमारे यहां बड़ी मात्रा में कृषि भूमि को आवासीय व औद्योगिक प्रयोगों में प्रयुक्त किया जा रहा है जिससे खाद्यान्न व अन्य कृषि उत्पादों को बढ़ाने के लिए उच्च उत्पादकता वाले बीजों को विकसित करने की मांग बढ़ रही है। इन्हें आनुवंशिक रूप से विकसित किया जाता है जिसमें समय लगता है। हमारी जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है व हमें अनाजों, दलहनों, तिलों, सब्जियों, फलों, गन्ने, रबड़, कपास को बड़ी मात्रा में उगाने की आवश्यकता है। हमें बड़े पैमाने पर मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, मीट, दूध व अन्य पशु उत्पादों को बढ़ाने की आवश्यकता है। हमें खेतों को बड़े पैमानों पर सींचने की आवश्यकता है जबकि हमारे सतही व भूमिगत जल अपनी अंतिम सीमा पर पहुंच चुके हैं। इसके लिए हमें और अधिक बांध, कुएं व ट्यूबवैल बनाने होंगे। हमें नई तकनीकें, कृषि प्रक्रियाएं व मशीनें विकसित करनी होंगी। अच्छे कीटनाशक, बड़ी संग्रह प्रणालियां व ठंडा करने की तकनीकों के विकास की आवश्यकता है। हमारी प्रति व्यक्ति कृषि भूमि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के बीच तेजी से कम हो रही है। चरागाहों व वन्य भूमियों पर कब्जे ने पहले ही न केवल अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाया है, वरन पारिस्थितिकीय संतुलन को जो पहले से ही नाजुक है, हमारा तीव्र नगरीकरण व औद्योगिकीकरण पर्यावरण के प्रत्येक तत्व वायु, जल व मृदा को प्रदूषित कर रहा है। हमारे भूमि व जल संसाधन अब असीमित नहीं कहे जा सकते हैं। हम उनके अधिकतम उपयोग की सीमा तक पहुंच चुके हैं। हम भूमि के ह्रासमान प्रतिफल की ओर हैं, खनिज संसाधनों का उत्पादन वैकल्पिक संसाधनों की खोज की ओर संकेत कर रहा है। ज्ञात जीवाश्म ईंधनों विशेष रूप से गैस व तेल के भंडार समाप्त प्रायः हैं और इस कारण हमें पुनः कोयले का प्रयोग बढ़ाना पड़ रहा है।

हमारा बढ़ता उपभोग व जीवन शैली हमें ऐसे समय की ओर ले जा रही है जहां हम अपने पारिस्थितिकीय संतुलन को पूर्णतया खो देंगे। अतः वर्तमान की सबसे बड़ी आवश्यकता इस मूल्यवान पर्यावरण व पृथ्वी को सभी संभव उपायों द्वारा संरक्षित करने की है।

अधिक उत्पादन नहीं वरन् भूमि की प्रत्येक इकाई से लगातार बढ़ती दर से फसल का उत्पादन आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। हमारे पास कोई भी अतिरिक्त उपजाऊ भूमि नहीं बची है। वास्तव में, आज हमारा समाज औद्योगिकीकरण की ओर

टिप्पणी

अग्रसर है और अधिकांशतः उपजाऊ भूमि को आवासीय व अन्य प्रकार के उपयोगों में प्रयोग किया जा रहा है। अतः हमें जहां तक हो सके अधिक उपज वाले बीजों के उत्पादन पर अधिक से अधिक ध्यान देने की जरूरत है। हमें अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए सभी प्रकार की खाद्य फसलों व अन्य फसलों के प्रति इकाई उत्पादन को बढ़ाने के साथ ही मुर्गी, अंडे, दूध, मछली के उपभोग व उत्पादन को बढ़ाने की आवश्यकता है। परिणामस्वरूप बढ़ती हुई उपज के लिए अधिक सिंचाई व पानी की अधिक आवश्यकता होगी। नयी मशीनों व संयंत्रों को भी बढ़ाना होगा। अच्छे कीट नियंत्रकों, खादों, बीजों, कोल्ड स्टोरेज, ऋण की व्यवस्था व पूंजी की व्यवस्था भी करनी होगी। हमारा खेतों की जुताई की दृष्टि से प्रति व्यक्ति संलग्न एक दूसरी पीढ़ी तक जाते–जाते बहुत कम होता गया है। बहुत अधिक लोग आज भूमिहीन हैं। वनों व चरागाहों पर हमारी क्रियाओं के द्वारा उत्पादन का स्तर विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या के पास उपलब्ध तकनीक पर निर्भर करता है। तकनीक की अपनी विशेषताएं हैं। प्रारंभिक तकनीक आकार निरपेक्ष होती है और सभी के लिए उपलब्ध होती है चाहे आय का स्तर कुछ भी हो। अंतरमध्य तकनीक आकार पर निर्भर होती है और केवल उन्हीं को उपलब्ध होती है जिनके पास आवश्यक रूप से जरूरत से कुछ अधिक हो। जटिल और वृहत् पैमाने की तकनीक अत्यधिक महंगी होती है जिस कारण इसे सामाजिक नियंत्रण में लाया जाता है। अन्ततः यह न्यूनतम मूल्य पर सभी के लिए उपलब्ध होती है। इस प्रकार अंतरमध्य स्तर की तकनीक ने ही मुख्यतः विभिन्न संस्थाओं का निर्माण किया व समय–समय पर इनमें परिवर्तन भी किये। इस प्रकार आर्थिक विकास प्राकृतिक वातावरण के साथ सौहार्द संबंध, तकनीक और उस क्षेत्र में स्थापित संस्थाओं पर निर्भर करता है।

अपनी प्रगति जांचिए

7. प्रति व्यक्ति आय किस विकास का एक महत्वपूर्ण संकेतक है?

   (क) सामाजिक विकास (ख) राजनीतिक विकास

   (ग) आर्थिक विकास (घ) क्षेत्रीय विकास

8. आर्थिक विकास के मुख्य मापदंड निम्न में से कौन–से हैं?

   (क) प्राकृतिक पर्यावरण (ख) तकनीक

   (ग) संस्थाएं (घ) उपर्युक्त सभी

4.6 नीतियां एवं कार्यक्रम

संपूर्ण विश्व में इस समय ऊपर से नीचे (Top to Down) के स्थान पर नीचे से ऊपर (Bottom up) की ओर नियोजन पर बल दिया जा रहा है। नीचे से ऊपर की ओर (Bottom up) नियोजन लघु स्तर के नियोजन से संबंधित है। केंद्रीय नियोजन के विपरीत सूक्ष्म स्तरीय नियोजन लघु स्तर के संसाधनों का प्रयोग करते हुए स्थानीय स्तर के नियोजन पर बल देता है।

टिप्पणी

सूक्ष्म स्तरीय नियोजन का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य नियोजन की इकाई का निर्धारण है। स्थानीय स्तर के नियोजन के लिए भारत में एस्केप (ESCAP) ने जिले को एक उपयुक्त स्थानीय इकाई माना किंतु भारत में कुछ जिले अत्यंत बड़े व कुछ अत्यंत छोटे हैं। अतः बड़े जिलों के लिए उप जिला स्तर पर प्रखंडों (Blocks) को चुना गया। किंतु प्रखंड (Block) स्तरीय नियोजन यहां संतोषजनक नहीं रहा। उसका कारण था यहां नीति, नियोजन व तकनीकी ज्ञान का अभाव था। विकसित देशों में बाजार की शक्तियां स्थानीय स्तर पर भी पर्याप्त संस्थागत ढांचा बना लेती हैं किंतु विकासशील देशों में संस्थागत ढांचा अत्यंत कमजोर होने के कारण यह स्थानीय नियोजन को भी कमजोर कर देता है।

भारत में स्थानीय या सूक्ष्म स्तर के नियोजन के लिए उपयुक्त इकाई के विवाद को सुलझाने के लिए 73वें व 74वें संविधान संशोधन के द्वारा बहुस्तरीय नियोजन स्वरूप में तीन स्तरीय नियोजन की व्यवस्था को अपनाया गया। 74वें संशोधन के अंतर्गत राज्य जिला पंचायत/प्रादेशिक व नगर नियोजन कानून (State Zilla Panchayat/ Regional and Town Planning Acts) के अंतर्गत जिला नियोजन समिति (District Planning Committee) और महानगरीय नियोजन समिति (Metropolitan Planning Committee) स्थापित की गयी व राज्यों में एक तीन स्तरीय नियोजन संरचना को स्थापित किया गया जिसके तीन स्तर क्रमशः पंचायत/नगरपालिका, जिला व महानगर स्तर व राज्य स्तर थे। इस व्यवस्था के अंतर्गत पंचायत नगर पालिका द्वारा बनाई हुई योजनाओं को समायोजित करते हुए एक ड्राफ्ट जिला विकास योजना बनाई जानी थी।

इन स्तरों में कार्यात्मक भिन्नता का सही सीमांकन भी आवश्यक है। भारतीय संविधान का 11वां अनुच्छेद स्थानीय निकायों के कार्यों को सूचीबद्ध करता है। इसी प्रकार संविधान (74वें संशोधन) अधिनियम के 12वें अनुच्छेद के अनुसार नगरपालिकाओं के 18 कार्य निर्धारित किए गए हैं जिनमें 6 अन्य कार्यों के साथ–साथ (1) नगरीय नियोजन कस्बों के नियोजन के साथ (2) भूमि उपयोग व इमारतों की संरचना के नियम तथा सामाजिक और आर्थिक विकास संबंधित नियोजन भी सम्मिलित हैं। इस संदर्भ में राज्यों को स्थानीय निकायों के कार्यों के सटीक सीमांकन की आवश्यकता थी जिससे राज्य स्तरीय वित्त आयोग निकायों को उनके कार्यों के अनुसार उचित वित्त प्रदान कर सकें। 74वें संविधान संशोधन अधिनियम ने राज्यों की वित्तीय संरचना को भंग करते हुए स्थानीय निकायों की वित्तीय संरचना को दृढ़ करने पर जोर दिया। 73वें व 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से ऊपर से नीचे के नियोजन को बदल कर नीचे से ऊपर की ओर नियोजन की विचारधारा व व्यवस्था को स्थापित करने का प्रयास किया गया।

अपनी प्रगति जांचिए

9. भारतीय संविधान का कौन–सा अनुच्छेद स्थानीय निकाय के कार्यों को सूचीबद्ध करता है?

(क) दसवां अनुच्छेद (ख) ग्यारहवां अनुच्छेद

(ग) बारहवां अनुच्छेद (घ) चौदहवां अनुच्छेद

10. किस संविधान संशोधन अधिनियम ने स्थानीय निकायों की वित्तीय संरचना को दृढ़ करने पर जोर दिया?

(क) 70वें संविधान संशोधन ने (ख) 72वें संविधान संशोधन ने

(ग) 74वें संविधान संशोधन ने (घ) 76वें संविधान संशोधन ने

टिप्पणी

4.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (ख)
3. (घ)
4. (ख)
5. (ख)
6. (क)
7. (ग)
8. (घ)
9. (ख)
10. (ग)

4.8 सारांश

सूक्ष्म क्षेत्र आकार में सबसे छोटे व नियोजन की सबसे लघु इकाई हैं। इसके निर्धारण का मुख्य आधार एक सामान्य सामुदायिक समस्या या एक सामान्य विकास का लक्ष्य हो जिसके लिए जमीनी स्तर के नियोजन की आवश्यकता है। भौतिक, मानवीय एवं आर्थिक संसाधन नियोजन के अन्य स्तरों के समान ही सबसे निम्न स्तर या सूक्ष्म क्षेत्रों के विकास के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। सूक्ष्म क्षेत्र मध्यम व वृहत् क्षेत्रों के समान ही संभागता व कार्यात्मकता के आधार पर निर्धारित होते हैं। प्रशासनिक सुविधा के लिए इन दोनों ही तथ्यों को क्षेत्रों के निर्धारण में महत्व दिया जाता है।

सूक्ष्म क्षेत्र आकार में सबसे छोटे होते हैं और यह नियोजन का सबसे निम्न स्तर है। इस तरह की इकाई में या तो जिले से नीचे की इकाई जैसे कुछ तहसीलें या एक विकास ब्लॉक (Development Block) का संपूर्ण भाग या ग्रामीण पृष्ठभूमि का एक बड़ा भाग सम्मिलित हो सकता है।

संसाधन राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के आधार का निर्माण करते हैं। भूमि, जल, वन, वायु, खनिज व वनस्पति के बिना कृषि, उद्योगों या अन्य किसी भी आर्थिक क्रिया का विकास नहीं किया जा सकता। इन्हें भौतिक या प्राकृतिक संसाधन भी कहा जा सकता है।

मानव संसाधन उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त होने वाली पूंजी है। यह मानव पूंजी कौशल और उसमें निहित उत्पादन के ज्ञान का भंडार है। इस अवधारणा का मूल अर्थ

टिप्पणी

राजनीतिक अर्थव्यवस्था और अर्थशास्त्र से लिया गया जहां पर पारंपरिक रूप से इसे उत्पादन के विभिन्न कारकों में से एक श्रमिक के रूप में माना जाता है। किंतु अब यह दृष्टिकोण राष्ट्रीय स्तर पर नए और योजनाबद्ध तरीकों में अनुसंधान के चलते परिवर्तित हो रहा है।

संभाग या औपचारिक क्षेत्र ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनमें एक या अनेक तथ्यों जैसे शैल स्वरूप, वर्षा, मिट्टी, वनस्पति, जनसंख्या आदि की समानता होती है। ये क्षेत्र संलग्न क्षेत्रों की विशिष्टताओं से अलग होते हैं और संबंधित क्षेत्र को अनूठापन प्रदान करते हैं, जो इन क्षेत्रों की पहचान बनता है।

कार्यात्मक क्षेत्र किसी क्षेत्र विशेष की कार्यात्मक अंतरनिर्भरता पर आधारित होते हैं। क्रियाकलापों की विविधता के कारण कार्यात्मक क्षेत्रों में विषमता अंतर्निहित होती है।

प्राकृतिक पर्यावरण, तकनीक और संस्थाएं ये आर्थिक विकास के तीन मुख्य मापदंड हैं। प्राकृतिक पर्यावरण आर्थिक विकास की दिशा को निर्धारित करता है और इसके साथ ही तकनीक के स्तर के आधार पर विकास के विस्तार की सीमा को भी निर्धारित करता है।

4.9 मुख्य शब्दावली

- **संसाधन** : संसाधन एक ऐसा स्रोत है जिसका प्रयोग मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए करता है।
- **जैव संसाधन** : पर्यावरण में उपस्थित वे सभी वस्तुएं जिनमें जीवन है, जैव संसाधन कहलाती हैं।
- **आर्थिक संसाधन** : आर्थिक संसाधन उन सभी क्रियाओं को कहा जाता है जो किसी आर्थिक, वाणिज्यिक या औद्योगिक संचालन के विकास के लिए आवश्यक हैं।
- **मानव संसाधन** : उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त होने वाली पूंजी मानव संसाधन कहलाती है।
- **क्षेत्र** : क्षेत्र किसी भौगोलिक इकाई का एक ऐसा भाग है जिसे अनुभव, समझ व विशिष्टताओं के आधार पर पृथक किया जाता है।

4.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सूक्ष्म क्षेत्रों से आप क्या समझते हैं?
2. संसाधन किसे कहते हैं?
3. नवीकरणीय संसाधन को परिभाषित कीजिए।
4. राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय संसाधनों में क्या अंतर है?

5. विकास के आधार पर संसाधन को कितने वर्गों में विभाजित किया गया है? संक्षेप में समझाइए।
6. औपचारिक क्षेत्र से क्या तात्पर्य है?

टिप्पणी

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. सूक्ष्म क्षेत्रों को परिभाषित करते हुए उनकी भौतिक, सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि को समझाइए।
2. सूक्ष्म क्षेत्रों के संदर्भ में (औपचारिक) संभाग व कार्यात्मक संबंधों की व्याख्या कीजिए।
3. सूक्ष्म स्तर के नियोजन के लिए ब्लॉक एक उपयुक्त इकाई है, टिप्पणी कीजिए।
4. भारत के लिए बहुस्तरीय नियोजन आवश्यक है, समझाइए।
5. सूक्ष्म स्तरीय नियोजन संतुलित विकास को सुनिश्चित करता है इस कथन का विश्लेषण कीजिए।
6. दामोदर घाटी परियोजना के उद्देश्यों व परिणामों की समीक्षा कीजिए।
7. गंगा के मैदान को सूक्ष्म नियोजन क्षेत्र के रूप में परिकल्पित करते हुए इसके विकास की विभिन्न योजनाओं की समीक्षा कीजिए।

4.11 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिन्हा बी. एन., 'इंडस्ट्रियल जियोग्राफी ऑफ इंडिया', दि वर्ल्ड प्रेस प्रा. लि. कोलकाता।
2. गिल के. एस., 'इवोल्यूशन ऑफ इंडियन इकोनामी', एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।
3. सुंदरम के.वी. 1997, 'इसेंट्रलाइज्ड मल्टीलेवल प्लानिंग : प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिसेसः एशियन और अफ्रीकन एक्सपीरियंस', कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली।
4. माथुर कुलदीप, 2013, 'पंचायती राज', ऑक्सफोर्ड इंडिया।
5. मिश्रा गिरीश के., 1987 ब्लॉक लेवल प्लैनिंगः विद फोकस ऑन इंप्लॉयमेंट जनरेशन साउथ एरिया बुक।
6. भट्ट एल. एस., 2003, 'माइक्रोलेवल प्लानिंग', राजेश पब्लिकेशन।
7. सिंह कतार, 2009, 'रूरल डेवलपमेंट : प्रिंसिपल, पोलसीज एंड मैनेजमेंट', सेज पब्लिकेशंस इंडिया प्रा. लि.।

इकाई 5 मध्यम एवं सूक्ष्म क्षेत्रों का विस्तृत केस अध्ययन

टिप्पणी

संरचना

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 प्राकृतिक/भौतिक क्षेत्र
  5.2.1 सुंदरवन डेल्टा
  5.2.2 भारतीय गंगा योजना
  5.2.3 तटीय भारत
5.3 नगरीय/महानगरीय क्षेत्र
  5.3.1 दिल्ली महानगरीय क्षेत्र
  5.3.2 कोलकाता महानगरीय क्षेत्र
  5.3.3 मुंबई महानगरीय क्षेत्र
5.4 सांस्कृतिक क्षेत्र : बुंदेलखंड
5.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.6 सारांश
5.7 मुख्य शब्दावली
5.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.9 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

क्षेत्रीयकरण के उद्देश्य से भौतिक व प्राकृतिक तथ्यों को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। धरातल के वे भूखंड जिनमें संपूर्ण प्राकृतिक दशाएं (भू–रचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, पशु जीवन और मानव दशाएं) साधारणतः समान हों उन्हें प्राकृतिक क्षेत्र कहा जाता है। सुंदरवन डेल्टा, भारतीय गंगा के मैदान व तटीय भारत के केस अध्ययन प्राकृतिक क्षेत्रों की अवधारणा को समझने के लिए किए गए हैं। नगर नियोजन प्रादेशिक नियोजन का एक महत्वपूर्ण अंग है। संपूर्ण विश्व में नगरीकरण बढ़ रहा है। विकसित देशों में अनियोजित नगरीकरण के कारण पिछले दशकों में कई समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। अतः इस संदर्भ में दिल्ली महानगरीय क्षेत्र, कोलकाता महानगरीय क्षेत्र व मुंबई महानगरीय क्षेत्र का अध्ययन किया गया है। ये प्रशासनिक क्षेत्रों के उपयुक्त उदाहरण हैं। भौतिक कारकों के अतिरिक्त किसी क्षेत्र की संस्कृति भी क्षेत्रों की सीमा निर्धारित करती है।

इस इकाई में मध्यम एवं सूक्ष्म क्षेत्रों का केस अध्ययन विस्तारपूर्वक निरूपित किया गया है। साथ ही सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा को समझते हुए बुंदेलखंड क्षेत्र का एक सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में विस्तार से अध्ययन किया गया है।

टिप्पणी

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- भौतिक क्षेत्रों की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- सुंदरवन डेल्टा, भारतीय गंगा के मैदान व तटीय भारत की प्राकृतिक दशाओं का अध्ययन व क्षेत्र के रूप में उनकी कार्यात्मकता का अध्ययन कर पाएंगे;
- नगरीय व महानगरीय क्षेत्रों की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- भारत के तीन महानगरीय क्षेत्रों दिल्ली, कोलकाता और मुंबई का अध्ययन कर पाएंगे;
- सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- बुंदेलखंड की सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में विवेचना कर पाएंगे।

5.2 प्राकृतिक/भौतिक क्षेत्र

धरातल पर वे भूखंड जिनमें समस्त प्राकृतिक दशाएं जैसे– भू–रचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, पशु जीवन, मानव का जीवन और क्रियाएं साधारणतः समान हों, प्राकृतिक क्षेत्र कहलाते हैं। इन समस्त दशाओं का मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है। किसी देश के प्राकृतिक क्षेत्र उसके राजनीतिक क्षेत्र से सामान्यतया भिन्न होते हैं। प्राकृतिक क्षेत्र प्रकृति द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। अतः इनमें प्रायः लंबे समय तक परिवर्तन नहीं होते। एक ही राजनीतिक इकाई के अंतर्गत अनेक प्राकृतिक क्षेत्र पाए जा सकते हैं और एक प्राकृतिक क्षेत्र में अनेक राजनीतिक इकाइयां निहित हो सकती हैं।

प्राकृतिक क्षेत्रों के बारे में दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये क्षेत्र अनायास ही या आकस्मिक रूप से एक दूसरे से पृथक नहीं होते इसीलिए दो विभिन्न क्षेत्रों के बीच में कोई निश्चित सीमा रेखा नहीं खींची जा सकती। जहां एक क्षेत्र की सीमा समाप्त होती है, वहां उसकी प्रचलित जलवायु दशाएं समाप्त नहीं हो जाती है और जहां दूसरा क्षेत्र आरंभ होता है, वहीं उसकी जलवायु दशाएं सहसा अपना प्रभाव नहीं दिखलाने लगती हैं वरन् जलवायु की ये दशाएं एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में धीरे–धीरे समाप्त होती हैं।

एक क्षेत्र में जो दूसरे क्षेत्र से अंतर बढ़ता जाता है वह अत्यंत धीमा होता है। यह अंतर दो क्षेत्रों के बीच की दूरी के अनुसार बढ़ता है। अंततः यह इतना अधिक हो जाता है कि दो क्षेत्रों के बीच की भिन्नता स्पष्टतः दिखाई देने लगती है।

तीसरा तथ्य यह है कि स्थानीय विषमताओं के अनुसार एक प्राकृतिक क्षेत्र को अनेक उपविभागों या क्षेत्रों में बांटा जा सकता है। जैसे कि भारत के विभिन्न विभागों को अनेक उप क्षेत्रों में बांटा गया है। किसी देश को प्राकृतिक क्षेत्र में बांट देने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि उस देश की संपूर्ण भौगोलिक अवस्थाओं का गहरा और वैज्ञानिक अध्ययन करना संभव हो जाता है, क्योंकि भौगोलिक परिस्थितियां देश के विभिन्न भागों के निवासियों के उद्यम, रहन–सहन और आचार–विचार पर स्पष्ट प्रभाव

डालती हैं। अतः देश की विस्तृत जानकारी के लिए प्राकृतिक क्षेत्रों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

5.2.1 सुंदरवन डेल्टा

टिप्पणी

सुंदरवन या सुंदरबन भारत तथा बांग्लादेश में स्थित विश्व का सबसे बड़ा नदी डेल्टा है। यह बहुत–सी प्रसिद्ध वनस्पतियों और प्रसिद्ध बंगाल टाइगर का निवास स्थान है। जब गंगा पश्चिम बंगाल में बहती है तो यह दो भागों में बंट जाती है– भागीरथी एवं हुगली (एक वितरिका)। दक्षिण की ओर डेल्टाई मैदान से बहती हुई यह बंगाल की खाड़ी में गिर जाती है। मुख्य धारा दक्षिण की ओर बांग्लादेश में प्रवेश करती है तथा ब्रह्मपुत्र भी आकर इसमें मिलकर डेल्टा का निर्माण करती है। इन नदियों द्वारा निर्मित डेल्टा को सुंदरवन का डेल्टा कहा जाता है। सुंदरवन डेल्टा का यह नाम इसमें पाए जाने वाले सुंदरी के पेड़ों के कारण पड़ा है जो कि दलदली भूमि में अधिक उगते हैं। यह विश्व का सबसे बड़ा तथा सर्वाधिक तेजी से बढ़ता हुआ डेल्टा है।

भौगोलिक विशेषताएं

सुंदरवन डेल्टा पद्मा (गंगा–ब्रह्मपुत्र) नदी के डेल्टा के निम्न भाग के रूप में भारत के पश्चिम बंगाल राज्य के दक्षिण–पश्चिम, उत्तर–पूर्वी भारत और दक्षिणी बांग्लादेश में फैला हुआ है। यह वनों व लवणीय जल के दलदल का विशाल भाग है। यह बंगाल की खाड़ी के साथ पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ लगभग 160 मील (260 किलोमीटर) लंबा भाग है। इस भाग में ज्वारनदमुखों का संजाल, ज्वारीय नदियां, विभिन्न चैनलों से प्रतिच्छेदित हुई खाड़ियां व समतल घने वनों से ढके दलदलीय द्वीप मिलते हैं। जल व भूमि के भाग को मिलाकर संपूर्ण सुंदरवन लगभग 3,860 वर्ग मील (10,000 वर्ग किलोमीटर) में फैला है। इसका 60 प्रतिशत भाग बांग्लादेश में है।

एक वन भूमि निम्नस्थ मैंग्रोव दलदल में बदलते हुए तट तक चली गई है, इसमें बालू के टीले और पंक मैदान भी दिखाई देते हैं। सुंदरवन क्षेत्र की संपूर्ण सतह का दो बटा पांच भाग $\left(\frac{2}{5}\right)$ मैंग्रोव वन से ढका है और इसके लगभग आधे भाग को जल ने ढका हुआ है।

यह क्षेत्र सागरीय एवं वायु की अपरदन गतिविधियों से निरंतर परिवर्तित होता रहा है और इनके लाए हुए गाद से यहां के असंख्य ज्वारनदमुख सदैव भरते रहते हैं। मानवीय गतिविधियों ने भी इस भूभाग में असंख्य परिवर्तन किए हैं, जैसे वनह्रास, जिसके कारण यहां अपरदन में वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त यहां एक महत्वपूर्ण मात्रा में नदियों के जल को ऊपर के क्षेत्रों की सिंचाई हेतु मोड़ा गया है जिसके कारण मैंग्रोव दलदलों के आंतरिक भागों तक लवणता पहुंच गई है विशेष रूप से इस क्षेत्र के भारतीय भाग में।

सुंदरवन के चार संरक्षित क्षेत्र सुंदरवन राष्ट्रीय उद्यान (Sundarbans National Park), सुंदरवन पश्चिम, सुंदरवन दक्षिण और सुंदरवन पूर्वी अभयारण्य संयुक्त राष्ट्र के विश्व विरासत स्थलों (UNESCO Word Heritage Sites) की सूची में सम्मिलित किए गए हैं।

टिप्पणी

संरक्षण के इन प्रयासों के बाद भी भारतीय सुंदरवन अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (IUCN) के आंकलन के अनुसार वर्ष 2020 में क्षेत्रीय लाल सूचियों की रूपरेखा के अंतर्गत विलुप्त होने के जोखिम में था।

सुंदरवन मैंग्रोव वन लगभग 10,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है जिसमें से 6,017 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र बांग्लादेश की खुलना डिविजन में और लगभग 4,260 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र भारत के पश्चिम बंगाल राज्य के दक्षिण 24 परगना एवं उत्तर 24 परगना जिलों में फैला है। वृक्षों की सबसे अधिक पाई जाने वाली प्रजाति सुंदरी (Heritera Fanes) और गेवा (Excoecaria Agallacha) हैं। इन वनों में वन्य जीवों की 453 प्रजातियां मिलती हैं जिनमें 290 पक्षी, 120 मछलियां, 42 स्तनपायी, 35 सरीसृप और 8 उभयचर प्रजातियां हैं। यद्यपि यहां पर वन्य प्राणियों के मारने व पकड़ने पर केवल कुछ मछलियों को छोड़कर पूर्ण प्रतिबंध हैं। किंतु यहां जैव विविधता के ह्रास और प्रजातियों के विलुप्त होने की प्रवृत्ति लगातार दिखाई देती रही है।

दोनों देशों की सरकारों की संरक्षण की प्रतिबद्धता के बावजूद सुंदरवन निरंतर मानवीय एवं प्राकृतिक आपदाओं की आशंका का सामना करता रहता है। वर्ष 2007 में चक्रवात सिदर के कारण सुंदरवन का 40 प्रतिशत भाग क्षतिग्रस्त हो गया था। यहां के वन भी जलवायु परिवर्तन के कारण बढे हुए सागरीय जल के स्तर के कारण लवणता की भूमि और दलदल में बढ़ती हुई मात्रा की समस्या का सामना कर रहे हैं। सुंदरवन क्षेत्र विश्व के सबसे सघन जनसंख्या क्षेत्रों में से एक है। इस कारण आधे से अधिक मैंग्रोव वन मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काट दिए गए हैं।

5.2.2 भारतीय गंगा योजना

यह मैदान प्रायद्वीपीय भारत को बाह्य प्रायद्वीपीय भारत (Extra-Peninsular Region) से अलग करता है। यह एक नवीनतम भूखंड है जो हिमालय की उत्पत्ति के बाद बना है। यह सिंध–गंगा–ब्रह्मपुत्र मैदान का प्रमुख भाग है जो कि भौगोलिक दृष्टि से एक खंड है किंतु इसे भारत–पाकिस्तान के राजनीतिक विभाजन ने अलग कर दिया है। पश्चिम में सिंध नदी के मैदान का अधिकांश भाग और पूर्व में गंगा–ब्रह्मपुत्र डेल्टा का अधिकांश भाग हमारे देश से अलग हो गया है। यही कारण है कि शेष मैदान को भारत के विशाल मैदान के नाम से संबोधित किया जाता है। इसमें सतलज व व्यास का मैदान, गंगा तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा निर्मित मैदान तथा ब्रह्मपुत्र की घाटी सम्मिलित हैं। अनेक विद्वानों ने इस मैदान को भारत के विशाल मैदान से संबोधित किया है।

यह विशाल मैदान विश्व का सबसे अधिक उपजाऊ और घनी जनसंख्या वाला भूभाग है। इसका क्षेत्रफल 7 लाख वर्ग किलोमीटर है। इस मैदान की लंबाई पूर्व से पश्चिम दिशा में 2400 किलोमीटर है किंतु चौड़ाई में भिन्नता पाई जाती है जो क्रमशः पूर्व से पश्चिम की ओर कम होती जाती है। पश्चिम में इसकी चौड़ाई 500 किलोमीटर है तथा पूर्व में इसकी चौड़ाई घटकर 145 किलोमीटर रह जाती है। इस मैदान का ढाल बड़ा समतल है। इसका अधिकांश भाग समुद्र तल से 150 मीटर से अधिक ऊंचा नहीं है। राजनीतिक दृष्टि से इस मैदान का विस्तार उत्तरी राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, उत्तर क्षेत्र, उत्तरी बिहार, बंगाल तथा असम राज्यों पर है। अपनी पश्चिमी सीमा पर यह राजस्थान की मरुभूमि में घुल मिल गए हैं।

इस विशाल मैदान का निर्माण नदियों द्वारा बहाकर लाए निक्षेपों से हुआ है। ये निक्षेप काफी गहरे हैं। इनकी मोटाई के बारे में कोई निश्चित मत नहीं है। ऐसा माना जाता है कि इस मैदान की उत्पत्ति एक विशाल गर्त के कांप के निक्षेपों से ढकने के कारण हुई। इस गर्त की उत्पत्ति के बारे में विद्वानों के विभिन्न मतों को दो वर्गों में रखा जा सकता है।

प्रथम मत – इस मत के अनुसार यह विशाल गर्त एक भूसंनति (Geosyncline) के रूप में था। इनके अनुसार यह गहरी खाई टेथिस सागर के अवशिष्ट जल के रूप में थी। इस खाई के पश्चिम की ओर के टेथिस सागर के अवशेष को सिंध की खाड़ी (Gulf of Sind) और पूर्व की ओर के अवशेष को पूर्वी खाड़ी (Eastern Gulf) का नाम दिया गया है। इन दोनों को जो उच्च क्षेत्र अलग करता था वह दिल्ली व कालका के बीच पाया जाता है। इन खाड़ियों को वर्तमान अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी का वह उत्तरी भाग कहा जा सकता है जो अब नष्ट हो चुका है। इस मत के प्रमुख समर्थक प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री एडवर्ड स्वेस रहे हैं।

एडवर्ड स्वेस के अनुसार यह विशाल गर्त (Fordeep) हिमालय के उत्थान के साथ उसके आगे की ओर बन गया था जिसका दक्षिण की ओर विस्तार इसलिए नहीं हो सका क्योंकि उसके सामने स्थिर व कठोर प्रायद्वीप था। इस आधार पर यह गर्त अभिनति (Synclinal) प्रकृति का है। इसे संघात भूद्रोणी (Synclinorium) भी कहा जाता है।

द्वितीय मत के विद्वान यह मानते हैं कि यह मैदान एक दरार घाटी (Fift Valley) के रूप में है जो कि हिमालय के उत्थान के समय उसके दक्षिण के भाग में बन गई थी। यह दरार 2400 किलोमीटर लंबी तथा सैकड़ों मीटर गहरी है। कर्नल बुरार्ड नामक भूगर्भशास्त्री ने इस मत का समर्थन किया। उनका यह मत भू–पृष्ठीय सर्वेक्षण (Geodetic Observations) पर आधारित है।

यद्यपि विद्वान भूगर्त की उत्पत्ति के बारे में एकमत नहीं हैं किंतु इसमें संदेह नहीं है कि इस विशाल मैदान की उत्पत्ति एक विशाल गर्त (Depression) के नदी निक्षेपों द्वारा भरे जाने के फलस्वरूप हुई है।

यह मैदान अपनी रचना के अनुसार प्रायद्वीपीय भारत तथा उत्तरी पर्वतों से बिल्कुल भिन्न है। यह प्लीस्टोसीन और अति नवीन कांप निक्षेपों से बना है, जो हिमालय के उत्थान के बाद से निरंतर एकत्र होते रहे हैं।

मिट्टी की विशेषता व ढाल के आधार पर इसका वर्गीकरण निम्न क्षेत्र के रूप में किया जा सकता है–

1. **भावर क्षेत्र** – भावर क्षेत्र में जहां हिमालय पर्वत और गंगा के मैदान मिलते हैं वहां हिमालय पर्वत से निकलने वाली असंख्य धाराओं ने अपने साथ पर्वतीय क्षेत्रों से टूटकर गिरे हुए पत्थरों के छोटे–छोटे टुकड़े काफी गहराई तक जमा कर दिए हैं। इन कंकड़ पत्थरों से ढंका हुआ भाग ही भावर कहलाता है। यह गंगा के मैदान की उत्तरी सीमा बनाता है। ये हिमालय के पथरीले ढाल हैं जो उसके एक सिरे से दूसरे तक 10 से 15 किलोमीटर की चौड़ाई में फैले हुए हैं। इस भू–भाग में आमतौर से नदियों का जल, कंकड़–पत्थर के ढेर के नीचे–नीचे ही

टिप्पणी

प्रवाहित होता है। केवल वही नदियों का जल ही धरातल पर प्रवाहित होता हुआ दिखाई देता है।

2. **तराई क्षेत्र** – भावर क्षेत्र के दक्षिण में उसके समांतर फैला यह क्षेत्र 15–30 किलोमीटर की चौड़ाई में पाया जाता है। भावर क्षेत्र में धरातल के नीचे बहने वाला जल यहां पर धरातल पर बहता हुआ दिखाई देने लगता है। यह निम्न समतल मैदान, जहां नदियों का पानी इधर–उधर फैल कर दलदली क्षेत्रों का निर्माण करता है। यहां नदियों का कोई निश्चित मार्ग नहीं होता। इसकी रचना बारीक कंकड़, पत्थर, रेत और चिकनी मिट्टी से हुई है। इसको साफ करके धीरे–धीरे खेती के अंतर्गत लाया जा रहा है।

3. **कांप क्षेत्र** – यह विशाल मैदान कांप मिट्टी की ही देन है। इस कांप को गंगोध अर्थात गंगा की कांप भी कहा जाता है। यह कांप रेत की कम मात्रा रखने वाली सख्त चिकनी मिट्टी की भांति है। यह कांप मिट्टी दो भागों में वर्गीकृत की जा सकती है–

   (क) **बांगर क्षेत्र** – यह मैदान का वह ऊंचा भाग है जहां सामान्य रूप से नदियों की बाढ़ का जल नहीं पहुंच पाता। जहां पुरानी कांप मिट्टयां पाई जाती हैं जिनका निर्माण काल मध्य से ऊपर प्लीस्टोसीन युग के बीच माना जाता है। इसका रंग हरा है तथा इसमें कंकड़ भी मिलते हैं। इसकी ऊंचाई कहीं–कहीं 30 मीटर है, लेकिन ऊंचाई में इस तरह उतार–चढ़ाव है कि सरसरी दृष्टि से देखने पर बांगर और खादर में बहुत ही कम अंतर दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि इस मैदान में धरातल का उतार–चढ़ाव समुद्र की लहरों के समान लहराता हुआ दिखाई देता है। सतलज का मैदान तथा गंगा के ऊपरी मैदान में बांगर की अधिकता पाई जाती है। नदियों के मध्यवर्ती भागों पर बांगर क्षेत्रों का विस्तार पाया जाता है।

   (ख) **खादर क्षेत्र** – यह वह भू–भाग है जहां नदियों की बाढ़ का पानी प्रतिवर्ष पहुंचता रहता है। इसे नदियों के बाढ़ के मैदान या कछारी क्षेत्र कहते हैं। प्रतिवर्ष बाढ़ के जल से यहां की मिट्टी नवीन होती रहती है। यह अपर प्लीस्टोसीन युग से लेकर आधुनिक काल का है। इसका रंग हल्का है। यह बालू व कंकड़ से युक्त है तथा भूमिगत जल का उत्तम संग्राहक है। इसकी उपजाऊ शक्ति में प्रतिवर्ष वृद्धि होती है।

4. **रेह** – बांगर मिट्टी के उन क्षेत्रों में जहां सिंचाई कार्यों की अधिकता है; वहां पर कहीं–कहीं भूमि पर एक नमकीन सफेद परत बिछी हुई पाई जाती है। सफेद परत वाली इस मिट्टी को रेह या कल्लर के नाम से पुकारते हैं। उत्तर क्षेत्र और हरियाणा के शुष्क भागों में इसका विस्तार सबसे अधिक है।

5. **भूड़** – बांगर मिट्टी के उन क्षेत्रों में जहां आवरण क्षय के फलस्वरूप ऊपर की मुलायम मिट्टी नष्ट हो गई है, वहां अब कंकरीली ऊंची भूमि मिलती है। ऐसी भूमि को भूड़ कहते हैं। यह बालू के ढेर हैं, जो प्राचीन काल में जल के बहाव से बन गए थे। गंगा और राम गंगा नदियों के प्रवाह क्षेत्रों में भूड़ का जमाव विशेष रूप से पाया जाता है।

6. **डेल्टाई क्षेत्र** – डेल्टा के मैदानों का निर्माण नदी के मुहाने के निकट होता है। गंगा–ब्रह्मपुत्र का विशाल डेल्टा भारत और बांग्लादेश में विस्तृत है। इस डेल्टा का पुराना भाग भारत में है जो लगभग स्थिर है। नवीन भाग बांग्लादेश में है जो अभी भी निर्माणावस्था में है। वास्तव में, डेल्टाई क्षेत्र खादर क्षेत्र का विस्तार मात्र है।

   यह विशाल मैदान अपनी दक्षिणी सीमा पर विशेष रूप से चंबल और सोन नदियों के बीच नदियों द्वारा बुरी तरह काट दिया गया है।

विशाल मैदान का उपविभाजन

भारतीय विशाल मैदान को उसकी धरातलीय विशेषताओं के आधार पर निम्न उप–भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है– (1) पंजाब–हरियाणा का मैदान (2) राजस्थान का मैदान (3) गंगा का मैदान (4) ब्रह्मपुत्र की घाटी।

1. **पंजाब–हरियाणा का मैदान** – इसे सतलज–यमुना विभाजक भी कहते हैं। पंजाब, हरियाणा और दिल्ली राज्यों पर इसका विस्तार है। सतलज, व्यास व रावी नदियां यहां पर बहती हैं। यह चौरस मैदान 1.75 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम दिशा में इसकी लंबाई 640 किलोमीटर है जबकि पश्चिम से पूर्व दिशा में इसकी चौड़ाई 300 किलोमीटर है। समुद्र तल से इस मैदान की औसत ऊंचाई 250 मीटर है। उत्तरी भाग में यह ऊंचाई 300 मीटर है जबकि दक्षिणी–पूर्वी भाग में यह 213 मीटर रह जाती है। नदियों के किनारे बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र पाए जाते हैं जिनकी अधिकतम चौड़ाई 10–12 किलोमीटर तक है।

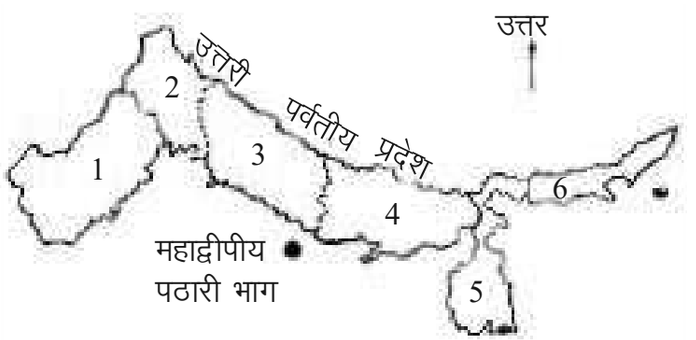

चित्र : विशाल मैदान के उपप्रदेश

(1) राजस्थान का मैदान (2) मध्य गंगा का मैदान
(3) पंजाब का मैदान (4) निम्न गंगा का मैदान
(5) ऊपरी गंगा का मैदान (6) असम की घाटी

इन क्षेत्रों को बेट (Bet) कहते हैं। रावी और व्यास नदियों के बीच के भूभाग को अपर बारी दोआब; व्यास और सतलज के बीच के भूभाग को बिस्त दोआब तथा सतलज के दक्षिण की ओर के भूभाग को मालवा का मैदान कहते हैं। ये अपेक्षतया ऊंचे मैदान हैं। इनके और अधिक दक्षिण में हरियाणा का मैदान है,

टिप्पणी

जो उपर्युक्त मैदानों की अपेक्षा जल के प्रभाव में शुष्क रहता है। सतलज और यमुना के बीच में घग्घर जो कि एक मौसमी प्रवाह है, पाई जाती है। वर्तमान समय में सिंचाई की सुविधाओं के कारण यह मैदान हरा–भरा रहता है।

2. **राजस्थान का मैदान** – इसका विस्तार 1.75 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर है। यह अरावली पहाड़ियों के पश्चिम में फैला है तथा इसका विस्तार भारत–पाकिस्तान सीमा तक है। इसमें मरुस्थली तथा बांगड़ क्षेत्र भी शामिल है। मरुस्थली मारवाड़ मैदान का एक अंग है जो बालू से सुसज्जित है। कहीं–कहीं पर नीस, शिष्ट तथा ग्रेनाइट चट्टानों की नंगी सतह दिखाई पड़ती है, जो इस बात का प्रमाण है कि यह प्रायद्वीपीय पठार का एक अंग रहा है। बालू के टीलों का यहां प्राधान्य है। दक्षिणी–पश्चिमी भाग में पवनानुवर्ती टीले पाए जाते हैं; जबकि दक्षिणी पूर्वी भाग में, जहां पर हवाएं बहुत तेज चलती हैं, बरखान और अनुप्रस्थ टीले पाए जाते हैं। अरावली के पूर्व में बांगड़ की स्टेपी भूमि उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम दिशा में विस्तृत मिलती है। यहां की प्रमुख नदी लूनी है। इसका बेसिन 150 मीटर ऊंचा है। यहां पर कुछ पहाड़ियां भी मिलती हैं। लूनी नदी मौसमी नदी है जो दक्षिण पश्चिम दिशा में कच्छ के रण की ओर प्रभावित होती है। यहां पर अनेक झीलें भी पाई जाती हैं। सांभर, डीडवाना, लूनकरणसार, कुचामन और डेगना प्रमुख नमकीन झीलें हैं। सांभर सबसे बड़ी झील है जो 300 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली है। यह जयपुर के 65 किलोमीटर पश्चिम में है।

(3) **गंगा का मैदान** : यह मैदान उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों के 357 लाख वर्ग किलोमीटर भूभाग पर फैला है। इसका ढाल पश्चिम–पूर्व व दक्षिण–पूर्व की ओर है। गंगा यहां की प्रमुख नदी है। दाएं किनारे पर स्थित प्रमुख सहायक नदियां यमुना और सोन हैं जबकि बाएं किनारे पर घाघरा, गंडक और कोसी प्रमुख सहायक नदियां हैं। इस मैदान पर नदियों का जाल फैला हुआ है जो बरसात में बाढ़ लाने में सहायक होती हैं तथा प्रतिवर्ष हजारों टन मिट्टी यहां पर लाकर बिछा देती हैं। भू–आकृति की दृष्टि से बांगर और खादर इसके दो भाग हैं। नदियों के पुराने प्रवाह मार्ग जो भी उस पानी से भरे रहते हैं बील (Beel) कहलाते हैं।

इस मैदान को तीन उपविभागों में बांटा गया है–

(i) **ऊपरी गंगा का मैदान** – इस मैदान की उत्तरी सीमा शिवालिक पहाड़ियों, दक्षिणी सीमा प्रायद्वीपीय पठार द्वारा बनती है। पश्चिम में यमुना नदी इसकी प्राकृतिक सीमा बनाती है तथा पूर्व में 100 मीटर की समोच्च रेखा द्वारा इसकी सीमा बनती है। इस मैदान की ऊंचाई 100 से 300 मीटर के बीच पाई जाती है। उत्तरी भाग में ढाल, दक्षिण व पूर्व की अपेक्षा अधिक तेज है। यमुना गंगा, राम गंगा, शारदा, गोमती, घाघरा इस मैदान की प्रमुख नदियां हैं।

(ii) **मध्य गंगा का मैदान** – उत्तरी बिहार व पूर्वी उत्तर प्रदेश पर उसका विस्तार है। पश्चिमी सीमा 100 मीटर की समोच्च रेखा द्वारा बनती है जो इलाहाबाद, फैजाबाद रेल मार्ग का अनुसरण करती है। कुछ विद्वानों ने

इसकी सीमा 100 सेंटीमीटर वर्षा रेखा द्वारा निर्धारित की है। पूर्वी सीमा उत्तरी–पूर्वी भाग में 75 मीटर तथा दक्षिण–पूर्व में 30 मीटर की समोच्च रेखाओं द्वारा बनती है। यह मैदान नदियों के प्रवाह मार्ग में परिवर्तन से बुरी तरह प्रभावित है। कोसी नदी इसका एक उदाहरण है। घाघरा, गंडक, कोसी गंगा की प्रमुख सहायक नदियां हैं। यहां खादर भूमि की अधिकता है। भूमि में कंकड़ों का अभाव है। यह मैदान अत्यंत उपजाऊ है। यहां स्थान–स्थान पर धनुषाकार झीलें (Ox-bow Lakes) व नदियों के पुराने प्रवाह मार्ग मिलते हैं। बाढों की अधिकता उस मैदान की प्रमुख विशेषता है।

(iii) **निम्न गंगा का मैदान** – इस मैदान में उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों तथा पश्चिम में स्थित पुरुलिया जिले को छोड़कर संपूर्ण पश्चिमी बंगाल शामिल है। इस प्रकार यह हिमालय की तलहटी से लगकर गंगा के डेल्टा तक फैला है। मैदान का उत्तरी भाग तिस्ता, जल ढाका और टोरसा नदियों द्वारा सींचा जाता है। राजमहल पहाड़ियों के निकट यह मैदान संकरा हो गया है। इससे दक्षिण में गंगा के पुराने डेल्टा का विस्तार है। इसका निर्माण प्लीस्टोसीन काल में हुआ है। इससे और दक्षिण में बंगाल की खाड़ी तक फैला हुआ डेल्टाई भाग नवीनतम कांप से निर्मित भूभाग है। यह समुद्र तल से केवल 50 मीटर ऊंचा है तथा नीचे समतल मैदान है। समुद्र में उठने वाले ज्वार इसके अधिकांश भाग को जल से ढंक देते हैं इसलिए यह भाग अधिकतर दलदल बना रहता है। इस डेल्टा के ऊपरी भाग में कहीं–कहीं कुछ टीले या नदियों के पुराने किनारे चर (Chars) पाए जाते हैं। ये उभरे भाग गांव के बसाव स्थान के रूप में प्रयोग किए जाते हैं जो कि पानी में डूबने से सुरक्षित रहते हैं। निम्न भूमि को बिल (Bill) कहते हैं।

(4) ब्रह्मपुत्र की घाटी – इसको असम घाटी भी कहते हैं। यह मेघालय पठार और हिमालय पर्वत के बीच में एक लंबा और पतला मैदान है। यह केवल 80 किलोमीटर चौड़ा है। ब्रह्मपुत्र नदी ने इस घाटी को बनाने में यहां पर भारी मात्रा में मिट्टी लाकर एकत्र कर दी है। मिट्टी के भारी जमाव के कारण कहीं–कहीं द्वीप भी निर्मित हो गए हैं। ब्रह्मपुत्र नदी साहिया के निकट मैदान में प्रवेश करती है और 720 किलोमीटर बहने पर धुवरी के निकट दक्षिण की ओर मुड़कर बांग्लादेश में प्रवेश कर जाती है। घाटी का तल पूर्वी भाग में 130 मीटर तथा पश्चिमी भाग में 30 मीटर ऊंचा है। इस प्रकार इसके ढाल का औसत 12 सेंटीमीटर प्रति किलोमीटर है। ढाल की दिशा दक्षिण–पश्चिम दिशा की ओर है। उत्तरी सीमा पर तराई व अर्द्ध तराई क्षेत्र पाए जाते हैं जो दलदल मिट्टी व सघन वनों से ढके हुए हैं।

भारतीय गंगा के मैदान का आर्थिक एवं सामाजिक महत्व

यह मैदान भारत का हृदय है। यहां भारत की 45 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है जबकि यह संपूर्ण देश के क्षेत्रफल का केवल एक तिहाई भूभाग घेरे हुए है। यह भारत का कृषि की दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यहां खनिज पदार्थ कम पाए जाते हैं। हिमालय पर्वत से निकलने वाली नदियों द्वारा बहा कर लाई गई मिट्टी से निर्मित होने

के कारण यह हिमालय की देन माना जाता है। यह मैदान देश की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। आर्थिक प्रगति की दृष्टि से इसका देश में प्रथम स्थान है। इस मैदान की कुछ प्रमुख विशेषताएं एवं महत्व इस प्रकार है–

टिप्पणी

(i) यह चौरस व समतल मैदान है। पहाड़ियों व टीलों का यहां सर्वत्र अभाव पाया जाता है।

(ii) यह मैदान नदियों द्वारा जमा किए गए निक्षेपों से बना है, जो कि उपजाऊ कांप है। इसकी उर्वरा शक्ति इतनी अधिक है कि यह भारत की जनसंख्या की अधिकांश मांग को पूरा करने में सक्षम है बल्कि यह भारत का खाद्यान्न भंडार (Granary of India) कहलाता है।

(iii) इस मैदान की नदियां जल से पूरे वर्ष भर प्रभावित रहती हैं। इस कारण ये नदियां निश्चित मात्रा में पूरे विश्वास के साथ वर्ष भर सिंचाई व पीने के लिए पानी प्रदान करती हैं। इन नदियों की इस विशेषता के कारण यहां पर नहरों का जाल बिछ गया है।

(iv) इस मैदान का ढाल अत्यंत धीमा है। इस कारण नदियां यातायात के लिए भी उपयुक्त हैं।

(v) इस मैदान के जिस भाग में नदियां जहां कहीं भी जलप्रपात बनाती हैं वहां पर जल विद्युत तैयार की जाती है। जैसे– गंगा नदी के ऊपरी मैदानी भाग में।

(vi) इस मैदान की मिट्टी, मिट्टी के बर्तन बनाने के लिए अत्यंत उपयुक्त है। इस मिट्टी का प्रयोग ईंट बनाने के लिए भी किया जाता है जो भवन निर्माण के काम आती है।

(vii) इस मैदान में मिलने वाले कंकड़ों का प्रयोग चूना और सीमेंट बनाने में किया जाता है। कंकड़ सड़क बनाने के काम में भी लाए जाते हैं।

(viii) यह मैदान भूमिगत जल का अक्षय भंडार है। यह जल मीठा व ताजा होता है जो नलकूपों और कुओं की सहायता से निकालकर सिंचाई व पीने के काम में लाया जाता है।

(ix) यह मैदान सभ्यता की जन्मभूमि रहा है। भारतीय इतिहास में इसके राजनीतिक और सांस्कृतिक महत्व का विस्तृत वर्णन मिलता है। यह तीर्थ स्थानों की जन्मभूमि है। यहां पर मथुरा, काशी, प्रयाग, हरिद्वार, पटना, गया, कुरुक्षेत्र, वृंदावन जैसे पावन तीर्थ धाम स्थित हैं।

(x) इस मैदान की सभी नदियों के किनारे बड़े–बड़े नगर बसे हैं। अतः नगरीकरण के विकास में भी इस मैदान का महत्वपूर्ण योगदान है।

(xi) समतल और चौरस होने के कारण रेलमार्ग और सड़कों के निर्माण के लिए यह क्षेत्र उपयुक्त है। इसी कारण यहां रेलमार्गों व सड़क मार्गों का जाल बिछा हुआ है।

(xii) यह मैदान औद्योगिक व व्यापारिक गतिविधियों का केंद्र है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह देश का सबसे सघन और उन्नत भू–भाग है। भारत की अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने में इसका बहुत बड़ा हाथ है। यह कृषि, व्यापार, उद्योग और यातायात की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

टिप्पणी

5.2.3 तटीय भारत

भारत की तट रेखा 5686 किलोमीटर लंबी है। यह पश्चिम में कच्छ के रण से लेकर पूर्व में गंगा ब्रह्मपुत्र डेल्टा तक फैली है। ये तट व तटीय मैदान संरचना व धरातल की दृष्टि से स्पष्ट विभिन्नताएं रखते हैं। ये पश्चिमी भाग में पश्चिमी तटीय मैदान तथा पूर्वी भाग में पूर्वी तटीय मैदान के नाम से जाने जाते हैं। ये मैदान या तो समुद्र की क्रिया द्वारा बने हैं या फिर नदियों द्वारा बहा कर लाई गई कीचड़ मिट्टी के निक्षेप द्वारा बने हैं।

1. **पश्चिमी तटीय मैदान** – यह मैदान पश्चिमी घाट के पश्चिम में कच्छ खाड़ी से कुमारी अंतरीप तक फैला है। यह पूर्वी तट की अपेक्षा अधिक विभिन्नताएं रखता है। इस मैदान की औसत चौड़ाई 64 किलोमीटर है। नर्मदा और ताप्ती नदियों के मुहानों के निकट इसकी सर्वाधिक चौड़ाई 80 किलोमीटर है। अनेक स्थानों पर यह 50 किलोमीटर से भी कम चौड़ा है। इस तटीय मैदान में बहने वाली नदियां छोटी और तीव्रगामी हैं। अतः इनके पानी का उपयोग सिंचाई, जल विद्युत या जल यातायात आदि किसी भी कार्य में नहीं हो पाता। इस विशेषता के कारण इनका मैदान सीमित रहता है। पश्चिमी तट को तीन भागों में बांटा जा सकता है–

   (i) **मालाबार तट** – इसका विस्तार गोवा से कुमारी अंतरीप तक है। तटरेखा कटी–फटी होने के कारण यह प्राकृतिक पोताश्रय है, किंतु हवा के अधिक तेज चलने के कारण तट के सहारे बालू एकत्र हो जाती है। अनूप झीलें इस तट की विशेषता है। मंगलूर, कोच्चि, अलेप्पे और कोल्लम इस तट के पत्तन है कोच्चि के समीप समुद्र तट के समानांतर पृष्ठ जल (Back Water) की सुविधा है।

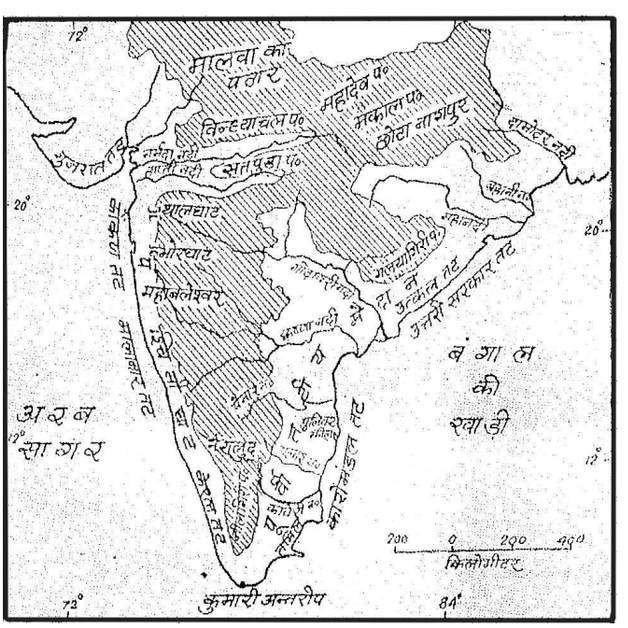

समुद्रतटीय मैदान

टिप्पणी

(ii) **कोंकण तट** – पश्चिमी तट पर सूरत से गोवा तक फैला हुआ भाग कोंकण तट कहलाता है। यह एक संकरी मैदानी पट्टी है जिसके एक ओर अरब सागर तथा दूसरी ओर पश्चिमी घाट पर्वत हैं। इस तट के प्रमुख पत्तन मुंबई तथा सूरत हैं। मुंबई पोताश्रय के सामने 9 मीटर से 12 मीटर तक गहरा समुद्र जल सदैव प्राप्त होता है। द्वीप व पश्चिमी तट के स्थलीय भाग से घिरा होने के कारण यह मानसूनी तूफानों से सदैव सुरक्षित है।

(iii) **गुजरात तट** – यह सूरत से कच्छ तक फैला हुआ है। इसी तट पर खंभात व कच्छ की खाड़ियां हैं। यह तट कटा–फटा है। पोरबंदर, बोरीबंदर, ओखा पोर्ट तथा कांदला पत्तन उल्लेखनीय हैं। विभाजन के फलस्वरूप करांची के निकल जाने से पश्चिमी समुद्र तट पर एक अच्छे पत्तन की आवश्यकता थी जिससे पंजाब, राजस्थान, हरियाणा राज्यों को व्यापारिक सुविधाएं प्राप्त हो सकें। इस कमी की पूर्ति के लिए कांदला का विकास किया गया है। कांदला के तटीय समुद्र में पानी की गहराई लगभग 9 मीटर रहती है। तट के निकट द्वीपों का भी विशेष महत्व होता है। भारतीय तट पर द्वीपों का भी अभाव है। कच्छ तथा खंभात की खाड़ी में कुछ छोटे–छोटे द्वीप मिलते हैं। ये द्वीप मछुओं के शरण स्थल हैं। मुम्बई साल्सेट नामक द्वीप पर बसा है। इसके निकट ही एलीफेंटा नामक द्वीप है जो बड़ा ही रमणीय है।

पश्चिमी तट के द्वीप – पश्चिमी तट के द्वीप निम्न हैं–

(i) **लक्षद्वीप**– यह द्वीप समूह लगभग 10° से 12° उत्तरी अक्षांश और 72° पूर्वी देशांतर पर मालाबार तट से 288 किमी दूरी पर फैला हुआ है। ये सभी प्रवाल द्वीप हैं।

(ii) **ट्रांबे द्वीप** – यह मुंबई नगर के समीप स्थित है। हमारी सरकार ने यहां अणुशक्ति उत्पादन एवं तेलशोधक केंद्र बनाया है।

(iii) **ड्यू तथा सेंट मेरी द्वीप**– उत्तर की ओर ड्यू तथा सेंट मेरी द्वीप हैं।

2. **पूर्वी तटीय मैदान** – पूर्वी तट के भी 2 भाग किए गए हैं– (i) उत्तरी सरकार तट (ii) कोरोमंडल तट

(i) **उत्तरी सरकार तट** – यह कृष्णा नदी के डेल्टा से लेकर गंगा नदी के डेल्टा तक विस्तृत है। नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी के जमा हो जाने के कारण समुद्र तट उथला है। कोलकाता के समीप हुगली नदी प्रतिवर्ष कीचड़ जमा कर देती है जिसे समय–समय पर साफ करना अत्यंत अनिवार्य हो जाता है, अन्यथा जहाजों का प्रवेश रुक सकता है। पुरी के समीप का समुद्र तट पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र है। मद्रास और कोलकाता के बीच लगभग 1,600 किमी. लम्बे समुद्र तट पर बीच में विशाखापट्टनम तथा पाराद्वीप को विकसित किया गया है। व्यापारिक दृष्टिकोण से यह पत्तन उन्नत है क्योंकि यहां समुद्र शांत रहता है तथा पोताश्रयों में बड़े–बड़े जहाजों को ठहराने के लिए स्थान भी है। कोकिनाड और मछलीपट्टनम पत्तन भी इसी तट पर हैं।

टिप्पणी

(ii) **कोरोमंडल तट**– पूर्वी तट के दक्षिणी भाग को कोरोमंडल तट की संज्ञा दी गई है। यह कुमारी अंतरिप से कृष्णा नदी के डेल्टा तक विस्तृत एवं सपाट तट है। मद्रास के समीप समुद्र छिछला तथा बलुआ है। यहां एक कृत्रिम पोताश्रय का निर्माण किया गया है। समुद्र में दो पत्तनों में पुतूच्चेरि, गुडलूर, नागापट्टनम धनुषकोटी तथा तूतुकुड़ि हैं। सेतुबंध रामेश्वरम तीर्थ यात्रियों के लिए मुख्य आकर्षण है जो इसी तट पर है।

पूर्वी तट के द्वीप – पूर्वी तट के द्वीप निम्नलिखित हैं–

(i) **हेयर द्वीप** – तूतुकुड़ि से 4 किलोमीटर दूर स्थित यह द्वीप खरगोशों की अधिकता व उनके शिकार के लिए प्रसिद्ध है।

(ii) **पामवन द्वीप** – यह आदम के पुल का ही अंग है। अति प्राचीन काल में इसके अतिरिक्त अन्य छोटे–छोटे द्वीपों द्वारा भारत और श्रीलंका का संबंध रहा होगा। रामेश्वरम् एक द्वीप पर स्थित है। अब कुछ द्वीप जलमग्न हो गए हैं। बचे हुए द्वीपों में पामवन द्वीप मुख्य है। यह द्वीप 10 किलोमीटर चौड़े तथा 18 किलोमीटर लंबे क्षेत्र में विस्तृत है।

(iii) **श्री हरिकोटा द्वीप** – यह रेत की मुंडेर है जो पुलकित झील को बंगाल की खाड़ी से अलग करती है। यह 90 किलोमीटर लंबा तथा 13 किलोमीटर चौड़ा है।

कृष्णा नदी के डेल्टा के समीप भी कुछ छोटे द्वीप बन गए हैं। चिल्का झील तथा समुद्र के मध्य कुछ द्वीप मिलते हैं जो लगभग 30 किलोमीटर लंबे हैं। गंगा के डेल्टा पर वनाच्छादित छोटे–छोटे द्वीप मिलते हैं। बंगाल की खाड़ी में भी दो मुख्य द्वीप समूह अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह हैं।

तटीय क्षेत्रों का आर्थिक एवं सामाजिक महत्व

तटीय क्षेत्रों के आर्थिक एवं सामाजिक महत्व को निम्न प्रकार से समझ सकते हैं–

1. तटीय क्षेत्रों ने भारत में बाह्य व्यापार के प्रवेश के लिए सुगम मार्ग प्रदान किया है। भारत का 98 प्रतिशत विदेशी व्यापार इन तटों पर स्थित बंदरगाहों द्वारा होता है।
2. तटीय मैदान उपजाऊ कांप चावल की खेती के लिए महत्वपूर्ण है। यहां पर सुपारी, नारियल व केले के पेड़ बहुतायत में पाए जाते हैं।
3. खनिज पदार्थों की दृष्टि से इन तटों का महत्व बहुत अधिक है। मुंबई हाई व बंसई तेल क्षेत्र इसके उदाहरण हैं। केरल राज्य के तटीय क्षेत्र की बालू से मोनोजाइट प्राप्त होता है, जो कि एक परमाणु खनिज है। तटीय क्षेत्र नमक बनाने के लिए महत्वपूर्ण है।
4. तटीय क्षेत्र मछली उद्योग के लिए महत्वपूर्ण है। मालाबार तट और पूर्वी तट में स्थित नदियों के डेल्टाओं से मछलियां पकड़ी जाती हैं।
5. तटीय क्षेत्र स्थित सभी बंदरगाह विशेष रूप से बड़े बंदरगाह औद्योगिक नगर के रूप में विकसित हो गए हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. विश्व का सबसे बड़ा तथा सर्वाधिक तेजी से बढ़ता हुआ डेल्टा कौन सा है?
   (क) ज्वारनदमुखी डेल्टा (ख) चापाकार डेल्टा
   (ग) सुंदरवन डेल्टा (घ) अवरोपित डेल्टा
2. सरकार ने किस द्वीप पर अणुशक्ति उत्पादन एवं तेल शोधक केंद्र बनाया है?
   (क) लक्षद्वीप (ख) ट्रांबे द्वीप
   (ग) हेयर द्वीप (घ) पामवन द्वीप
3. कौन सा द्वीप पुलकित झील को बंगाल की खाड़ी से अलग करता है?
   (क) अंडमान द्वीप (ख) लक्षद्वीप
   (ग) हेयर द्वीप (घ) श्री हरिकोटा द्वीप
4. तटीय क्षेत्र किस उद्योग के लिए महत्वपूर्ण है?
   (क) मछली उद्योग (ख) वस्त्र उद्योग
   (ग) चीनी उद्योग (घ) खनिज उद्योग

5.3 नगरीय/महानगरीय क्षेत्र

महानगरीय क्षेत्र का सीमांकन एक विशाल जनसंख्या केंद्र और उसके पड़ोसी क्षेत्र को मिलाकर होता है। इसमें एकदम निकटता से जुड़े शहर एवं अन्य प्रभावित क्षेत्र भी गिने जा सकते हैं। इसमें सबसे बड़े शहर के नाम से ही इस क्षेत्र के नाम को जाना जाता है। भारत में जनगणना आयोग ने महानगरीय क्षेत्र को इस प्रकार से परिभाषित किया है– ''यह क्षेत्र वो होते हैं जिनकी जनसंख्या 40 लाख से अधिक होती है। इनमें पटना, मुंबई, दिल्ली, चेन्नई, कोलकाता, बेंगलुरु और हैदराबाद ये सात शहर वर्तमान में इस श्रेणी में आते हैं।''

नगरीय भूगोल में महानगर शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है– (क) नगरीय समूह के रूप में एवं (ख) एक वृहत् नगर के रूप में।

इस प्रकार किसी महानगरीय क्षेत्र के निर्धारण में उसकी विशालता एवं उसके साथ अनेक छोटे–छोटे नगरों का उपनगरों के रूप में संबंध होना आवश्यक है। महानगरीय क्षेत्र के निर्धारण में सर्वसम्मत आधार जनसंख्या का आकार ही है। प्रायः दस लाख और उससे अधिक जनसंख्या वाले समस्त नगरीय समूह को महानगर क्षेत्र की संज्ञा दी गई है।

नगरीय क्षेत्र के निर्धारण के लिए निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण माने जाते हैं–

भारत में नगरीकरण/नगरों की संख्या

वर्ष	नगरीय जनसंख्या (दस लाख में)	नगरीकरण (%)	नगरों की संख्या
1901	25.85	11.0	1,917
1911	25.95	10.4	1,909

टिप्पणी

1921	28.09	11.3	2,047
1931	33.46	12.2	2,219
1941	44.15	14.1	2,424
1951	62.44	17.6	3,059
1961	78.93	18.3	2,699
1971	109.09	20.2	3,119
1981	156.19	23.7	4,019
1991	217.61	25.7	4,689
2001	286.12	27.8	5,161
2011	377.11	31.2	7,933

भारत के दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर (2011)

क्रम सं.	नाम	जनसंख्या
1.	मुंबई	1,84,14,288
2.	दिल्ली	1,63,14,838
3.	कोलकाता	1,41,12,536
4.	चेन्नई	86,96,010
5.	बेंगलुरु	84, 99, 399
6.	हैदराबाद	77, 49, 334
7.	अहमदाबाद	63, 52, 254
8.	पुणे	50,49,968
9.	सूरत	45,85,367
10.	जयपुर	30,73,350
11.	कानपुर	29,20,067
12.	लखनऊ	29,01,474
13.	नागपुर	24,97,777
14.	गाजियाबाद	23,58,525
15.	इंदौर	21,67,447
16.	कोयंबटूर	21,51,466
17.	कोच्चि	21,17,990
18.	पटना	20,46,652
19.	कोझिकोड	20,30,519
20.	भोपाल	18,83,381
21.	थ्रिसूर	18,54,783
22.	बड़ोदरा	18,17,191
23.	आगरा	17,46,467
24.	विशाखापट्टनम	17,30,320
25.	मल्लापुरम	16,98,645
26.	तिरुवनंतपुरम	16,87,406
27.	कन्नूर	16,42,892
28.	लुधियाना	16,13,878

टिप्पणी

29.	नासिक	15,62,769
30.	विजयवाड़ा	14,91,202
31.	मदुरै	14,62,420
32.	वाराणसी	14,35,113
33.	मेरठ	14,24,908
34.	फरीदाबाद	14,04,653
35.	राजकोट	13,90,933
36.	जमशेदपुर	13,37,131
37.	श्रीनगर	12,73,312
38.	जबलपुर	12,67,564
39.	आसनसोल	12,43,008
40.	वसाई– विरार	12,21,233
41.	इलाहाबाद	12,16,233
42.	धनबाद	11,95,298
43.	औरंगाबाद	11,89,376
44.	अमृतसर	11,83,705
45.	जोधपुर	11,37,815
46.	रांची	11,26,741
47.	रायपुर	11,22,555
48.	कोल्लम	11,10,005
49.	ग्वालियर	11,01,981
50.	दुर्ग –भिलाई नगर	10,64,077
51.	चंडीगढ़	10,25,682
52.	तिरुचिरापल्ली	10,21,717
53.	कोटा	10,01,365

नगरीय क्षेत्र के निर्धारण के प्रमुख आधार

नगरीय क्षेत्र के निर्धारण के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं–

1. उच्च जनसंख्या घनत्व।
2. परिवहन एवं संचार व्यवस्था की जटिलताएं।
3. बाजारों के प्रांगण की अधिक संख्या।
4. परिवहन व्यवस्था की आपाधापी।
5. भूमंडलीय इमारतें एवं अपार्टमेंट की भरमार।
6. परिवहन एवं संचार व्यवस्था की जटिलताएं।
7. परिवहन व्यवस्था की आपाधापी।
8. आर्थिक पहचान।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश में तेजी से औद्योगिक प्रगति हुई है। साथ ही साथ, आर्थिक गतिविधि में भी लोगों की भागीदारी बढ़ी है। परिणामतः नगरीकरण की

टिप्पणी

प्रवृत्ति में भी काफी तेजी आई है। 2001 की जनगणना के मुताबिक देश में महानगरों की संख्या 35 हो गई और 2011 में यह 290 तक पहुंच गई। लगभग सभी महानगर महानगरीय क्षेत्र के रूप में उभर कर सामने आए।

5.3.1 दिल्ली महानगरीय क्षेत्र

दिल्ली भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक राजधानी है। यह प्राचीन संस्कृति, सभ्यता एवं वृहत् उद्देश्यों को अपने आप में समाहित किए हुए है। यह यमुना नदी के पश्चिमी किनारे पर बालू पत्थर से बने कटक (Sand Stone Ridge) पर अवस्थित है एवं पंजाब के मैदान को गंगा के मैदान से अलग करती है। चूंकि दिल्ली रेल सेवा, वायु सेवा एवं सड़क परिवहन के द्वारा देश के विभिन्न भागों से जुड़ी हुई है। फलतः किसी भी दिशा से यहां आसानी से पहुंचा जा सकता है। इस समय दिल्ली दो भागों में बंटी है, जिसे पुरानी एवं नई दिल्ली के नाम से जाना जाता है।

क्षेत्रीय अवस्थिति

दिल्ली उत्तरी भारत में अवस्थित है जो भारत को उपमहादेश की संज्ञा दिलाता है। यह महानगर अरावली पर्वत पर 300 मीटर की ऊंचाई पर अवस्थित है तथा इसके दक्षिण में प्रायद्वीपीय भारत, पश्चिम में थार मरुभूमि, उत्तर में हिमालय पर्वतमालाएं एवं पूर्व में उत्तरी भारत का वृहत् गंगा का मैदान अवस्थित है। चूंकि यह यमुना नदी के पश्चिमी प्राकृतिक तटबंध पर अवस्थित है, अतः नदी मार्ग, सड़क मार्ग, रेल मार्ग एवं वायु मार्ग सभी यहां एक साथ मिलकर इसे केंद्रीय स्थल (Nodal Point) बनाते हैं। अतः दिल्ली महानगर की केन्द्रीयता इसकी क्षेत्रीय अवस्थति में निहित है, जो इसे वृहत् केंद्रीय स्थल का रूप देती है।

दिल्ली महानगर 28°53' उत्तरी अक्षांश एवं 76°50' से 77°22' पूर्वी देशांतर पर स्थित है। चूंकि दिल्ली की केंद्रीयता एवं प्रादेशिक स्थिति अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। फलतः इसे भारत का द्वार (Gateway of India) कहते हैं। दिल्ली को आधिकारिक तौर पर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। यद्यपि यह एक केंद्र शासित प्रदेश है किंतु इसका राजनीतिक प्रशासन भारत के किसी भी अन्य राज्य के समान है। इसका अपना विधानमंडल, उच्च न्यायालय और कार्यकारी परिषद है, जिसके अध्यक्ष यहां के मुख्यमंत्री हैं। नई दिल्ली का प्रशासन भारत की संघीय सरकार और स्थानीय सरकार दोनों के हाथों में है।

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1,484 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। 2011 की जनगणना के अनुसार दिल्ली की जनसंख्या 11 लाख से अधिक है जो मुंबई के बाद द्वितीय स्थान पर है जबकि संपूर्ण राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की जनसंख्या 16.8 लाख थी। दिल्ली का नगरीय क्षेत्र अब राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की सीमाओं के बाहर फैल चुका है व इसमें अब समीप के सैटेलाइट नगर गाजियाबाद, फरीदाबाद, गुरुग्राम और नोएडा और एक क्षेत्र जिसमें राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र सम्मिलित हैं। 2018 में यहां की जनसंख्या 28 लाख से अधिक थी। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार इस हिसाब से यह विश्व का सबसे बड़ा नगरीय क्षेत्र है।

टिप्पणी

दिल्ली महानगर के विकास का इतिहास

ईसा से 10वीं शताब्दी पूर्व दिल्ली इंद्रप्रस्थ कहलाता था, जिसकी स्थापना पांडवों ने यमुना नदी के पश्चिमी तट पर की थी। इसे अनंगपाल प्रथम के द्वारा 1052 ई. में लालकोट (दिल्ली) दक्षिणी–पश्चिमी इंद्रप्रस्थ के रूप में पुनः बनाया। पृथ्वीराज चौहान ने 1170 से 1192 ई. में पुरानी दिल्ली को फिर से खड़ा किया एवं इसका नाम राजपिथौरा रखा। अलाउद्दीन खिलजी ने एक नए किले शहर का निर्माण पिथौरा से उत्तर में किया एवं पुरानी दिल्ली को सीरी कहा। सीरी एक सुंदर नगर था जहां ऊंचे–ऊंचे मकान थे, जिसे 1327 ई. में जहांपनाह कहा। 1351 ई. में फिरोजाबाद कहा गया, पुनः 1434 ई. में मुबारकबाद कहा गया, 1533 ई. में इसे दीनपनाह कहा गया, 1555 ई. में इसे शेरगढ़ कहा गया एवं 1648 ई. में शाहजहां के द्वारा लाल किला बनाया गया। नई दिल्ली का निर्माण स्थल एडमिन लुटियन एवं सर हर्बर्ट बेकर द्वारा 1911 ई. में चुना गया जो शाहजहांनाबाद (पुरानी दिल्ली) से उत्तर में है, क्योंकि यहां विभिन्न प्रकार के परिवहन के मार्ग चारों दिशाओं से आकर मिलते हैं। उपरोक्त विवरण में से यह पता चलता है कि राजाओं के इच्छानुसार दिल्ली का नाम बराबर बदलता रहा क्योंकि अरावली के कटक पर पेयजल की समस्या, यमुना नदी के किनारे प्रति वर्ष बाढ़ की समस्या के कारण चार बार बाढ़ से सुरक्षा के लिए बांध बनाए गए हैं।

नीचे की तालिका में दिल्ली महानगर की बढ़ती हुई जनसंख्या को देखा जा सकता है–

तालिका

जनसंख्या वृद्धि – दिल्ली

वर्ष	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि
2021	31,181,000	2.94%
2011	22,714,000	3.30%
2001	16,414,000	4.60%
1991	9,885,000	5.34%
1981	5,862,000	4.92%
1971	3,689,000	4.47%
1961	2,394,000	4.86%
1951	1,369,000	0.00%

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस महानगरीय क्षेत्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि काफी गौरवपूर्ण रही है। ऐतिहासिक प्रमाणों एवं अध्ययनोपरांत से यह स्पष्ट हो चुका है कि दिल्ली प्राचीन काल से लेकर आज तक 16 राजकुलों की राजधानियां रह चुकी है। दिल्ली में विराजमान लाल किला, जामा मस्जिद, इंडिया गेट, सदृश्य प्राचीन इमारतें इसकी गौरवपूर्ण ऐतिहासिक गाथा का जीता जागता उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

दिल्ली महानगर में तीन स्तर के क्षेत्र हैं–

1. दिल्ली का केंद्रीय भाग गाजियाबाद, नोएडा, उत्तर प्रदेश की लोनी, फरीदाबाद, गुड़गांव, बहादुरगढ़, हरियाणा एवं नरेला

टिप्पणी

2. दूसरे स्तर के क्षेत्र में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के नगर, रोहतक, सोनीपत, मेरठ, बुलंदशहर, मुजफ्फरनगर एवं अलवर आदि आते हैं।
3. तीसरे स्तर के क्षेत्र में दिल्ली के आसपास के जिले व्यापारिक प्रतिष्ठान, प्रशासनिक केंद्र एवं आसपास के ग्रामीण क्षेत्र से सड़कों के जाल द्वारा घिरे हुए भाग आते हैं।

दिल्ली महानगर का मास्टर प्लान राष्ट्रीय राजधानी, क्षेत्रीय राजधानी एवं उत्तरी–पश्चिमी भारत के महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र के रूप में देखा जा सकता है। अतः दिल्ली महानगर ईस्ट का मास्टर प्लान इस बात को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है कि ऊपर वर्णित सभी कार्यों को वहां फैलने का मौका मिल सके। साथ ही साथ औद्योगिक विकास एवं आस–पास के विभिन्न शहरों जैसे– गाजियाबाद, बहादुरगढ़ गुड़गांव, सोनीपत एवं फरीदाबाद को उपनगरीय क्षेत्र के रूप में विकसित होता हुआ देखा जा सके। ये सभी प्रतिवर्ष जनसंख्या एवं घरों के बढ़ने के कारण दिल्ली के केंद्रीय भाग के निकट आ रहे हैं, जिसका मुख्य कारण इन सभी क्षेत्रों में व्यापारिक और औद्योगिक प्रगति है। ये सभी उपांत क्षेत्र में रिंग शहरों के रूप में कार्य करते हैं तथा दिल्ली के सामाजिक और आर्थिक विकास में मदद करते हैं। ये सभी नगर दिल्ली महानगर में जनसंख्या के दबाव, रोजगार की उपलब्धि एवं शहर के विकास से संबंधित बाधाओं को दूर करते हैं।

दिल्ली विकास प्राधिकरण की योजना

नियोजन के दृष्टिकोण से दिल्ली विकास प्राधिकरण को आठ नियोजन क्षेत्रों में विभाजित किया गया है एवं इसे पुनः 136 छोटे–छोटे विकास क्षेत्रों में विभाजित किया गया है, जिससे कि नियोजन के कार्यक्रम को तेजी से बढ़ाया जा सके। दिल्ली विकास प्राधिकरण में 42.9 प्रतिशत भूमि रिहायशी क्षेत्र, 8.8 प्रतिशत क्षेत्र वाणिज्य व्यापार उद्योग एवं सरकारी कार्यालय के अंतर्गत है तथा 23.7 प्रतिशत क्षेत्र मनोरंजन, 8 प्रतिशत सामाजिक स्थलों, 10 प्रतिशत क्षेत्र परिवहन के मार्गों एवं 6.3 प्रतिशत क्षेत्र मिलिट्री छावनी में संलग्न है। मास्टर प्लान में यह व्यवस्था की गई है कि दिल्ली एक उद्यान नगर के रूप में विकसित हो सके। सामाजिक सुविधाएं– जैसे स्कूल, महाविद्यालय, अस्पताल, स्वास्थ्य केंद्र, दुकानदारों का क्षेत्र एवं सांस्कृतिक संस्थाएं भी यहां नियोजन में शामिल किए गए हैं तथा गंदी बस्तियों के सुधार की व्यवस्था की गई है। इस नियोजन में यह भी देखा गया है कि नगरीय जनसंख्या की वृद्धि को नियंत्रित किया जाए तथा पेयजल एवं बिजली की उपलब्धि अबाध गति से हो। परिवहन के साधनों को सुविधापूर्वक चलाने के लिए सड़कों की चौड़ाई 60–90 मीटर तक महानगरों में रखी गई है। लेकिन इसके बावजूद भी दिल्ली महानगर में परिवहन की समस्या के ऊपर खर्च काफी अधिक है एवं एक जगह से दूसरी जगह तक जाने में लोग कठिनाई महसूस करते हैं। दिल्ली में सड़कों का घनत्व 2103 km/per 100 वर्ग किलोमीटर है। यह देश के अन्य भागों से राष्ट्रीय राजमार्ग NH_1, NH_2, NH_8, NH_{10} and NH_{24} द्वारा जुड़ी हुई है। दिल्ली में विश्व का दसवां सबसे बड़ा मेट्रो तंत्र भी विकसित किया गया है।

अतः दिल्ली भारत के महत्वपूर्ण महानगरों में से एक है। यहां जनसंख्या की वृद्धि 1981 के बाद से अत्यंत तीव्र है। आज दिल्ली महानगर का फैलाव सभी दिशाओं में हो रहा है। सेवा कार्यों के फैलाव के कारण आज महानगर के उपांत क्षेत्र में नए–नए

टिप्पणी

घरों को बनाते हुए देखा जा सकता है, जिसमें से अधिकांश गैरकानूनी ढंग से भी बनाए जा रहे हैं, जो विकसित दशाओं में भी आज समस्या के रूप में खड़े हो गए हैं। इससे नगरपालिका के ऊपर वित्तीय एवं प्रशासनिक भार बढ़ता जा रहा है।

5.3.2 कोलकाता महानगरीय क्षेत्र

1961 ई. में कोलकाता नगर एवं उसके समीपवर्ती नगर के विकास हेतु एक नियोजन संस्था की स्थापना की गई जिसका नाम कोलकाता महानगरीय नियोजन संगठन (Calcutta Metropolitan Region Planning Organization) रखा गया। इसने कोलकाता महानगरीय क्षेत्र के सीमांकन का कार्य किया तथा इसका नाम कोलकाता महानगरीय जिला रखा। इसका कुल क्षेत्रफल 1040 वर्ग किलोमीटर था, जिसमें हुगली नदी के दोनों ओर दो कॉरपोरेशन के नगर, 33 म्युनिसिपल नगर एवं 42 नॉन म्युनिसिपल नगर शामिल थे। इसके अतिरिक्त 475 घनी बस्तियाँ भी इसमें शामिल थीं।

यह क्षेत्र अब लगभग 1831.58 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में हुगली नदी के डेल्टा में फैला है। इसमें संपूर्ण कोलकाता जिला और पांच अन्य जिलों 24 परगना (दक्षिण), 24 परगना (उत्तर), हावड़ा, हुगली एवं नदियों के कुछ भाग सम्मिलित हैं। इसकी बाहरी सीमा का निर्धारण कोलकाता महानगरीय विकास प्राधिकरण (Kolkata Metropolitan Development Authority) ने किया है। यही संस्थान इसके सभी विकास संबंधी नियोजन व कार्यक्रमों को देखता है।

कोलकाता महानगर का विकास

कोलकाता महानगर की स्थापना 1690 ई. में हुई जबकि नवाब ने सूतानूरी, गोविंदपुर और कालीघाट गांवों को 1300 रुपए में ईस्ट इंडिया कंपनी को बेच दिया। औरंगजेब के समय से ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर जॉन चारनॉक ने कोलकाता नगर की नींव रखी। प्रारंभ में यहां नगर की स्थापना के बारे में नहीं सोचा गया था क्योंकि उत्तर–पूर्व में खारे पानी की झील के कारण इसकी स्थिति को नगर स्थापना के लिए अनुकूल नहीं समझा गया। किंतु बाद में, नगर की स्थापना के बाद 1712 में इसे राजधानी बनाया गया। 1857 से 1900 तक इसे भारत के सभी नगरों से रेल मार्ग द्वारा जोड़ दिया गया। 1991 ई. में कोलकाता महानगर की जनसंख्या 1 करोड़ 8 लाख हो गई थी जो भारत का दूसरा बड़ा नगर बन गया। कोलकाता नगरमाल या महानगर भी है। 2001 में कोलकाता की आबादी 1 करोड़ 40 लाख हो गई और 2011 में यह 1 करोड़ 40 लाख 35 हजार थी। कोलकाता महानगरीय क्षेत्र में चार म्युनिसिपल कॉरपोरेशन कोलकाता म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, हावड़ा म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, चन्दन नागोर म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, विधान नगर म्युनिसिपल कॉरपोरेशन व हुगली, हावड़ा नदियां, उत्तर 24 परगना, दक्षिण 24 परगना म्युनिसिपलिटी हैं।

कोलकाता महानगर इसमें उपलब्ध सुविधाओं की तुलना में अधिक जनसंख्या के दबाव से सदा ही पीड़ित रहा है जिसका प्रधान कारण यह है कि उत्तर प्रदेश, बिहार उड़ीसा और मध्य प्रदेश से बहुत बड़े पैमाने पर मजदूर जूट उद्योग में कार्य करने के लिए यहां आते हैं।

टिप्पणी

इस क्षेत्र में जनसंख्या प्रवाह के मुख्य कारण निम्न हैं–

1. कोलकाता में अधिक रोजगार का उपलब्ध होना।
2. कोलकाता के पृष्ठ क्षेत्र में ग्रामीण जनता का गरीब होना।

इस जनसंख्या के अधिक प्रवाह के कारण इस महानगरीय प्रदेश में 50 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या आधारभूत सुविधाओं से वंचित है। कोलकाता महानगर क्षेत्र के सभी नगरों में विनिर्माण और घरेलू उद्योगों का भारी जमाव रहा है। कल्याणी शयनागार शहर, बीजापुर प्रशासकीय कार्य, बैरकपुर ग्रामीण सेवा केंद्र, वावापल्ली नई विस्थापित नगरी तथा यादवपुर, बासडोनी एवं पुखापुतचारी कोलकाता की रिहायशी उपबस्तियों के रूप में स्थापित हुए। कोलकाता महानगर अपने आसपास के क्षेत्रों से गहरा संबंध रखता है। जहां से प्रतिदिन अभिगमनकर्ता मजदूर बसों, रेल, स्ट्रीमर एवं नाव इत्यादि साधनों का प्रयोग कर कोलकाता महानगर में कार्य करने के लिए आते हैं। कोलकाता महानगर भी मछली, मक्खन, दूध, अंडा और साग–सब्जियों की आपूर्ति अपने परिधि क्षेत्र से करता है।

कोलकाता महानगरीय क्षेत्र का क्षेत्रीय विकास

कोलकाता महानगर विकास प्राधिकरण (Kolkata Metropolitan Development Authority-KMDA) क्षेत्र के विकास के लिए उत्तरदायी है। KMDA समय–समय पर कोलकाता महानगर के विकास की विभिन्न योजनाओं का निर्माण करता रहा है। KMDA ने इस महानगर की प्रथम परिप्रेक्ष्य योजना का निर्माण 1966 में किया था। फोर्ड फाउंडेशन के विशेषज्ञों की सहायता से 'आधारभूत विकास योजना' (Basic Development Plan 1966-86 BDP) बनाई गई थी। इस योजना में दो केंद्र वाली विकास योजना का सुझाव दिया गया था। एक कोलकाता हावड़ा महानगर केंद्र और दूसरा कल्याणी बांसबेरिया क्षेत्र। इसके साथ ही दो अन्य मास्टर प्लान भी बनाए गए।

विकास परिप्रेक्ष्य एवं कोलकाता महानगरीय क्षेत्र का विकास 1976 (DPP) (Development Perspective and a four Year Programme for Km)। इसे भी KMDA ने ही बनाया था। इसमें केंद्रीय विकास रणनीति का सुझाव दिया गया जो BDP से पूर्णतया भिन्न थी। इस योजना में कोलकाता हावड़ा को मुख्य केंद्र और 26 अंशतः उप केंद्रों की पहचान की गई। इनमें से 14 उप केंद्र पूर्वी किनारे पर और 12 उप केंद्र हुगली नदी के पश्चिमी किनारे पर थे। इसमें सेक्टर के अनुसार विनिवेश योजना को विभिन्न विकास परियोजनाओं की सूची के साथ रेखांकित किया गया।

1987 की विकास परिप्रेक्ष्य योजना और क्रियान्वयन कार्यक्रम में बहु–केंद्रीय विकास रणनीति को पहचाना गया।

1911 में भी एक परिप्रेक्ष्य योजना कोलकाता महानगर के लिए बनायी गयी। इसमें कोलकाता महानगरीय क्षेत्र को तीन स्तरों में सीमांकित करने और आंतरिक महानगरीय क्षेत्र में अधिवासीय प्रतिरूप के पदानुक्रम व्यवस्था के विकास और 2 लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों का विकास करने संबंधी सुझाव दिये गये।

KMDA ने एक वर्ष के अंतर्गत 1990–2015 के लिए भी एक परिप्रेक्ष्य योजना बनाई थी। इसमें सेक्टर अनुसार पूर्ण विकास दोनों की ही रणनीति को अपनाया गया

टिप्पणी

था। वर्ष 2005 में KMDA ने 'विजन 2025' के नाम से एक पच्चीस वर्षीय योजना बनायी। इसमें मुख्यतः इन तथ्यों को महत्व दिया गया।

- यातायात, जलापूर्ति, जल निकास, मल निकास व सफाई के 25 वर्षों के लिए मास्टर प्लान बनाया गया।
- पर्यावरण, वेटलैंड, नगरीय सुविधाएं और विरासत, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार व बस्तियों में सुधार की योजना बनाना।
- जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण योजना (JNNURM) के तहत नगर विकास की योजना को सुनिश्चित करना।
- म्युनिसिपल विभागों की विभिन्न गतिविधियों की क्षमता को बढ़ाने के लिए GIS का प्रयोग करते हुए कार्यक्रमों के डिजाइन बनाना।
- इस विजन–2025 का मुख्य उद्देश्य एकीकृत तरीके से नगर की आधारभूत सेवाओं का प्रयोग करते हुए नगरीय जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाना है।

5.3.3 मुंबई महानगरीय क्षेत्र

संसार के महानगरों में मुंबई का महत्वपूर्ण स्थान है। देश का 46 प्रतिशत विदेशी व्यापार, 15 प्रतिशत औद्योगिक आय एवं 2.5 प्रतिशत औद्योगिक मजदूर यहां निवास करते हैं।

मुंबई महानगर का विकास

मुंबई सात द्वीपों पर बसा है। 19वीं शताब्दी में उन सभी को जोड़ दिया गया जिससे इसका नाम सालसीट द्वीप हो गया। 1853 ई. में मुंबई को थाणे से रेल मार्ग के द्वारा जोड़ दिया गया तथा कुछ ही वर्षों में उसका संबंध बड़ौदा, जबलपुर, नागपुर और रायपुर से हो गया। इस कारणवश, मुंबई बंदरगाह की पृष्ठभूमि (Hinterland) में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए जिससे व्यापारिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के साथ–साथ सूती वस्त्र उद्योग की स्थापना भी यहां हुई।

भारत के पश्चिमी द्वीप पर मुंबई मात्र एक प्राकृतिक बंदरगाह है, जिसका संबंध थाल घाट और घाट से गुजरने वाले रेल मार्गों से है। उत्तर में माहीम की खाड़ी है जो इसे ट्रांबे से अलग करती है।

मुंबई और उसका पृष्ठ क्षेत्र

मुंबई महानगर का प्रभाव आसपास के क्षेत्रों पर व्यापक है, आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण से यह एक विकसित नगर है क्योंकि अधिनगरीय बस्तियों की काफी वृद्धि हुई है। मुंबई के पृष्ठक्षेत्र से भारी संख्या में कार्य करने वाले दैनिक औद्योगिक मजदूर यात्रा करते हैं जिनमें पश्चिम में बेसिन और बेराड़, मध्य रेलवे पर डोंबिबली और कल्याण उपनगरीय बस्तियों से बहुत बड़ी संख्या में लोग मुंबई अभिगमन करते हैं। मुंबई, अपने आसपास से प्रतिदिन 65,000 टन मछली, इससे अधिक मात्रा में सब्जी और वर्ली की दुग्धशाला से दूध प्राप्त करता है।

टिप्पणी

महानगरीय क्षेत्र की मुंबई पर निर्भरता

महानगरीय क्षेत्र की मुंबई पर निर्भरता निम्न प्रकार से है–

1. महानगरीय क्षेत्र बहुत–सी बातों के लिए मुंबई पर निर्भर करता है क्योंकि मुंबई में लोगों को रोजगार मिलता है।
2. औद्योगिक कारखानों की स्थापना को बल मिला है।
3. थाणे जो पहले मुंबई का शयनागार उपनगर (Dormitory Town) था यह अब एक औद्योगिक नगर के रूप में विकसित हुआ है। यहां ऊनी वस्त्र, सूती वस्त्र, इंजीनियरिंग उद्योग इत्यादि पाए जाते हैं। कल्याण के निकट मिट्टी में औद्योगिक क्षेत्र विकसित हुए हैं जहां रेयन और रसायन उद्योग विकसित हुए हैं। दक्षिण में अमरनाथ और बदलापुर में भारी रसायन, दिया सलाई और विस्फोटक कारखाने (Explosive Factory) विकसित हुए हैं। तालोजा और रासावनी में भी अनेक वृहत् मात्रा में उद्योग–धंधे विकसित हुए हैं। दक्षिण–पूर्व खोपली में रसायन उद्योग, कागज, गत्ते के केंद्र विकसित हुए हैं।
4. सामानों की खपत मुंबई में बहुत होती है अतः मुंबई के महानगरीय क्षेत्र को मुंबई रोजगार देने के साथ–साथ बाजार की सुविधा भी प्रदान करता है।

महानगरीय क्षेत्र की जनसंख्या

1600 ई. में मुंबई की जनसंख्या मात्र 10,000 थी जो 1800 ई. के आसपास 60,000 हो गयी। 1909 में मुंबई की जनसंख्या 7.7 लाख थी जो बढ़कर 1931 में 16 लाख, 1951 में 23.2 लाख, 1981 में 82 लाख, 1991 में 1 करोड़ 26 लाख, 2001 में 1 करोड़ 64 लाख व 2011 में 18,394,912 हो गयी।

मुंबई महानगर की समस्याएं

मुंबई महानगरीय क्षेत्र अनेक समस्याओं से जूझ रहा है जिसमें जनसंख्या का बढ़ता दबाव, आवासीय घरों की घोर कमी, यातायात की सुविधाओं का अभाव एवं उपयोगी सेवाओं की कमी है। जनसंख्या की अप्रत्याशित वृद्धि के कारण ही पीने के पानी की कमी, औद्योगिक प्रदूषण, सामाजिक कुरीतियां इत्यादि विकराल रूप में आ रही हैं। 2005, 2009, 2010 में इस महानगर ने बाढ़ की समस्या का भी सामना किया।

मुंबई महानगर का नियोजन

मुंबई महानगर क्षेत्र विकास प्राधिकरण (Mumbai Metropolitan Region Development Authority, MMRDA) की स्थापना 1974 के मुंबई महानगरीय विकास अधिनियम के तहत 26 जनवरी, 1975 में की गई थी।

इसकी स्थापना से ही मुंबई महानगरीय क्षेत्र विकास प्राधिकरण दीर्घ अवधि के नियोजन जैसे नए वृद्धि ध्रुवों की स्थापना, रणनीतिक परियोजनाओं के क्रियान्वयन, आधारभूत संरचनाओं के निर्माण के लिए वित्त की व्यवस्था आदि में संलग्न है। इस प्राधिकरण की स्थापना का मुख्य उद्देश्य मुंबई महानगर को आर्थिक गतिविधियों के केंद्र के रूप में स्थापित करना, आधारभूत संरचनाओं का विकास जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना था।

टिप्पणी

मुंबई महानगर क्षेत्र विकास प्राधिकरण मुख्यतः निम्न दायित्वों का निर्माण करता है।

- प्रादेशिक विकास परियोजनाओं का निर्माण।
- महत्वपूर्ण प्रादेशिक परियोजनाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करना।
- स्थानीय प्रशासन और उनकी आधारभूत संरचनाओं के विनिर्माण परियोजनाओं को सहायता देना।
- मुंबई महानगरीय क्षेत्र की योजनाओं में समायोजन स्थापित करना।
- ऐसी योजनाएं जो मुंबई महानगर के उपयुक्त विकास के अनुकूल नहीं हैं उनका पुनर्गठन करना।

यह प्राधिकरण विशेष रूप से विकास संबंधी परियोजनाओं का निर्माण, संचालन, निरीक्षण आदि कार्य करता है। इस प्राधिकरण ने मुंबई महानगर के उपांत क्षेत्र (Fringe Area) के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया है। मुंबई के महानगरीय क्षेत्र का मुंबई से गहरा संबंध है। मुंबई महानगर का फैलाव उत्तर में मीठी नदी तक है, दक्षिण में पाटल गंगा नदी तक, पश्चिम में अरब सागर तक एवं पूर्व में मादेरन पहाड़ियों तक है। इसके अंतर्गत थाणे, माहिम, उल्हासनगर, कल्याण, उड़ान, खावापार, कारजट और पानवेल तहसीलें शामिल हैं।

मुंबई महानगर नियोजन की समस्या

मुंबई महानगर नियोजन की समस्याएं निम्नलिखित हैं–

1. आवास की समस्या।
2. एक बड़ी जनसंख्या का निम्न जीवन स्तर।
3. कार्य करने के स्थानों का कुछ सड़कों के किनारे ही लंबी दूरी तक फैला होना।
4. कुछ क्षेत्रों में उद्योगों का भारी जमाव और कुछ में भारी अभाव।
5. उद्योग धंधों में कार्य करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में प्रतिदिन लोगों का अभिगमन।
6. वायु प्रदूषण और जल प्रदूषण का बढ़ना।
7. हवाई अड्डे बंदरगाह रेलवे स्टेशनों पर अत्यधिक भीड़।
8. पीने के पानी और विद्युत की कमी।
9. मनोरंजन के स्थानों का अभाव।
10. भूमि की उत्तरोत्तर बढ़ती कीमतें ।
11. यातायात मार्गों के किनारे शयनागार उपनगरीय बस्तियों का निर्माण।
12. ग्रामीण सीमावर्ती क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना करना।
13. लोगों में परस्पर सामंजस्य की कमी।
14. सामाजिक ढांचे में वृहत् अंतर।

टिप्पणी

मुंबई महानगरीय क्षेत्र के लिए प्रादेशिक नियोजन

वर्ष 2009 में मुंबई महानगरीय नियोजन कमेटी (Mumbai Metropolitan Planning Committee, MMPC) बनायी गयी। इसकी दूसरी मीटिंग 11 जून, 2010 में हुई, जिसमें पांच अध्ययन समूह बनाए गए। इन समूहों की रिपोर्ट के आधार पर 2036 तक की आवश्यकताओं को प्रोजेक्ट में रखा गया और इस आधार पर एक ड्राफ्ट रीजनल प्लान (2016–2036) को 19 सितंबर, 2016 को प्रकाशित किया गया तथा इसमें सुधार के लिए सुझाव मांगे गए। प्राप्त सुझावों के आधार पर बने नए संशोधित रीजनल प्लान को 20 अप्रैल, 2021 को महाराष्ट्र सरकार ने मंजूरी दे दी।

मुंबई महानगरीय क्षेत्र की इस नई प्रादेशिक योजना को इस क्षेत्र की सभी समस्याओं को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है, जिससे मुंबई और उसके आस–पास के क्षेत्र में बढ़ती हुई असमानता को दूर किया जा सके तथा उपलब्ध सुविधाओं की प्राप्ति सभी भागों में बराबर हो। लोगों के जीवन स्तर में सुधार एवं महानगर के अनियंत्रित विकास को नियंत्रित करना भी इसका मुख्य उद्देश्य है।

मुंबई प्रादेशिक योजना 2016–2036 के निम्न मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं–

1. रोजगार अवसरों के समुचित वितरण द्वारा संतुलित आर्थिक वृद्धि प्राप्त करना।
2. वित्तीय क्षेत्र पर बल देते हुए कौशल्य वृद्धि करना तथा स्किल बेस रोजगार के अवसरों को बढ़ाना। इस योजना में द्वितीय क्षेत्र के सुधार के द्वारा संतुलित आर्थिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है।
3. सार्वजनिक यातायात और संचार को और उन्नत करना जिससे क्षेत्र के एकीकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।
4. मुंबई महानगरीय क्षेत्र के सभी नगरों की व्यक्तिगत विशेषताओं का पूर्ण उपयोग करते हुए मुंबई महानगरीय क्षेत्र का एक इकाई के रूप में विकास करना।
5. संरक्षित किए जाने वाले क्षेत्र को सीमांकित करके उनका संरक्षण करना।
6. शासन के उपलब्ध संस्थागत ढांचे के अनुसार– भविष्य में नगरीकरण के विस्तार व दिशा का अवलोकन करना।
7. एकीकृत प्रादेशिक खुले स्थानों के संजाल और प्रादेशिक आधारभूत ढांचे के निर्माण द्वारा जीवन की गुणवत्ता में सुधार।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक रणनीति भी बनाई गई जिसमें संतुलित प्रादेशिक विकास, विनिर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए क्षेत्र में सार्वजनिक यातायात का विकास, खुले स्थानों के संजाल का निर्माण, परि–नगरीय क्षेत्रों में शासकीय संरचना में सुधार, आवासीय समस्या के समाधान, प्रादेशिक आधारभूत संरचना का निर्माण, प्रखंडों व वृद्धि केंद्रों की सरलता और प्रादेशिक सूचना तंत्र के निर्माण आदि विभिन्न विषयों को रखा गया है।

इस योजना के अनुसार मुंबई नगर जो पारंपरिक रूप से इस क्षेत्र में जनसंख्या, रोजगार, आधारभूत संरचना की दृष्टि के प्रभुत्व में रहा है, का स्थान अब परिवर्तित हो रहा है। अब मुंबई–थाणे–नवी मुंबई त्रिकोण मुंबई महानगरीय क्षेत्र के केंद्र के रूप में

टिप्पणी

उभर रहा है और इसका अर्धव्यास नासिक, मुरबाद, पुणे, गोवा व दक्षिण मुंबई से होते हुए रत्नागिरी की ओर फैलते हुए देखा जा सकता है। मिरा गोधबंदर–पनवेल–जे. एन. पी. टी. इसका प्रथम रिंग बनाते हैं। बसई–खारबो–भिवंडी–कल्याण–माथेरान रोड–जिटे इसका द्वितीय रिंग और विरार–वजरेश्वरी–अम्बाडी–पड़हा–बादलपुर करजात–रि –जिते इसका तीसरा रिंग बनाते हैं। इस प्रादेशिक योजना में इन रिंग के नोड को नए वृद्धि केंद्रों के रूप में चुना गया है।

इस आधार पर भिवंडी क्षेत्र, काटाल नाका क्षेत्र जो कल्याण–डोंबवली क्षेत्र में है व पानवेल क्षेत्र को भविष्य के वृद्धि केंद्रों के रूप में निर्धारित किया गया है। इस योजना के अनुसार प्रस्तावित भूमि प्रयोग खंडों (Land use Zone) को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया गया है जैसे नगरीकरण योग्य खंड में 17 म्युनिसिपल क्षेत्र विशेष योजना प्राधिकरण क्षेत्र व चार वृद्धि केंद्र निर्धारित किए गए हैं।

नगरीकरण योग्य खंड के अतिरिक्त एक हरित प्रखंड (Green Zone) भी निर्धारित किया गया है जिसे हरित प्रखंड–1 व हरित प्रखंड–2 में विभाजित किया गया है। इस योजना में नगरीकरण योग्य खंड व हरित प्रखंड–1 (Green Zone-1) में विशेष औद्योगिक प्रखंड भी सीमांकित किया गया है।

इसके अतिरिक्त वन, प्राचीन विरासत स्थल, वेटलैंड व जलीय आकारों को पृथक रूप से सीमांकित किया गया है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. किस सन् में शाहजहां द्वारा लाल किला बनवाया गया?

(क) सन् 1351 (ख) सन् 1533

(ग) सन् 1648 (घ) सन् 1750

6. किस सन् में कोलकाता महानगर की स्थापना की गई?

(क) सन् 1688 (ख) सन् 1690

(ग) सन् 1692 (घ) सन् 1694

7. ईस्ट इंडिया कंपनी के किस गवर्नर ने कोलकाता नगर की नींव रखी?

(क) लॉर्ड लिटिन (ख) वारेन हेस्टिंग्स

(ग) जॉन चारनॉक (घ) विलियम बैंटिक

8. मुंबई कितने द्वीपों पर बसा है?

(क) पांच (ख) सात

(ग) नौ (घ) ग्यारह

9. मुंबई महासागर ने किस सन् में बाढ़ की समस्या का सामना किया?

(क) सन् 2005 (ख) सन् 2009

(ग) सन् 2010 (घ) उपर्युक्त सभी

5.4 सांस्कृतिक क्षेत्र : बुंदेलखंड

टिप्पणी

सांस्कृतिक क्षेत्र ऐसे लोगों द्वारा अधिवासित क्षेत्र है जहां लोग एक या एक से अधिक सांस्कृतिक लक्षणों (भाषा, धर्म, विचार, भौतिक संस्कृति) को साझा करते हैं या एक वो स्थानिक इकाई है जो राजनीतिक, सामाजिक, तकनीकी या आर्थिक रूप से एक अलग इकाई के रूप में कार्य करता है, या वह क्षेत्र जहां के निवासियों द्वारा उस क्षेत्र को सांस्कृतिक रूप से इसके आसपास के क्षेत्रों से विशिष्ट माना जाता है। उपरोक्त परिभाषा से सांस्कृतिक क्षेत्र को दो प्रकार से पहचाना जाता है। एक औपचारिक सांस्कृतिक क्षेत्र वह क्षेत्र है जहां के निवासी में एक या एक से अधिक सांस्कृतिक लक्षण (जैसे भाषाई क्षेत्र) समान हों। दूसरी ओर कार्यात्मक सांस्कृतिक क्षेत्र एक ऐसा सांस्कृतिक क्षेत्र है जो राजनीतिक रूप से, सामाजिक रूप से या सांस्कृतिक रूप से एक इकाई के रूप में कार्य करता है (जैसे जिला मुख्यालय, शहर का प्रभाव क्षेत्र, मंदिर, कारखाने)। कार्यात्मक सांस्कृतिक क्षेत्र केंद्रों और आसपास से उनके संबंधों या जुड़ाव पर आधारित है।

बुंदेलखंड क्षेत्र : यह एक भौगोलिक और सांस्कृतिक क्षेत्र है। यह केंद्रीय भारत का एक पर्वतीय क्षेत्र भी है। यह उत्तर क्षेत्र एवं मध्य क्षेत्र में फैला है। इसका अधिकतर भाग मध्य प्रदेश में फैला हुआ है। यह क्षेत्र नर्मदा–सोन खड्ड के उत्तर में गंगा घाटी की ओर मुंह किये हुए स्थित है। यह वास्तव में भारत के प्रसिद्ध पठार का उत्तरी मध्यवर्ती भाग है। इस क्षेत्र में मध्य प्रदेश के दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, भिण्ड की लहर तहसील एवं ग्वालियर की भांडेर तहसील और उत्तर प्रदेश के ललितपुर, झांसी, हमीरपुर जालौन, बांदा जिले सम्मिलित हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियां

यह भारतीय पठार का अंग है। यहां पूर्व कैंब्रियन महाकल्प में बनी प्राचीन नाइस एवं ग्रेनाइट शैलें पायी जाती हैं जिनके अवशेष प्रायः ऊंचे कठोर टीलों के रूप में मिलते हैं। यह पठारी क्षेत्र बहुत ऊंचा नहीं है। सागर तल से इसकी औसत ऊंचाई 300 से 600 मीटर तक है। बिजावर तथा दतिया क्षेत्रों में विंध्य शैल प्रणाली के शैल, चूना एवं बलुआ पत्थर पहाड़ी अंचलों में मिलते हैं। दक्षिणी पठारी भाग विच्छिन्न है। मध्य का ग्रेनाइट पठार 300 मीटर ऊंचा है। नदी घाटियों में चौरस मैदान है। उत्तर की ओर एक तिहाई भाग चौरस है। इस पठारी भाग में कुछ नीची पहाड़ी श्रेणियां स्थित हैं। इनमें तीन विशेष प्रसिद्ध हैं। पहली श्रेणी, इस क्षेत्र के उत्तरी–पूर्वी सिरे पर कैमूर की पहाड़ियां रीवा से मिर्जापुर जिले तक फैली हैं जो काफी नीची हैं। दूसरी श्रेणी इस क्षेत्र के मध्य भाग में दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूरब की ओर फैली है और भांडेर श्रेणी के नाम से संबोधित होती है। तीसरी श्रेणी विंध्याचल पर्वत की है जो क्षेत्र के दक्षिणी–पश्चिमी भाग में स्थित है। इस पठार का दक्षिणी सिरा एकदम ऊंचा उठा हुआ है। अतः इसका जल अपवाह उत्तर की ओर है और गंगा के मैदान के पास पहुंचकर पठारी भूमि एकदम समाप्त हो जाती है। अतः गंगा नदी की ओर बहने वाली नदियां इस पठार से उतरते समय अनेक जलप्रपात बनाती हैं। इस क्षेत्र की मुख्य नदियां बेतवा, केन व बधाई हैं जो उत्तर की ओर बहकर गंगा एवं यमुना नदियों से मिल जाती हैं। बेतवा इस क्षेत्र की

टिप्पणी

पश्चिमी सीमा पर बहती है। टोंस नदी इस पठार को बुंदेलखंड एवं बघेलखंड दो भागों में विभक्त कर देती है। मैदान की ओर मिट्टी बढ़िया एवं उपजाऊ है। पठारी भाग में हल्की बालूयुक्त कम उपजाऊ मिट्टी मिलती है। यह क्षेत्र राजस्थान की ऊंची भूमि की अपेक्षा आद्र है। फिर भी समुद्र से दूर होने के कारण यहां की जलवायु महाद्वीपीय है। यहां की प्राकृतिक वनस्पति मानसूनी पतझड़ प्रकार की है, जिसमें सागवान, साल, बांस, महुआ, ढाक, शीशम तथा बबूल के वृक्ष मुख्य हैं। भारत में सबसे बढ़िया सागवान यहां मिलता है। यहां के वनों से इमारती लकड़ी, गोंद, लाख तथा ईंधन की लकड़ी विशेष रूप से प्राप्त होती है। इस क्षेत्र की 7.2% भूमि वनाच्छादित है।

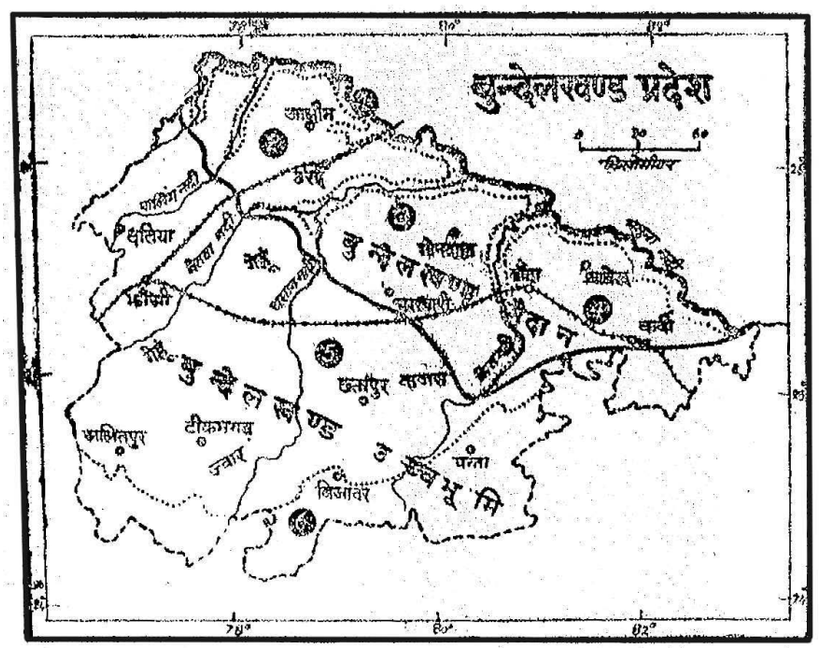

बुन्देलखण्ड क्षेत्र

आर्थिक व मानवीय दशाएं

इस क्षेत्र की मिट्टी न तो अधिक उपजाऊ है, न यहां सिंचाई की अधिक सुविधाएं हैं। अतः यहां गहरी खेती न होकर विस्तृत कृषि होती है। नदियों की घाटियों में जलोढ़ उपजाऊ मिट्टी मिल जाती है। वहां छोटे–छोटे खेतों में कृषि की जाती है। पठारी भागों में लाल मिट्टी मिलती है। 46 प्रतिशत कृषि भूमि पर खेती होती है। कृषि भूमि पर खाद्य फसलें बोई जाती हैं। उत्तरी मैदान के सिंचित क्षेत्र में गेहूं तथा चावल बोया जाता है। चावल यहां की मुख्य फसल है। बाजरा, जौ, चना तथा कोहों इस क्षेत्र की अन्य फसलें हैं।

खनिज पदार्थों की दृष्टि से यह क्षेत्र निर्धन है। यहां बलुआ पत्थर अथवा शेल शैलें बहुत मिलती हैं। मझगांव क्षेत्र में हीरा निकलता है। इस क्षेत्र में मुख्यतः हिंदी भाषा बोलते हैं। बुंदेलखंड के निवासी अपने परिश्रम एवं साहसी प्रवृत्ति के लिए प्रसिद्ध हैं।

टिप्पणी

झांसी प्रमुख नगर है। यहां रेलवे वर्कशॉप तथा विश्वविद्यालय है। यहां आयुर्वेदिक दवा का कारखाना भी है, बल्कि बुंदेलखंड की भौगोलिक, सांस्कृतिक और भाषिक इकाइयों में अद्‌भुत समानता है। भूगोलवेत्ताओं का मत है कि बुंदेलखंड की सीमा स्पष्ट है और भौतिक तथा सांस्कृतिक रूप में निश्चित है। वह भारत का एक ऐसा भौगोलिक क्षेत्र है जिसमें न केवल संरचनात्मक एकता बल्कि भौम्याकार और सामाजिकता का आधार भी एक ही है। वास्तव में समस्त बुंदेलखंड में सच्ची सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक एकता है।

इतिहास व संस्कृति

बुंदेलों का पूर्वज पंचम बुंदेला था। बुंदेलखंड बुंदेल राजपूतों के नाम से प्रसिद्ध है, जिनके राज्य की स्थापना 14वीं सदी में हुई थी। इससे पूर्व यह क्षेत्र 'जुझौती' अथवा 'जेजाभुक्ति' नाम से जाना जाता था और चंदेलों द्वारा नवीं से चौदहवीं शताब्दी तक शासित होता रहा। इस राज्य के प्रमुख ऐतिहासिक नगर महोबा जिला हमीरपुर तथा कालिंजर थे। कालिंजर में राज्य की सुरक्षा के लिए एक मजबूत किला था। शेरशाह इस किले की घेराबंदी के समय 1545 ई. के समय यहीं मारा गया था।

बुंदेली माटी में अनेक प्रसिद्ध लोग हुए हैं जैसे आल्हा ऊदल, ईसुरी, कवि पद्याकर, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, डॉ. हरिसिंह गैर आदि। बुंदेली यहां की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक चेतना की बोली रही है। इस बोली को बोलने के कारण ही यहां के लोग बुंदेला कहलाए।

बुंदेलखंड की प्रसिद्धि दस्तकारी के लिए दूर–दूर तक है। चंदेरी कपड़े और जरी के काम के लिए, गऊ कपड़े बुनने के लिए तथा दतिया, ओरछा, पन्ना और छतरपुर मिट्टी के बर्तन तथा लकड़ी और पत्थर के काम के लिए प्रसिद्ध है। यहां कोरियों के द्वारा जाजम, दरी, कालीन, लोहारों के द्वारा बंदूक के कुंदे और नाल, गड़रियों के द्वारा कंबल तथा वजीरों के द्वारा चटाइयां, बच्चों के लेटने के लिए चंगेला, टोकनियां, चुलिया–टिपारे और पंखे आदि बड़ी कुशलता से बनाते हैं।

बुंदेली संस्कृति के रंग अत्यधिक समृद्ध और विविधवर्णी हैं। यहां की संस्कृति पुलिंद, निषाद, शबर, रामठ, दांगी आदि आर्येत्तर संस्कृतियों के द्वारा प्रभावित रही है। आर्य ऋषियों की आश्रम संस्कृति रामायण काल में फली–फूली थी और वन्य संस्कृति महाभारत काल में भी बनी रही। बुंदेलखंड की लोक संस्कृति की नींव नाग वाकटक काल में रखी गई थी। यहां अनेक संस्कृतियां आती–जाती रही इसी कारण यहां की संस्कृति में अनेक संस्कृतियों के तत्व मिलते हैं।

बुंदेलखंड अपनी अप्रतिम स्थापत्य कला के कारण भी जाना जाता है। खजुराहो का विशाल मंदिर, देवगढ़ की विष्णु मूर्ति, दतिया का पुराना महल, पन्ना का बृहस्पति कुंड, जतारा का मदनसार आदि यहां की वास्तुकला के प्रमाण हैं। बुंदेलखंड उत्सवों जैसे चैत्र की एकादशी को झूले का दिन, पूर्णिमा का वसंतोत्सव, अश्विन पूर्णिमा को पशुओं का त्योहार और कुश्तियों के आयोजन आदि के लिए प्रसिद्ध है। महुआ और बेर बुंदेलखंड के लोगों के सबसे प्रिय भोजन हैं। इस प्रकार, बुंदेलखंड अपनी विशिष्ट संस्कृति के लिए पृथक रूप से पहचाना जाता है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

10. बुंदेलखंड क्षेत्र का अधिकतर भाग किस प्रदेश में फैला हुआ है?
    (क) आंध्र प्रदेश (ख) मध्य प्रदेश
    (ग) उत्तर प्रदेश (घ) अरुणाचल प्रदेश
11. बुंदेलखंड क्षेत्र की कितनी प्रतिशत भूमि वनाच्छादित है?
    (क) 6.2 प्रतिशत (ख) 6.8 प्रतिशत
    (ग) 7.2 प्रतिशत (घ) 6.9 प्रतिशत
12. बुंदेलखंड की मुख्य फसल निम्न में से कौन–सी है?
    (क) चावल (ख) बाजरा
    (ग) जौ (घ) चना

5.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (ख)
3. (घ)
4. (क)
5. (ग)
6. (ख)
7. (ग)
8. (ख)
9. (घ)
10. (ख)
11. (ग)
12. (क)

5.6 सारांश

धरातल पर वे भूखंड जिनमें संपूर्ण प्राकृतिक दशाएं (भू–रचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, पशु जीवन और मानव का जीवन और क्रियाएं) साधारणतः समान हों, प्राकृतिक क्षेत्र कहलाते हैं। इन समस्त दशाओं का मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है। किसी देश के प्राकृतिक क्षेत्र उसके राजनीतिक क्षेत्र से सामान्यतया भिन्न होते हैं। प्राकृतिक क्षेत्र प्रकृति द्वारा निर्धारित किए जाते हैं।

टिप्पणी

सुंदरवन डेल्टा पद्मा (गंगा–ब्रह्मपुत्र) नदी के डेल्टा के निम्न भाग के रूप में भारत के पश्चिम बंगाल राज्य के दक्षिण–पश्चिम, उत्तर–पूर्वी भारत और दक्षिणी बांग्लादेश में फैला हुआ है। यह वनों व लवणीय जल के दलदल का विशाल भाग है। यह बंगाल की खाड़ी के साथ पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ लगभग 160 मील (260 किलोमीटर) लंबा भाग है। इस भाग में ज्वारनदमुखों का संजाल, ज्वारीय नदियां, विभिन्न चैनलों से प्रतिच्छेदित हुई खाड़ियां व समतल घने वनों से ढके दलदलीय द्वीप मिलते हैं।

गंगा का मैदान उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों के 357 लाख वर्ग किलोमीटर भूभाग पर फैला है। इसका ढाल पश्चिम–पूर्व व दक्षिण–पूर्व की ओर है। गंगा यहां की प्रमुख नदी है। दाएं किनारे पर स्थित प्रमुख सहायक नदियां यमुना और सोन हैं जबकि बाएं किनारे पर घाघरा, गंडक और कोसी प्रमुख सहायक नदियां हैं। इस मैदान पर नदियों का जाल फैला हुआ है जो बरसात में बाढ़ लाने में सहायक होती हैं तथा प्रतिवर्ष हजारों टन मिट्टी यहां पर लाकर बिछा देती हैं।

भारत की तट रेखा 5686 किलोमीटर लंबी है। यह पश्चिम में कच्छ के रण से लेकर पूर्व में गंगा ब्रह्मपुत्र डेल्टा तक फैली है। ये तट व तटीय मैदान संरचना व धरातल की दृष्टि से स्पष्ट विभिन्नताएं रखते हैं। ये पश्चिमी भाग में पश्चिमी तटीय मैदान तथा पूर्वी भाग में पूर्वी तटीय मैदान के नाम से जाने जाते हैं। ये मैदान या तो समुद्र की क्रिया द्वारा बने हैं या फिर नदियों द्वारा बहाकर लाई गई कीचड़ मिट्टी के निक्षेप द्वारा बने हैं।

महानगरीय क्षेत्र का सीमांकन एक विशाल जनसंख्या केंद्र और उसके पड़ोसी क्षेत्र को मिलाकर होता है। इसमें एकदम निकटता से जुड़े शहर एवं अन्य प्रभावित क्षेत्र भी गिने जा सकते हैं। इसमें सबसे बड़े शहर के नाम से ही इस क्षेत्र के नाम को जाना जाता है।

दिल्ली उत्तरी भारत में अवस्थित है जो भारत को उपमहादेश की संज्ञा दिलाता है। यह महानगर अरावली पर्वत पर 300 मीटर की ऊंचाई पर अवस्थित है तथा इसके दक्षिण में प्रायद्वीपीय भारत, पश्चिम में थार मरुभूमि, उत्तर में हिमालय पर्वतमालाएं एवं पूर्व में उत्तरी भारत का वृहद गंगा का मैदान अवस्थित है। चूंकि यह यमुना नदी के पश्चिमी प्राकृतिक तटबंध पर अवस्थित है, अतः नदी मार्ग सड़क मार्ग, रेल मार्ग एवं वायु मार्ग सभी यहां एक साथ मिलकर इसे केंद्रीय स्थल (Nodal Point) बनाते हैं।

नियोजन के दृष्टिकोण से दिल्ली विकास प्राधिकरण को आठ नियोजन क्षेत्रों में विभाजित किया गया है एवं इसे पुनः 136 छोटे–छोटे विकास क्षेत्रों में विभाजित किया गया है, जिससे कि नियोजन के कार्यक्रम को तेजी से बढ़ाया जा सके। दिल्ली विकास प्राधिकरण में 42.9 प्रतिशत भूमि रिहायशी क्षेत्र, 8.8 प्रतिशत क्षेत्र वाणिज्य व्यापार उद्योग एवं सरकारी कार्यालय के अंतर्गत है तथा 23.7 प्रतिशत क्षेत्र मनोरंजन, 8 प्रतिशत सामाजिक स्थलों, 10 प्रतिशत क्षेत्र परिवहन के मार्गों एवं 6.3 प्रतिशत क्षेत्र मिलिट्री छावनी में संलग्न है।

कोलकाता महानगर की स्थापना 1690 ई. में हुई जबकि नवाब ने सूतानूरी, गोविंदपुर और कालीघाट गांवों को 1300 रुपए में ईस्ट इंडिया कंपनी को बेच दिया।

टिप्पणी

औरंगजेब के समय से ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर जॉन चारनॉक ने कोलकाता नगर की नींव रखी। प्रारंभ में यहां नगर की स्थापना के बारे में नहीं सोचा गया था क्योंकि उत्तर–पूरब में खारे पानी की झील के कारण इसकी स्थिति को नगर स्थापना के लिए अनुकूल नहीं समझा गया। किंतु बाद में, नगर की स्थापना के बाद 1712 में इसे राजधानी बनाया गया। 1857 से 1900 तक इसे भारत के सभी नगरों से रेल मार्ग द्वारा जोड़ दिया गया।

मुंबई सात द्वीपों पर बसा है। 19वीं शताब्दी में उन सभी को जोड़ दिया गया जिससे इसका नाम सालसीट द्वीप हो गया। 1853 ई. में मुंबई को थाणे से रेल मार्ग के द्वारा जोड़ दिया गया तथा कुछ ही वर्षों में उसका संबंध बड़ौदा, जबलपुर, नागपुर और रायपुर से हो गया। इस कारणवश, मुंबई बंदरगाह की पृष्ठभूमि (Hinterland) में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए जिससे व्यापारिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के साथ–साथ सूती वस्त्र उद्योग की स्थापना भी यहां हुई।

बुंदेलखंड एक भौगोलिक और सांस्कृतिक क्षेत्र है। यह केंद्रीय भारत का एक पर्वतीय क्षेत्र भी है। यह उत्तर क्षेत्र एवं मध्य क्षेत्र में फैला है। इसका अधिकतर भाग मध्य प्रदेश में फैला हुआ है। यह क्षेत्र नर्मदा–सोन खड्ड के उत्तर में गंगा घाटी की ओर मुंह किये हुए स्थित है। यह वास्तव में भारत के प्रसिद्ध पठार का उत्तरी मध्यवर्ती भाग है। इस क्षेत्र में मध्य प्रदेश के दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, भिण्ड की लहर तहसील एवं ग्वालियर की भांडेर तहसील और उत्तर प्रदेश के ललितपुर झांसी, हमीरपुर जालौन, बांदा जिले सम्मिलित हैं।

बुंदेलखंड की प्रसिद्धि दस्तकारी के लिए दूर–दूर तक है। चंदेरी कपड़े और जरी के काम के लिए, गऊ कपड़े बुनने के लिए तथा दतिया, ओरछा, पन्ना और छतरपुर मिट्टी के बर्तन तथा लकड़ी और पत्थर के काम के लिए प्रसिद्ध है। यहां कोरियों के द्वारा जाजम, दरी, कालीन, लोहारों के द्वारा बंदूक के कुंदे और नाल, गड़रियों के द्वारा कंबल तथा वजीरों के द्वारा चटाइयां, बच्चों के लेटने के लिए चंगेला, टोकनियां, चुलिया–टिपारे और पंखे आदि बड़ी कुशलता से बनाते हैं।

5.7 मुख्य शब्दावली

- **प्राकृतिक क्षेत्र** : एक प्रकार का क्षेत्र जिसके अंतर्गत विभिन्न प्राकृतिक तथ्यों की समांगता पायी जाती है। इसकी सीमा के अंतर्गत उच्चावच, संरचना, जलवायु, मृदा तथा प्राकृतिक वनस्पति एवं जीव–जंतु जैसे प्राकृतिक तथ्यों की अपेक्षाकृत अधिक एकरूपता पायी जाती है।
- **डेल्टा** : प्रत्येक नदी अपनी अंतिम अवस्था में सागर, झील अथवा महासागर में गिरती है तो गिरने वाले स्थान पर अपने साथ लाये हुए अवसाद को एकत्रित करती रहती है। यह अवसाद लाखों वर्ग किमी. क्षेत्र में एकत्रित हो जाता है तथा इसकी ऊंचाई समुद्र तल से अधिक होती है अतः इस उठे हुए भाग को डेल्टा कहते हैं।
- **बांगर क्षेत्र** : बांगर क्षेत्र मैदान का वह ऊंचा भाग है जहां सामान्य रूप से नदियों की बाढ़ का जल नहीं पहुंच पाता।

- **उपांत क्षेत्र** : किसी शहर आदि का वह भाग जो उसके केंद्र से दूर हो।
- **सांस्कृतिक क्षेत्र** : सांस्कृतिक क्षेत्र ऐसे लोगों द्वारा अधिवासित क्षेत्र है जहां लोग एक या एक से अधिक सांस्कृतिक लक्षणों जैसे भाषा, धर्म, विचार आदि को साझा करते हैं।

5.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. प्राकृतिक क्षेत्र से आप क्या समझते हैं?
2. बांगर और खादर क्षेत्र में क्या अंतर है?
3. भारतीय गंगा के मैदान का आर्थिक एवं सामाजिक महत्व बताइए।
4. नगरीय क्षेत्र के निर्धारण के मुख्य आधार कौन–से हैं?
5. कोलकाता महानगरीय विकास प्राधिकरण में किन तथ्यों को महत्व दिया गया?
6. मुंबई महानगर की मुख्य समस्याएं क्या हैं?
7. मुंबई महानगर विकास प्राधिकरण किन दायित्वों का निर्माण करता है?
8. मुंबई प्रादेशिक योजना ने 2016 से 2036 तक कौन–से लक्ष्य निर्धारित किए?
9. बुंदेलखंड की स्थापत्य कला को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. सुंदरवन डेल्टा की प्राकृतिक विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. प्रादेशिक परिवहन तंत्र का दिल्ली महानगरीय क्षेत्र के संबंध में मूल्यांकन कीजिए।
4. राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के नगरीय भूमि उपयोग का वर्णन कीजिए।
5. कोलकाता महानगर क्षेत्र की मुख्य समस्याओं का उल्लेख कीजिए।
6. कोलकाता कार्यात्मक क्षेत्र की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए?
7. मुंबई महानगरीय क्षेत्र के नियोजन का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए?
8. मुंबई महानगरीय क्षेत्र की मुख्य विशेषताओं की व्याख्या कीजिए?
9. बुंदेलखंड प्रदेश की मुख्य भू–भौतिक दशाओं की व्याख्या कीजिए?

5.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिन्हा बी. एन., 'इंडस्ट्रियल जियोग्राफी ऑफ इंडिया', दि वर्ल्ड प्रेस प्रा. लि. कोलकाता।
2. गिल के. एस., 'इवोल्यूशन ऑफ इंडियन इकोनामी', एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

टिप्पणी

3. सुंदरम के.वी., 1997, 'इसेंट्रलाइज्ड मल्टीलेवल प्लानिंग : प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिसेसः एशियन और अफ्रीकन एक्सपीरियंस', कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली।
4. माथुर कुलदीप, 2013, 'पंचायती राज', ऑक्सफोर्ड इंडिया।
5. मिश्रा गिरीश के., 1987, ब्लॉक लेवल प्लैनिंग : विद फोकस ऑन इंप्लॉयमेंट जनरेशन साउथ एरिया बुक।
6. भट्ट एल. एस., 2003, 'माइक्रोलेवल प्लानिंग', राजेश पब्लिकेशन।
7. सिंह कतार, 2009, 'रूरल डेवलपमेंट : प्रिंसिपल, पोलसीज एंड मैनेजमेंट', सेज पब्लिकेशंस इंडिया प्रा. लि.।